संपादक

बलदेव वंशी

संत मलूक ग्रंथावली

संत मलूक ग्रंथावली

संपादक
डॉ० बलदेव वंशी

दो शब्द

भारतवर्ष के सांस्कृतिक इतिहास, धार्मिक परम्परा और आध्यात्मिक अन्वेषण के सर्वश्रेष्ठ अध्याय में भक्तिकाल के सन्तो की सरलतम वाणी (मधुक्कडी) का विशेष योगदान रहा है। अध्यात्म की उदात्त अनुभूतियों को परिपूर्ण रूप से जीवन मे उतार कर उसे सरलतम लोकोपयोगी वाणी के द्वारा जन-जन तक पहुँचाने का पवित्र कार्य इन सन्तों के माध्यम से सफलतापूर्वक सम्पन्न किया गया है। अनुकूल एवं प्रतिकूल परिस्थितियों का सामना साहस के साथ करते हुए सन्तों ने सत्य को उसके शुद्ध रूप मे व्यक्त करने में कभी हिचक का अनुभव नहीं किया है। शान्ति की शीतल धारा एव क्रान्ति का शक्तिशाली प्रवाह इनकी वाणी मे अनुगुंजित होता रहा ह। सन्तों की इस परम्परा मे सन्त प्रवर मलूक दास का एक विशिष्ट स्थान रहा है जिनकी प्रेरणाप्रद पुनीत वाणी आज भी गुंजित हो रही है।

सन्त मलूक दास जी की पुनीत केन्द्रीय गद्दी जो कडा (इलाहाबाद) कौशाम्बी मे स्थित है उसके महन्त होने के नाते मैं इसे अपना न्यायपूर्ण कर्तव्य मानता रहा हूँ कि सन्त मलूक दास के अलभ्य साहित्य का एक प्रामाणिक संग्रह ग्रन्थ प्रकाशित हो कर जन साधारण तक पहुँच जाए। इस कार्य के सम्पादन हेतु मैंने स्व. डॉ. रामकुमार वर्मा. स्व वियोगी हरि, आचार्य परशुराम चतुर्वेदी आदि अनेक सुप्रसिद्ध विद्वानो से सम्पर्क स्थापित किया, किन्तु इनकी ढलती हुई आयु इस कार्य मे बाधक बनती रही। सौभाग्य से सुपरिचित साहित्यकार, आलोचक तथा कवि डॉ बलदेव वंशी से सम्बंध स्थापित हुआ और इन्होंने इस कार्य को पूरा करने का बीडा उठा लिया। लगातार कई वर्षो के परिश्रम के बाद अब यह कार्य उनके द्वारा पूर्ण हो कर प्रकाशित होने जा रहा है। 73 वर्ष की अपनी वर्तमान आयु मे इस कार्य की पूर्णता से मुझे कितना आत्मसन्तोष मिलेगा, व्यक्त करना कठिन है। आशा है कि यह खोजपूर्ण एव विवेचनात्मक ग्रन्थ सभी के लिये प्रेरणादायक होगा।

योगिराज महन्त नानकचन्द

(गद्दी पर विराजमान वर्तमान पीठाचार्य)

मार्गशीर्ष शुक्ल 7 विक्रमी सम्वत् 2056

प्रस्तावना

संतो की दुनिया सहज, सरल, चैतन्य और प्रकाश की दुनिया है। ढोंग, दिखावा, छल, छद्म और मिट्टी की दुनिया के विपरीत उन्होंने मानवीय, संवेदनशील, जीवन्त दुनिया के निर्माण में अपनी सारी सामर्थ्य लगा दी है। इसी दुनिया, यानी इहलोक को उन्होंने परलोक से अधिक महत्त्व दिया। इसे ही संवारने, संभालने में अपनी वाणी को परिष्कृत किया। यही भगवान की सच्ची पूजा व भक्ति है। बंदे की खुदी को बुलंद करने के उपदेश उन्होंने दिए, ताकि 'खुदा बंदे से खुद पूछे बता तेरी रजा क्या है?' कबीर, रैदास, नानक, दादू की भांति संत मलूकदास भी आजीवन इसी पथ पर बढ़ते रहे। मानवीयता, अध्यात्म, हिन्दू-मुस्लिम एकात्मता एवं जाति-पांति के विरुद्ध संदेश देते रहे।

जब हर श्वास स्वयं ही रामकाज मे लग जाए, अजपा जाप चलने लगे, इसके बाद ऐसी स्थिति आती है—आराध्य और आराधक एकमेक हो जाएं। व्यक्ति मनुष्य से देवता बन जाता है। व्यक्तित्वातरण हो जाता है। मलूकदास ने यह स्थिति सहज ही उपलब्ध कर ली, क्योंकि उनके भीतरी स्रोत, परम स्रोत से जुड़ गए—यानी अस्तित्व को उन्होंने और भी विकसित किया, परमात्मा से जोड़ा और विश्राम पा गए। अब राम उनका जप या सुमिरन कर रहे हैं। राम और मलूक में कोई अंतर शेष नहीं रहा।

संत मलूकदास इन संत कवियों में अलग से देदीप्यमान नक्षत्र की भांति ध्यान आकर्षित करते हैं। उनकी विशिष्टता इस बात में है कि भारतीय अध्यात्म के जो तीन प्रसिद्ध सूत्र हैं—बादरायण का ब्रह्म सूत्र, नारद का भक्ति सूत्र और पतंजलि का योग सूत्र—इन तीनों सूत्रों का मलूक की वाणी मे, उनके दोहों, साखियों और पदो में मुखर प्रकाश देखा जा सकता है। मनुष्य की प्राकृतिक ऊर्जा, अतर्निहित परमात्मशक्ति—इनकी प्राप्ति से भौतिक जीवन का सुधार, यही महालक्ष्य है मलूक की वाणी का। यानी मानव के जीवन को सर्वांगरूप मे अनुभूतिपूर्ण बनाना और सुधारना। एक बेहतर मानवीयता को धरती पर सुलभ बनाना।

इतना ही नहीं पत्थर, पेड़-पौधे, पशु-पक्षी और मनुष्य का चेतनात्मक विकास-क्रम सतत गतिशील है। इसी क्रम मे पत्थर अपनी स्थूलता, अतिन्यून चेतना से विकसित होकर संवेदनशील नगो के रूप में आ पाया है और अब विपरीत या अनुकूल ग्रहों से देहधारी मानवों की रक्षा या सहायता करता है। लोग उन्हें अंगूठियों में मढ़वाकर उंगलियों मे पहनते

हैं और पत्थर (नग) उनकी रक्षा मे कवच बने हुए हैं। विभिन्न ग्रहो से आने वाली रश्मियों को अपने अस्तित्व पर झेलते हैं। महर्षि अरविंद ने चेतना के विकास की इसी सीढी को अतिचेतना कहा है। मनुष्य चेतना के विकास की सीढ़ी पर पहुचकर सर्वश्रेष्ठ हो गया, किंतु आज वह मिट्टी की नींद सो गया है, जबकि पत्थर तक जाग रहे हैं। अपने जागरण में, अपने सोने में और अपने होने में पत्थर संवेद्य होकर अधिक चेतन हो रहा है और मनुष्य संवेदना खोकर पत्थर से भी बदतर, अन्यथा मनुष्य अपनी आंतरिक सोई शक्तियो को जगाकर ऊचे सोपान चढ सकता है। उसकी सभी संभावनाए स्थगित पडी हैं। चेतना के ग्राफ की रेखा ऊंचे चढ़ी भी है, गुणात्मक रूप में, पर वर्तमान का अतिभौतिकवादी चिंतन-व्यवहार संख्यात्मक रूप में अभी निराशा ही पैदा कर रहा है।

इसमें कोई संदेह नहीं कि यह सारा जहान खाक यानी मिट्टी का ही विस्तार है। मिट्टी से ही सब कुछ उत्पन्न हुआ है और फिर मिट्टी मे ही मिल जाएगा, किंतु जिसने यह सब रचना की है, उसे जब हम भुला देते हैं, तब हम प्रत्येक प्राणी में विद्यमान उसकी सत्ता को भुला देते हैं और निर्मम, निरंकुश होकर अपना खाक होने का परिचय देते हैं, घमण्ड में फूले नहीं समाते। मलूक इस व्यवहार को छोड़ने को कहते हैं।

संत मलूकदास की वाणी अन्य संतों की भांति दुःखी, दीन, दरिद्र, भूखे-प्यासे को इतना अधिक महत्त्व देती है कि इनकी सहायता को ही वह सच्ची भक्ति और धर्म मानते हैं। इनके लेखे धरती पर विचरते प्राणी ही राम हैं। इनकी सेवा ही धर्म और इनको सुखी बनाना ही मुक्ति है–

दरदमंद दरवेस कहावै। जो मोही राम की रीझ बतावै।।
जो प्यासे को देवै पानी। बड़ी बंदगी मोहम मानी।।
जो भूखे को अन्न खवावै। सो सिताब (शीघ्र) साहेब को पावै।।
अपना-सा दुःख सब का मानै। दास मलूका सबको मानै।।

दूसरों के दुःख से जुड़ने पर, उनके दर्द को अपना मानने वाला ही सच्चा दरवेश है, पुजारी है, भक्त है। उसी से साहेब-राम-अल्लाह खुश होते हैं। जो प्यासे को पानी, भूखे को अन्न खिलाए उसे भगवान अति शीघ्र मिल जाते हैं, किंतु हो रहा है बिल्कुल उलटा। मलूक के युग से ज़रा भी आगे नहीं बढ़ा मनुष्य। संत क्योंकि समाज के निम्न, उत्पीड़ित, अभावग्रस्त वर्ग से अधिकांशतः आए हैं, उन्हीं में रहे और हर प्रकार की भूख-प्यास सहते रहे हैं, अतः अपने उक्त कथन को मलूक ने व्यवहार मे भी परिणत किया। उनके मंदिर, आश्रम या चौरा पर आज भी टुकडा मिलता है, चौबीसो घंटे, हर दिन। यही प्रसाद है।

इलाहाबाद के निकट कड़ा नामक स्थान (मलूक का जन्मस्थान) पर, जगन्नाथपुरी तथा विभिन्न स्थानों पर आज भी यही परिपाटी है। अतः संतों की वाणी मे जैसी पीडा निर्धनों, उत्पीड़ितों के लिए फूटी है. वैसी अन्यत्र नहीं मिलती।

सत मलूकदास ने कबीर की भांति जाति भेद, संप्रदाय भेद की निदा की हे। पडित-मुल्ला दोनो को खूब खरी-खोटी सुनाई हैं—

मक्का, मदीना, द्वारका, बद्री और केदार।
बिना दया सब झूठ है कहैं मलूक बिचार।।
जेती देखै आतमा तेते सालिगराम।
बोलनहारा पूजिये पत्थर से क्या काम।।
रोजा करै निमाज गुजारै।
उरूस करे और आत्म मारै।।

जीवित प्राणियों को, बोलते-चलते-फिरते लोगो को पूजना ही धार्मिक तीर्थ-स्थानों की यात्रा है, अन्यथा उन्हे कष्ट या पीडा पहुचाना और पत्थर को पूजना, हज करना, रोजा रखना, उर्स करना सब व्यर्थ हैं, मक्का-मदीना या बद्री-केदार की यात्राएं निष्फल हैं। जीवित प्राणियो की हत्या तो बहुत बडा पाप कर्म है। अतः बिना प्राणी-दया के मलूक कहते हैं, सब झूठ है, ढोग है। इस ढोंग या झूठ को छोडना होगा। मनुष्य, पशु-पक्षी ही नहीं पेड़-पौधों में अपने जैसा जीव मानना चाहिए। उन्हें भी व्यर्थ में तोड़ना-काटना पाप है। विश्व के वर्तमान पर्यावरणविद् आज जिस नतीजे पर पहुंचे हैं, वनस्पतियों, पेड-पौधों मे जीवन होने की सच्चाई को लेकर, वहां वैदिक-काल के महर्षियो ने हज़ारों वर्ष पहले और संतों ने सैकडों वर्ष पूर्व अपनी वाणी मे इस तथ्य को बड़े मुखर और आग्रही शब्दों मे स्थापित किया है। मलूकदास का एक दोहा है—

हरी डार मत तोड़िये लागै छूरा बान।
दास मलूका यों कहे अपना-सा जिव जान।।

हरी टहनी तक को तोडने से मना कर रहे हैं मलूक, क्योकि उसमें भी मानवों जैसा जीव है। हरी टहनी को तोड़ने से वृक्ष को भी ऐसी ही पीडा होती है, जैसे मनुष्य को देह मे छुरा या बाण लगने से।

किंतु आज का हिंसक व्यवहार देखकर मनुष्य ही नहीं पशु-पक्षी, पेड़-पौधे तक भयभीत और त्रस्त हैं। नगर, गांव, देहात के साथ जंगल, वन-उपवन तक जल रहे हैं, उजाड़ हो रहे हैं। समुद्र तक ज्वलनशील तेलों से प्रदूषित हो रहे हैं। ऐसे में जल के जीव तक त्रस्त और आतकित हैं। अपनी इन हरकतों से एक नरक रच रहा है आज का मनुष्य। विडंबना यह है कि यह सब करते हुए भी, सच्चे मानवीय और धार्मिक होने का ढोंग भी रचे हुए है। मलूकदास इस तरह के हर ढोंग के हर आवरण को चीर कर लोगों को युग का सही चेहरा जहां दिखा रहे हैं, वहीं सही मार्ग भी दिखाते हैं, ताकि वृत्तियो की दासता और वासनाओ से मुक्त होकर एक समतामय, आत्मीय, संवेदनशील दुनिया की रचना संभव हो सके। भक्ति के मूल आधार को मलूकदास ने इतने सरल ढंग से

रखा है, जिसमें भ्रम या भटकन की कोई गुंजाइश नहीं बचती—

भूखेहिं टूक प्यासेहिं पानी।
यहै भगति हरि के मनमानी।।

संत मलूकदास के शब्दों में भक्ति की उक्त सरल परिभाषा यदि समझ नहीं आती किसी को और भक्ति के नाम पर कई तरह के मज़हबी, संप्रदायवादी प्रपंचों या आडंबरों को ही भक्ति मानने के आग्रह मन में समाए हुए हैं, तो यह सबसे बड़ी विडबना है। अपने सहज मनुष्य धर्म को छोड़कर 'धर्म' और 'परमात्मा' की बड़ी-बडी बातें मूर्खतापूर्ण भटकन के सिवा और कुछ नहीं। आज विभिन्न संप्रदायों के मुल्ला, पंडित, पादरी और ज्ञानी जो मानव के लिए धर्म और परमात्मा के नाम पर पीडाए बो रहे हैं, उनके लिए मलूकदास के ये शब्द सही मार्ग दिखाने वाले हैं—

मलूका सोई पीर है, जो जाने पर-पीर।
जो पर पीर न जानही, सो काफ़िर बे-पीर।।

अन्य सतों—कबीर, रैदास, नानकदेव, दादू आदि की भांति मलूकदास भी देह तथा भौतिक जगत के परे और भीतर आत्मा, परम आत्माचेतना के जागरण में विश्वास र ग्ते हैं। परमात्मा की रचना मे, इस जड़-चेतन ससार के प्रति स्नेह भाव से हमें भरना चाहते हैं। यही सर्वोच्च मानवीयता है। मानवीयता और परमात्म-चेतना के भाव में कोई अंतर नहीं। यह जागरण मनुष्य को परमात्मा से संबद्ध कर देता है। इसे ही योग कहा जाता है। आत्म-चेतना का परमात्म-चेतना से मिलना। इस मिलन का रास्ता परमात्मा के इस रचना-संसार के भीतर से होकर जाता है। इस जगती को प्रेम करना ही परमात्म-प्रेम है। इस जगती को पीड़ाओं से, वेदनाओं से भरना, अपने कृत्यों से, वचनों से धरती के जीवन में दु:खों-कष्टो को बढ़ाना ही काफिरपन है, बे-पीर होना है, नगुरापन है। यह मनुष्य की अधमता-पशुता की स्थिति है। अन्यथा आत्मिक-आध्यात्मिक जागरण में मनुष्य स्वयं परमात्मा ही हो जाता है। मनुष्य के इसी आत्म से परमात्म में स्थित होने को उपनिषदों मे 'अह ब्रह्मास्मि' अर्थात् 'मैं ब्रह्म हू' कहा है। यही वह स्तर है, जहा पहुचकर प्रतीति होती है कि मैं ही सबमें हू और सब मुझमें हैं। तीनों लोको मे मेरा ही विस्तार है। यह धरती-आकाश, सूर्य-चन्द्र, पशु-पेड़-पक्षी, कछुआ-मछली आदि सब कहीं सार रूप कुछ है, तो वह परम-आत्मा का स्वरूप है। उसकी कण-कण मे उपस्थिति है। और जिसके कारण यह दुनिया है। धूलि प्राणवान होकर बोलने-चहकने-गाने लगती है। उसके अहसास को ही लोग भूले फिरते हैं।

मलूक कहते हैं—

आपा मेटो राम भजो तुम, कहता मलूक दिवाना।

आपा यानी मैंपन का, अहंकार का भाव और उसके साथ जुडा हुआ सारा

मर्त्य-व्यापार (खाकसारी), क्योंकि मलूक तो मूलतः दीवाने हैं। दीवानगी, पागलपन, भाव और भावना के उद्रेक में खोए हुए समूचे जगत और इसके व्यापार को देखते हैं और हर जगह राम को ही पाते हैं–

सब कलियन में बास है, बिना बास नहिं कोय।
अति सुख ता में उपजे जो कोई फूली होय।।

अर्थात् धरती पर विद्यमान सभी जीवों में, खिली हुई सबकी सब कलियों में, बास अर्थात् सुगंध (आत्मा) विद्यमान है। अतः प्रत्येक जीव में परमात्मा का अंश मौजूद है, किंतु अधिक सुख का कारण तब बनता है, जब कलि को फूलने का अवसर भी उपलब्ध हो जाए। व्यक्ति के अस्तित्व को खिलने-महकने का अवसर भी मिले। वह व्यक्तित्वसंपन्न और अस्तित्वसंपन्न भी बने।

आज के मनुष्य ने हिंसा का मार्ग चुना है। पीडाओं से परस्पर के जीवन को भर दिया है और हत्या, हिंसा के रास्तों पर तेजी से बढ़ता जा रहा है। इससे और नीची अधमता क्या होगी, जबकि–

पीर सभन की एक-सी, मूरख जानता नाहिं।
कांटा चूभे पीर होय, गला काट कोउ खाहिं।।

मलूक की वाणी में वैसे तो माया, मोह, अहंकार आदि के निषेध के विचार और दया, प्रेम, सद्भावना, करुणा, नाम, जप, भक्ति आदि की विधि के विचार सर्वत्र ही मिलेंगे। 'इन्द्री खाई गई जग सारा' कहकर काम-वासना आदि का निषेध किया गया है। 'साधु की संगति में महासुख होता है'। इस तरह अन्य संतों की वाणी के प्रभाव भी देखे जा सकते हैं। विशेषकर कबीर वाणी के बहुत-से दृष्टांतों, उक्तियों आदि की छाप स्पष्ट दिखाई पड़ती है। तीर्थयात्रा, छापा, तिलक आदि का विरोध कबीर ने भी किया है, मलूकदास ने भी–

संध्या तर्पन सब तजे तीरथ कबहुं न जाऊं।
हरि हीरा हिरदय मिला ताहि बैठि अन्हवाऊं।।

एक मजेदार तथ्य यह है कि देह, दैहिकता और दुनिया के बाहरी संदर्भों, पक्षों को संभालने की ओर सब संतों ने बहुत ध्यान दिया है और इसे सबकुछ मान लेने के मोहजाल या भ्रम से मुक्त होने के पुरजोर आग्रह किए हैं, तो साथ ही सबके आंतरिकता, मानवीयता, संवेदनशीलता और हृदय पक्ष एवं भाव और भावना पक्ष को सदैव आगे और ऊंचा रखा है। यहां मलूकदास भी संध्या, तर्पन, तीरथ सब तजने को तैयार हैं, किंतु हरि रूपी हीरा जो हृदय में आ गया है, उसे ही भावनापूर्ण स्नान कराने को महत्त्व दे रहे हैं। इतना ही नहीं, दुखी, दरिद्र, अभावग्रस्त व्यक्ति ही राम का रूप है। उसके दुःख को दूर करना राम की सच्ची भक्ति है–

जो दुखिया संसार में, खावों तिनका दुक्ख।
दलिद्दर सौंपि मलूक को, लोगन दीजै सुक्ख।।

सारे संसार के दुःख मलूक अपनी झोली में ले लेना चाहते हैं और लोगों में सारे सुख बांट देना चाहते हैं।

संत तुलसीदास के कथन 'सिया-राम मय सब जग जानी' की भांति भाव की इस स्थिति पर पहुंचकर, जहां सब जीव-जन्तु, जगत में राम व्याप्त दीखते हैं और प्रिय लगते हैं, मलूकदास कहते हैं–

सबहिन के हम सबै हमारे। जीव जन्तु मोहिं लगैं पियारे।।
या पद का कोई करै निबेरा। कह मलूक मैं ता का चेरा।।

यह वृहत परमात्म भाव सरल नहीं, किन्तु सतत अभ्यास, भक्ति, दीवानगी, सत्संगति से यहां पहुंचा जा सकता है। एक स्थिति ऐसी आती है, जब इष्ट और भक्त में अंतर नहीं रह जाता।

मानवीयता एवं संवेदनशीलता में मलूकदास का कोई सानी नहीं। आधुनिक युग के कवियों ने भी मानवीय दृष्टि को अपनी-अपनी तरह से व्यक्त किया है, जैसे मुक्तिबोध को हर पत्थर में 'हीरा' नज़र आता है। मलूकदास क्योंकि न तो मात्र कवि हैं, न धर्मशास्त्र के संस्थापक, न दार्शनिक हैं, वह तो महाकाल पर्वत के वक्ष मे फूटे अमृत जल के अजस्र स्रोत हैं। उनचास पवनों के सम्मिश्रण से मिलकर बनी वह पवन हैं, जो मिट्टी को, खाक को भी जीवित कर देती है, क्योंकि वह जानते हैं कि इस दुनिया का सब कुछ, जो इन आंखों से दिखता है, वह सब का सब खाक है, धूल है। इसी दुनिया में सब बदगी को, परमात्मा की प्रार्थना व नाम को भूले हुए हैं और अहंकार के घोड़े पर सवार हैं, आसमान से नीचे धरती पर देखना ही भूल गए हैं।

यह हमारा दुर्भाग्य ही है कि हमने अपने संतों को भुला दिया है। यानी अपनी जीवनी-शक्ति के अक्षय स्रोतों से स्वयं को स्वयं ही अलग कर लिया है। जबकि हमारे जातीय स्वाभिमान ही नहीं, जीवन, सोच, बोध, चिंतन और मुक्ति के दिशा-द्वार हैं संत। उन्हें पीठ देना अपनी सांसों से मुकरना है। सतो ने वैदिक ऋषियो के प्रकृत सोच के अमृत-कुड हमारे लिए उपलब्ध किए हैं। उनकी वाणी विश्व-मानवता के लिए सच्चा वरदान है। संत कबीरदास को ख्याति के प्रकाश में लाने का सर्वाधिक श्रेय जाता है आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी जी को, जिन्होंने कबीर की वाणी और साहित्य पर गहन शोध-कार्य किया और दुनिया के सामने रखी कबीर की अद्वितीयता, कबीर का फक्कड़पन, कबीर की मस्ती। कबीर का घट-घट में वास कराया। और गुरुनानक देव को सारसों का शृंगार बनाया उन्हें मिलने वाली चुनौतियो ने, कीमत चुकाने वाले बहादुर-दूरदर्शी उनके बाद के शिष्यों, सिख गुरुओं ने और समूची कृतज्ञ हिन्दू जाति ने।

पर मलूकदास? उनकी वाणी भले ही गुरुग्रंथ साहिब—सिखों के पवित्र ग्रंथ में सम्मिलित नहीं है और उनकी समूची वाणी आज तक प्रकाश में नहीं आई। कहना चाहिए कि लाई ही नहीं गई। क्यों? किस कारणवश? यह भी शोध का विषय है। मोटे रूप में एक लापरवाही के कारण। फिर भी उनकी वाणी में अध्यात्म की ऊंचाइयां, गहराइयां और जीवन के मर्म और समाज के प्रति, प्राणिमात्र के प्रति एक चिंताकुल संभाल बराबर मिलती है। कबीर की शैली, सोच के साथ ही मलूक में एक दीवानगी भी है, मस्ती भी है, जो उन्हें कबीर जैसा अक्खड़ नहीं बनने देती, तो हिन्दू-मुस्लिम सांप्रदायिक विभेद को मिटाने में कटु नहीं होने देती। कबीर यदि आध्यात्मिक उच्चता और राम के साथ अभिन्नता व्यक्त करते हुए कहते हैं—

कबिरा मन निर्मल भया, जैसे गंगा नीर।
पीछे-पीछे हरि फिरै, कहते कबीर कबीर।।

तो मलूक इसी अभिन्नता, एकत्व की ऊंचाई के समकक्ष बिल्कुल निकट कहीं कहते हैं—

माला जपों न कर जपों, जिभ्या कहों न राम।
सुमिरन मेरा हरि करै, मैं पायो बिसराम।।

अब मैंने माला फेरना बंद कर दिया है। हाथ के पोरों पर भगवान के नाम का जाप करना भी छोड़ दिया है और न ही जिह्वा से राम-राम जपता हूं, बल्कि हो यह गया है कि अब राम ही मेरा नाम जपते हैं। मैंने विराम पा लिया है। मैं नाम-जप के कार्य से भी मुक्त हो गया हूं, बल्कि मैं स्वयं ही राम हो गया हूं और राम मेरे स्थान पर आ गए हैं। कैसी अभिन्नता है, कैसा निर्द्वन्द्व विश्वास है, भक्त के भगवान बन जाने का और भगवान के भक्त हो जाने का। इसी प्रकार भगवान भक्त के वश में होते हैं। मलूक का कथन यों कबीर से एक कदम आगे है। कबीर के पीछे-पीछे राम घूम रहे हैं। कबीर को पुकार रहे हैं, किंतु यहां मलूक तो विश्राम पा गए हैं और राम मलूक का नाम जप रहे हैं। वैसे संतों में परस्पर तुलना की कोई गुंजाइश नहीं । कोई जरूरत नहीं। सभी अद्वितीय हैं, अतुलनीय हैं, अपनी उपलब्धियों में, किंतु यहां संकेत मलूक की पहुंच और परमात्म अनुभूति की गहनता को लेकर है। पूजा और भक्ति का तरीका सुझाते हुए कहते हैं मलूक—

सुमिरन ऐसा कीजिये, दूजा लखे न कोय।
ओंठ न फरकत देखिये, प्रेम राखिये गोय।।

भगवान के प्रति प्रेम दिखावे की चीज़ नहीं, प्रदर्शन की वस्तु या क्रिया नहीं है, बल्कि उसे गुप्त, लोगों से छिपाकर रखिए, तभी उसका महत्त्व है। वह निहायत निजी व्यापार है। आत्मा और परमात्मा के मध्य का संवाद है। पहचान है। योग है। यह किसी को दिखाया-समझाया नहीं जा सकता। गूंगे का गुड़ है। यह अजपा-जाप है। हर श्वास में

राम ही का जाप चलता है। कबीर ने भी माला और तीर्थ तथा बाह्य विधियों का खडन किया है। मलूक ने भी कहा है—

आत्म राम न चीन्हही, पूजत फिरै पषान।
कैसुहु मुक्ति न होयगी, कोटिक सुनो पुरान।।

आत्मा ही राम है। प्रत्येक प्राणी में यही आत्मा, राम की उपस्थिति है, इसे तो पहचानते नहीं, पत्थर पूजने में व्यस्त रहते हैं, पत्थर की बेजान मूर्तियो को भगवान मान कर पूजने मे भक्ति मान रहे हैं लोग। इस प्रकार की किसी भी विधि से भक्ति नहीं होने वाली, परमात्मा प्रसन्न होने वाले नहीं हैं। मुक्ति नहीं मिलने वाली। भले ही करोड़ो पुराण आदि ग्रथों को क्यो न सुनते रहो। प्राणिमात्र में जो जीवित और बोलता हुआ राम है, उसे यदि महत्त्व नहीं दिया, सुख नहीं दिया, तो मुक्ति संभव नहीं। इतना ही नहीं, संसारी लोग तो जीव-हत्या करते हैं—

कुंजर चींटी पशू नर, सब में साहेब एक।
काटे गला खोदाय का करै सूरमा लेख।।

मलूक कहते हैं, यह जीवहत्या नहीं, खुदा का, भगवान का गला काटना है, क्योंकि हाथी हो या चींटी सबमें एक ही खुदा का वास है। लोग जीवहत्या करके अपने को सूरमा समझते हैं, जबकि यह परमात्म हत्या है। इसके विपरीत मलूक एक उपाय सुझाते हैं—

दया धर्म हिरदे बसै, बोलै अमृत बैन।
तेई ऊचे जानिये, जिन के नीचै नैन।।

आज हो रहा है इसके उलट। मन में दया नहीं। वाणी कड़वी है और अपने को ऊचा सिद्ध करने के लिए आंखें ऊची ही नहीं, अहंकार में चूर होकर सदा चढ़ी रहती हैं। पद का, धन का, शक्ति का अहंकार आज व्यक्ति को तोड रहा है।

मलूकदास के आश्रम—ध्यान योग आश्रम, सी ब्लाक, नारायणा, दिल्ली नियमित रूप से योग पर प्रवचन और अभ्यास कार्यक्रम आयोजित होते हैं। वहा पर मलूकदास की चोदहवीं पीढ़ी के महत योगिराज नानकचंद जी अपने अनुयायियों में, मलूक के भक्तो मे प्राकृतिक सत्य, अध्यात्म-निष्ठा, मानवीय संवेदना और धर्म की सूक्ष्म अनुभूति जाग्रत करने के अविरल प्रयासों में लगे हैं। मलूकदास का मूल आश्रय, उनकी समाधि कडा, इलाहाबाद के पास, उत्तरप्रदेश में है। यहीं, कडा मे, मलूकदास का जन्म हुआ। यहीं उन्होने अपने जीवन के एक सौ आठ वर्ष व्यतीत किए। और यहीं उनकी समाधि बनी। एक तीसरा आश्रम कैलिफोर्निया, अमरीका मे है। पुराने कुछ मठ जगन्नाथपुरी, वृंदावन आदि में थे। दिल्ली आश्रम में मलूक की पत्थर की मूर्तिया, चादी में मढी हुई उनकी खडाऊं हैं। पक्के आधुनिक ढग के मार्बल के फर्श। एक बड़ा सत्सग भवन है। यहीं

मलूक की वाणी गूजती है। लोग सात्त्विकता, सरलता, सादगी, अध्यात्म और आत्म की पहचान पाने बडी श्रद्धा से पहुंचते हैं। वस्तुतः धर्म तो व्यक्ति के भीतर की सुवास है, जिसे भीतर ही खोजा-पाया जा सकता है। यहां, इस आश्रम मे योगिराज नानकचंद जी आजीवन अध्यात्म श्रम के सकल्प से इसी तथ्य को चरितार्थ करने में जुटे हैं। कड़ा में ही मलूकदास की जन्मस्थली व आश्रम के अतिरिक्त प्रमुख संबद्ध स्थान निम्न प्रकार हैं—

1 सत मलूकदास की समाधि तथा जन्मस्थली एवं गुफा।
2. समाधि सत फतेह खां, जो मीर माधव के नाम से प्रसिद्ध हैं (प्रमुख मुसलमान भक्त)।
3 समाधि सत रामस्नेही दास (शिष्य, उत्तराधिकारी)।
4 गंगाघाट आश्रम से आधा मील की दूरी पर, जहां मलूकदास एकांत मे ध्यानमग्न बैठा करते थे।
5. मलूक कुआं (आश्रम से आधा मील की दूरी पर, खेतों के मध्य)।
6 मक़बरा कडकशाह (मलूक से थोडा समय पूर्व हुए मुस्लिम फक़ीर) आश्रम से एक मील दूरी पर।
7 सैयद सख़ीर खांसगी मौलाना रहमतुल्लाह का मजार (गंगा-तट पर स्थित)।

ऐतिहासिक प्रमाणो के रूप में कड़ा आश्रम में बहुत-से राजाओं, नवाबों द्वारा किए गए पट्टों, फरमानो, मुहरों के दस्तावेज उपलब्ध हैं, जिनमे प्रमुख प्रमाण मुग़ल बादशाह औरंगजेब द्वारा दिए गए पट्टे और ज़मीनों के फरमान हैं। इसके अतिरिक्त मैक आर्थर मैकलिफ द्वारा लिखी पुस्तक 'द सिख रिलीजन' में उल्लेख मिलता है कि गुरु तेगबहादुर जी से भेट करने संत मलूकदास स्वय उनके पास गए थे और धर्म-चर्चा की थी। जगन्नाथपुरी, कालपी, दिल्ली जैसे स्थानों पर उनकी यात्राएं अपना विशेष महत्व रखती हैं। औरगजेब द्वारा कड़ा का जज़िया माफ़ कर देना एव सिराथू में भूमि प्रदान करना भी ऐतिहासिक महत्त्व की घटनाएं हैं। कडा के अतिरिक्त अनेक स्थानों पर, पूरे देश मे, सत मलूकदास को प्राप्त 'जागीरें और ज़मीनों के पट्टे' आदि भी कड़ा आश्रम मे मौजूद हैं। इनमें से काफी प्रमाणो का फ़िल्माकन भी सी पी सी (केन्द्रीय निर्माण विभाग, दूरदर्शन, दिल्ली) द्वारा बनाई फिल्म के अवसर पर हमने किया था। श्रीसीता कोकिल जो अब श्रीकाकुलम (आध्रप्रदेश) नाम से विख्यात है, मे भी बहुत बड़ा मेला हर वर्ष लगता है। इसे अब विदुर जी के नाम से विख्यात किया गया है। संत कवि मलूकदास की वाणी में अत मे जो पुष्पी दी हुई है, उसके अनुसार—

मलूक की भगिन सुत जोई।
मलूक को शिष्यन है सोई।
तेन प्रीति सहित परचई भाखी।
बसे प्रयाग जगत सब साखी।

देखी कही सुनी सब वरनी प्रेम हुलास।
छाप परी साधुन में गावे सुथरा दास।।

सुथरादास ने मलूक वाणी को कलमबद किया। सुथरादास की परिचयी के अनुसार मलूकदास के जीवन के विशद विवरण प्राप्त होते हैं। मलूकदास की लोकप्रियता उनकी सरल सहज बोधगम्य वाणी और आचरण की एकता व प्रमाण के कारण फैलती गई।

मलूक ग्रंथावली में आरंभ मे दोहे और शब्द चयन करके पृथक् से दिए गए हैं ताकि पाठकों-भक्तों को सुविधा रहे तथा वे शेष रचनाओं के प्रति आकर्षित होकर उद्यत हों।

'ज्ञान बोध' ग्रथ में संत मलूक ज्ञानमार्ग के पथिक और ज्ञानमार्गी परंपरा के पोषक सिद्ध होते हैं, साथ ही ज्ञानमार्गी कबीर की भांति तीर्थ-यात्रा, गृहस्थ-त्याग, साधुता का ढोंग करने के कृत्यो का निषेध करते हैं. तो ज्ञान, भक्ति, कर्म, वैराग्य की महत्ता व स्थापना भी की गई है।

'भक्ति विवेक' में भगवत-भक्ति का वर्णन उसके अंग-उपागो सहित मिलता है। विषय प्रतिपादन में कई दृष्टांतों-कथाओ का उपयोग है। इसी ग्रथ में भक्ति एव योग के कई आयामो का पृथक्-पृथक् अनुच्छेदों मे वर्णन है। 'यथा अथ तन्मात्रा भूमिका' से लेकर 'जग भास वरनन' तक सात अग हैं।

'ज्ञान परोछि' ग्रंथ मे जीव, आत्मा, वैराग्य, सृष्टि की उत्पत्ति, अष्टाग योग, अद्वैत आदि दार्शनिक अवधारणाओ को समाहित किया गया है।

'सुख सागर' रचना मे ब्रह्म तथा उसके विभिन्न अवतारों की लीलाओं का वर्णन है।

'बिभै विभूति' ग्रंथ में मलूकदास जी की चिंतना एवं दार्शनिक विचारों का प्रकटीकरण हुआ है। ब्रह्म का स्वरूप, उसका महात्म्य, ब्रह्म-प्राप्ति के उपायों को लक्ष्य किया गया है तो साथ ही अष्टाग योग, साधना एव उस प्राप्त फल एवं आत्मा पर पडने वाले प्रभावो का वर्णन है।

'ध्रुव चरित्र' मे ध्रुव भक्त की दृढ़ भक्ति की कथा के माध्यम से पुन: भक्ति का प्रताप रेखांकित किया है संत मलूकदास ने तो 'रघुज चरित्र' के माध्यम से रामभक्ति एव राम की लीला, राम के प्रताप को जीव के लिए मुक्ति का मार्ग सिद्ध किया है।

मुख्यत: दोहा और शब्द-रूप में अति सरल भाषा में संत मलूक की वाणी अपने अद्वितीय अनुभवसिद्ध साक्षीभाव को हमे उपलब्ध कराती है। कहीं मैथिली, कहीं खड़ी बोली, कहीं पंजाबी के मिले-जुले रूपाकारो में बड़ी लुभावनी, प्रेरक और मुक्तिदात्री है यह ग्रंथावली। हम सभी ग्रथों को पूर्णत: प्रामाणिक मानते हैं, शेष कार्य शोधकर्ताओं और विद्वानों पर छोड़ते हैं।

एक अन्य तथ्य की चर्चा करना भी जरूरी लग रहा है। सत मलूकदास जी के

नाम से लोक में एकमात्र अति प्रसिद्ध साखी है —

अजगर करै न चाकरी, पंछी करै न काम।
दास मलूका कह गये, सब के दाता राम।।

यह साखी मलूक वाणी में कहीं भी उपलब्ध नहीं होती। यह प्रक्षिप्त साखी है। न जाने किन कारणों से मलूक के नाम से लोक प्रसिद्धि पा गई। एक कारण तो यह लगता है कि मलूक के सत स्वभाव के कारण, जो प्रत्येक कार्य के लिए प्रभु को ही कारण मानता है और श्रेय देता है, देखते हुए प्रसिद्ध की गयी है या फिर आलस्य की पराकाष्ठा को मलूक के नाम के साथ जानबूझ कर जोड़ देने के आशय से इसे प्रसिद्ध किया गया होगा। वैसे प्रत्येक भक्त या सत की वाणी मे प्रभु की असीम कृपा पर निर्भरता के विचार अवश्य व्यक्त हुए हैं। मलूक के जीवन की घटनाए भी इसी तथ्य को प्रमाणित करती हैं।

प्रयाग से बिल्वेडियर प्रेस से 'मलूकदास की बाणी' प्रकाशित हुई थी, जिसमें अत्यल्प अंश ही सामने आया था। वियोगी हरि ने 'सन्त सुधासार' में भी कुछ काव्य दिया था, किंतु कितना विपुल भंडार अभी भी अप्रकाशित है, इसे खोजना, संशोधित करना और प्रकाश में लाना एक महती कार्य है। उनकी वाणी का कैथी बोली में होना भी एक सीमा है। दसेक वर्ष तो इस लेखक को हो लग गए हैं।

इसके अतिरिक्त डॉ त्रिलोकी नारायण दीक्षित द्वारा एक पुस्तक उनके शोधकार्य के अंशों की प्रकाशित हुई, जिसकी एक पृष्ठ की भूमिका डॉ रामकुमार वर्मा ने लिखी। यह उस समय (सं 2022) अखिल भारतीय संत मलूकदास स्मारक समिति, प्रयाग के अध्यक्ष थे। (प्रकाशक : सत-सूफी साहित्य संस्थान, अ भा संत मलूकदास स्मारक समिति, इलाहाबाद-3)

इनके अतिरिक्त ओशो (भगवान श्री रजनीश) द्वारा व्याख्यायित उन्नीस साखियों और नौ पदों की व्यापक चर्चा उनकी पुस्तक 'राम दवारे जो मरे' मे भी संकलित है। सुना है 'कन थोड़े कांकड घने' ओशो की यह पुस्तक भी मलूक वाणी को समर्पित है। उक्त पुस्तकों में प्रकाशित रचनाओं में पुनरावृत्ति है।

लगभग दस वर्ष पूर्व (1991-92 में) मेरा संपर्क आश्रम से जोड़ने का श्रेय महानुभाव दीनदयाल शर्मा जी को जाता है। तभी मेरे साहित्यिक कवि-व्यक्तित्व से परिचित हो मेरी साहित्य-निष्ठा और अध्यात्म रुझान को देख संत मलूकदास जी के वशज, चौदहवीं गद्दी के पीठाचार्य स्वामी नानकचद जी ने सत मलूकदास जी की वाणी, हस्तलिखित ग्रथ की फोटो प्रति, जो कि 455 पृष्ठो की है, मुझे सौंपी, ताकि मैं इसे कैथी बोली से पाठ निर्धारित कर वर्तमान स्वरूप में लाकर प्रकाशित करवाऊ। हस्तलिखित प्रति को पढ़ना, शिरोरेख एक होने से पद का (शब्द का) स्वरूप निर्धारित करके पाठ निर्धारित करना सर्वाधिक कठिन कार्य था। इसमें सहयोग दिया मेरी शिष्या

श्रीमती राजबाला शर्मा ने। इस बीच 1997 में दो बार सत मलूकदास की जन्म एव कर्म-स्थली कडा (इलाहाबाद) जाकर तथ्यों का शोध करने और दूरदर्शन के केन्द्रीय निर्माण केंद्र, खेलगांव, दिल्ली के लिए शोध-आलेख तैयार करने का अवसर मिला। मेरे प्रस्ताव पर तीस मिनट की लघु फिल्म का निर्माण कराया भारत की ख्यातिप्राप्त नर्तकी एवं उक्त केंद्र की उपनिदेशिका ने। योगिराज स्वामी नानकचद जी से भी मैंने साक्षात्कार लिया तथा उक्त फिल्म को अपनी विशिष्ट आवाज (Voice) मे कमेंट्री दी कवि एवं दूरदर्शन के उपनिदेशक कुबेरदत्त ने। इस दसेक वर्ष की अवधि में कुछ लेख मेरे द्वारा लिखे गए, प्रकाशित होते रहे हैं। 1998 में मेरे द्वारा स्वामी नानकचंद जी का लिया साक्षात्किार आकाशवाणी, दिल्ली से प्रसारित हुआ।

यह तथ्य ध्यान देने योग्य है कि संत मलूकदास ने 108 वर्ष की लंबी आयु पायी थी (सं 1631 से सं 1739 तक), अत. उन्होंने अकबर, जहांगीर, शाहजहा और औरगज़ेब—चार मुगल बादशाहों का काल देखा। मलूक का जन्म-समय ही गोस्वामी तुलसीदास के रामचरितमानस के सृजनारंभ का समय है। संत कवि दादूदयाल, रज्जब, सुदरदास, सूरदास, मीरा, नंददास, केशवदास आदि मलूकदास के समकालीन हैं।

सन् 1993 में मुझे मलूकदास का ग्रंथ, जिसमे कई रचनाए सकलित हैं, हस्तलिखित प्रति स्वामी योगिराज नानकचद जी ने सौंपी। तब से धीरे-धीरे चींटी ज्यों पर्वत चढ़े की गति से इस कार्य को करने मे मैं जुटा रहा। क्योंकि यह पांडुलिपि कैथी बोली मे है तथा सरकडे की कलम से ऊपर की शिरोरेख मिला कर ऐसे लिखी गई है कि एक शब्द को दूसरे शब्द से अलग पहचान कर पाठ कर पाना ही दु:साध्य कार्य है। इसके लिए जो विकट धैर्य चाहिए वह साहित्यकारो में प्राय: अति दुर्लभ होता गया है। आधुनिक जीवन की आपाधापी मे मलूक जैसे भूले हुए संत पर इतना समय और श्रम लगा देने से क्या उपलब्ध होने वाला है—इस गणित ने भी मलूक को अंधेरे में बनाये रखा। प्रकाश में नहीं आने दिया। कुछ संतों-कवियों की वाणियो-ग्रंथों की नियति भी आडे आती ही है। फिर भी देखे, सन् 1999 में यह ग्रथ तैयार हो गया था, तब से कई-कई अर्थ और व्यर्थ के कारणों से अधकार की कारा से बाहर नहीं आ पा रहा था। खैर.

भाषा-बोली-वर्तनीगत अनेक कठिनाइया सामने आयीं। अत: कई स्थानो पर अस्पष्टता के कारण अर्थगत सुविधा हेतु हिन्दी के प्रचलित रूप में शब्दों को लाना पडा है। फिर भी प्रयत्न रहा हे कि वाणी के मूल शब्दो को यथावत् बनाये रखा जाये। बीच-बीच में कहीं संस्कृत भाषा का प्रयोग भी है तथा अरबी-फारसी भाषाओ का भी इनके साथ ही एक तथ्य यह भी ध्यान खींचता है और ऐसा माना भी जाता है कि सत मलूकदास के पूर्वज, जो कि क्षत्रिय-कक्कड़ थे, कभी पंजाब से स्थानांतरित होकर कडा जनपद गगा नदी के तट पर आ बसे होंगे। उनकी वाणी में ठेठ पजाबी भाषा के प्रयोग

प्रचुरता में देख कर भी उनका पंजाबी होना सिद्ध होता है। एक वृत्तचित्र (ऊपर उल्लिखित) के सिलसिले में दो बार मुझे मलूक जी की जन्म एवं कर्म-स्थली जाना हुआ। वहां तत्कालीन बादशाहो के द्वारा दिये गये पट्टे, फरमान, दस्तावेजो को देखा, फिल्मांकन किया गया। प्रदेश के बूढ़े-बुजुर्गों से भी मलूक के पंजाबी होने की पुष्टि हुई।

अंत में गुरुवर योगिराज नानकचंद जी का आभार। महती प्रेरणाओ और सहयोग के लिए अपने भसीन कुल का आभार किन शब्दो मे कहूँ।

—डॉ॰ बलदेव वंशी
ए-3/283, पश्चिम विहार
नई दिल्ली-110063

गुरु पूर्णिमा आषाढ मास शुक्ल पक्ष
वि. सम्वत 2059
तदनुसार 24 जुलाई, 2002 ई॰

मलूकदास चरित्र

संत मलूकदास जी के जीवन सम्बन्धी तथ्य, घटनाएं एवं ब्यौरे कहीं भी एक स्थान पर उपलब्ध नहीं हैं। कडा जनपद के जनमानस में किंवदन्तियो, प्रसिद्धियो और भक्तजनों की स्मृति के आधार पर तथा कुछ प्रकाशित फुटकर जानकारियो के आधार पर हम जो कुछ सहेज पाए हैं, उस आधार पर उनका जन्म कड़ा नाम के गांव में, जो जिला इलाहाबाद में स्थित है, बैसाख की तिथि पाच, विक्रमी सवत 1631 को हुआ। इनके पिता का नाम सुदरदास खत्री कक्कड़ था। इनके पूर्वज कहा जाता है कि पंजाब से आकर कडा में बस गए थे। मलूकदास ने बचपन मे ही अपना अनूठापन, अद्वितीयता और अद्भुत कारनामे दिखाने आरभ कर दिए थे, जिनसे उनकी सत वृत्ति का आभास मिलता है।

कंटक-कंकड़ बीनना और भविष्यवाणी

पहली घटना उनकी पाच वर्ष की अवस्था की है। वह गली मे अकेले खेल रहे थे। तभी एक महात्मा उधर से गुजर रहे थे। उन्होंने देखा कि यह बालक अद्भुत है, जो अकेला ही खेल रहा है, जबकि अन्य बच्चे समूह बनाकर मिल-जुलकर खेला करते हैं। उनके मन मे जिज्ञासा हुई। वह थोड़ा और निकट आकर, रुककर उस बालक को ध्यानपूर्वक देखने लगे। उन्होंने देखा कि इस बालक की बाहें घुटनों तक पहुच रही हैं। औसत बालकों से काफी लंबी हैं, जो या तो राजाओं, बड़े योद्धाओं की होती हैं या बड़े महान् साधु पुरुषों की तथा अकेला खेलने की प्रवृत्ति से उनका लीक छोडकर चलना भी उन्हे अनोखा बालक सिद्ध कर रहा था। फिर उन महात्मा ने देखा कि बालक के खेल भी निराले थे। कभी वह यू ही कुछ गाते-गुनगुनाते पक्षियो से बातें करते या **गली में पड़ा कूड़ा-करकट उठाकर, कांटे-कंकड़ बीनकर एक तरफ़ डाल देते, ताकि अन्य बालकों को या राह चलने वालों को चोट न लगे, कष्ट न पहुंचे।** उन महात्मा जी ने बालक मलूक के पिता को बुलवाया और उनसे सारी बातें सुनीं और भविष्यवाणी की कि यह बालक अपने व्यक्तित्व, स्वभाव और प्रवृत्तियों के कारण या तो बहुत बडा सम्राट बनेगा या ऐसा बड़ा महात्मा होगा कि जिसका नाम धरती पर अमर होगा। जो मानवता के मार्ग के कटकों को हटाने की चिंताए बचपन में ही कर रहा है, उसका भविष्य महानता की मिसाल बनेगा।

एकांतप्रिय और अंतर्मुखी

मलूक बचपन मे अतर्मुखी स्वभाव के एकातप्रिय बालक थे। अपने इसी स्वभाव के कारण वह जब मन करता गंगा के घाट पर एकांत मे जा बैठते और गगा की लहरो के साथ ध्यान लगाकर कहीं दूर निकल जाते। ऐसे ही एक बार जब वह दोपहर तक बिना कुछ खाए ही घर से बाहर रहे, तो चितातुर उनकी माता शांति देवी ने उनके पिता से शिकायती स्वर मे कहा कि इस बालक को तुम जरा भी नहीं समझाते कि वह समय पर खाना-पीना कर लिया करे और बताकर ही कहीं जाया करे। जब देखो साधुओ के टोले के साथ या रामलीला, रासलीला की मंडलियो के साथ घूमता फिरता है। पिता सुन्दरदास भी मलूक की इस लापरवाही के लिए, मलूक की माता को ही दोषी मानते हुए उसे ढूंढने गगा जी के घाट की ओर निकल गए। रास्ते मे अन्य ठिकानों में मलूक कहीं नहीं मिले। आखिर देखते क्या हैं कि **एकांत स्थान पर गंगा के तट पर एक शिला पर ध्यानमग्न बैठा मलूक अपने आसपास से बिलकुल बेखबर है जैसे ध्यान समाधि में हो**। सुदरदास यह देखकर चकित हो गए। यह कैसा असामान्य बालक है। ऐसा तो कभी देखा नहीं। बहुत देर तक अचभित खडे उसे देखते रहे, फिर होश आने पर मलूक को पुकारा। कई आवाजे़ देने पर मलूक का ध्यान पिता की पुकारों की ओर गया। वह उठ खडा हुआ। भागकर पिता के पास आ गया। पिता ने स्नेह से गद्‌गद होकर उसे गले लगा लिया।

दयालु और दानी स्वभाव

एक दिन मलूक घर पर अकेले थे। प्रातःकाल का समय था। माता-पिता गंगास्नान को गए थे। तभी **एक साधु मंडली** उधर आ निकली। उन्होने बालक मलूक से भिक्षा मांगी। मलूक ने माता-पिता की प्रतीक्षा करना उचित नहीं समझा और **स्वयं ही भंडार में जाकर जितना भी अनाज पड़ा था, वह सब लाकर उन्हें दे दिया।** कुछ देर बाद माता-पिता लौटे। माता भोजन की व्यवस्था करने के लिए भडार में गई तो देखा कि सब कोठार खाली पडे हैं। 'आज फिर तुमने सब अनाज उठाकर साधुओ मे बांट दिया? तुम्हें कब अकल आएगी?' कहते हुए मा बिगड़ी, किन्तु मलूक ने सहज ढग से कहा, 'आप क्या कह रही हैं? कोठार खाली कहां हैं? भंडार को ठीक से नहीं देखा तुमने।' यह कहकर वह मा के साथ भडार में गए। मां ज्यो की त्यो गुस्से में भरी थीं, पर **भंडार में जाकर कोठारों में झांका, तो देखा, उनमें अनाज भरा था।** मा का कोध तो शात हो गया, साथ ही, आश्चर्यचकित वह कभी भरे हुए कोठारो को देखतीं, कभी मुस्कराते हुए मलूक को देखतीं।

प्लेग की महामारी में तीमारदारी

प्लेग की भयानक बीमारी फैली थी। हर रोज कोई-न-कोई प्लेग की भेंट चढ र

था। सुदरदास भी अनेक बार श्मशान जाते-जाते भयभीत हो चले थे कि समय रहते बस्ती छोडकर शहर चले जाए तो अच्छा है। न जाने कैसी अनहोनी हो जाए। यह निर्णय लेकर उन्होने झटपट पत्नी से अपना निर्णय बताया और सामान बांधकर शहर के लिए तैयार हो गए। पर मलूक को देखा, तो उसका कोई अता-पता न था। चिता हुई, यह लडका जरूर कोई परेशानी खड़ी करेगा। मन ही मन चिता मे डूबे, बड़बडाते **सुंदरदास पुत्र को ढूंढ़ने निकल पड़े। काफ़ी भटकने के बाद पता चला कि मलूक घीसू चमार के घर उनकी पत्नी की तीमारदारी में लगे हैं।** घीसू कहीं दवा-दारू के लिए भागा फिरता था और बालक मलूक घर पर **अकेली बुखार में तप रही उसकी पत्नी के माथे पर ठंडे पानी की पट्टी रख रहे थे।** पिता ने डाटा कि 'इस भयकर रोग से बचना चाहिए और तुम नीची जाति के घर पर कैसा खतरा मोल ले रहे हो?' पर मलूक के लिए ऊची-नीची जाति का भेद न था और न विपत्ति मे मातातुल्य घीसू की पत्नी को अकेले छोडना उसे गवारा था।

घर पहुचकर देखा कि सब सामान तैयार है और परिवार बस्ती छोड़ने का निर्णय भी कर चुका है। बालक मलूक थोड़ी देर चुपचाप रहा, फिर घर के एक कोने मे ध्यानमग्न बैठ गया। उसने भगवान से इस बस्ती को प्लेग से बचाने की मौन प्रार्थना की, फिर पिता से बड़े विश्वास-भरे स्वर मे बोला, 'मैंने प्रभु से प्रार्थना की है। उसने मेरी प्रार्थना को सुन लिया है। अब प्लेग का प्रकोप अवश्य घटने लग जाएगा। हमे कहीं भी जाने की आवश्यकता नहीं है।' पिता क्रोध मे भरकर डांटने लगे, किंतु मलूक के इन शब्दों से द्रवित हो गए कि 'यह समय बस्ती के लोगो की सहायता करने का है। उन्हे विपत्ति में छोडकर कैसे चले जाएं? यदि हमें इस दशा में छोड़कर लोग चले जाए तो हमें कैसा लगेगा? आप मेरा कहा मानकर दो-एक दिन और देख लें। महामारी न थमी, तब चले जाएगे।' पिता ने मलूक का विश्वास कर उसका कर्तव्य और भावपूर्ण आग्रह स्वीकार कर लिया। कहते हैं, उस दिन के बाद फिर कोई मौत नहीं हुई। बस्ती मे धीरे-धीरे पुन: सुख-शाति लौट आई। पिता के मन पर मलूक के कर्तव्यपरायण विचारो और परमात्मा पर अडिग विश्वास तथा चमत्कारी कथन का बड़ा गहरा प्रभाव पडा।

सत्य के व्यापार में भगवान के दर्शन

मलूकदास जैसे-जैसे बडे होते गए, पिता सुंदरदास की चिता बढने लगी कि मलूक न तो पढाई ही कर सका और न कोई जिम्मेदारी अनुभव करता है। अत: उन्होंने मलूक को अपने कबल बेचने के व्यापारिक कार्य में लगाने के लिए प्रयत्न किया। उसे कंबल बेचने को दिए, पर मलूक ने उनको यहां भी लाभ नहीं दिखाया, बल्कि **दीन-दुखियों में मुफ्त में कंबल बांट आते।** या कभी साधु-संतो की सेवा में ही आए हुए धन को खर्च कर आते। एक दिन गर्मियों की ऋतु में भटकते हुए दोपहर हो गई और एक भी कबल न बिका। ऊपर से कंबलों के गट्ठर का भारी बोझा ढोते-ढोते वह पसीना-पसीना

हो गए। घर-वापसी की सोची। रास्ते मे एक छायादार पेड़ के नीचे थोडा सुस्ताने के लिए रुके। मलूक की आख लग गई। थोड़ा आराम के बाद आंख खुली, तो देखा, एक जवान मज़दूर सामने खडा है। 'आप थक गए हैं। कहे तो मैं आपका यह बोझा आपके घर पहुचा दू? आप एक टका मजदूरी दे देना।' कहते हुए बिना उत्तर की प्रतीक्षा किए उसने बोझा उठाया कंधे पर और चल दिया। मलूक भी सोचते तो थे कि बोझा बहुत भारी है और थकान तथा गर्मी के मारे बुरा हाल है, पर वह कुछ भी उत्तर की प्रतीक्षा किए इस मजदूर की तत्परता पर थोड़ा ठिठके ज़रूर, फिर पीछे-पीछे चल दिए। मजदूर तेजी से चलता हुआ पहले पहुंचा और दरवाज़ा खटखटाया। मलूक की माता ने दरवाजा खोला। 'यह गट्ठर मलूकदास ने भेजा है। वह पीछे आ रहे हैं। इसे रख लें।' कहकर वह चलने को हुआ, पर माता ने उसे कुछ खा लेने के बहाने से रोका और कोठरी मे बैठाकर खाने को गुड़ और रोटी दी तथा बाहर से कोठरी का कुंडा चढा दिया। इतने मे मलूकदास भी वहा आ पहुचे। माता ने क्रोध में भरकर कहा, 'यह किसके हाथ तूने कंबलों का गट्ठर दे दिया? यदि बीच मे से कुछ कबल निकाल लिए हों, तो तू क्या करेगा? मैंने उसे कलेवा के बहाने कोठरी में बैठा दिया है। तू इतने मे अपने कबल गिन कर संभाल ले।' मलूक ने कंबल गिने, पूरे थे। तब उन्होंने कोठरी का दरवाजा खोला। देखा तो भीतर कोई नहीं था। बस, रोटी का एक टुकडा पड़ा था। अब की बार माता भी चकित हुई कि वह मज़दूर कहां चला गया? उसे तो भीतर बैठाकर बाहर से कुडा चढ़ा दिया था। मलूक समझ गया। उसने वह रोटी का टुकड़ा उठाकर खा लिया और कहा, 'मा, तुम बड़ी भाग्यवान हो, जो प्रभु के दर्शन पा गई। वह मजदूर और कोई नहीं स्वय भगवान थे, जिन्हें तुमने कोठरी मे बद कर दिया था।' इतना कहकर मलूकदास स्वय उसी कोठरी में बैठ गए और मां से बोले कि 'जब तक मैं न कहूं, तब तक बाहर से दरवाजा नहीं खोलना। किसी को भीतर आने भी नहीं देना।' अब भगवान से मलूक प्रार्थना करने लगे कि 'मुझे दर्शन दो प्रभु, मैं अज्ञान मे रहा। तुम्हें पहचान नहीं पाया था।' कहते हैं, तीन दिन भूखे-प्यासे मलूक बैठे पुकार करते रहे। अंततः प्रभु ने उनकी प्रार्थना स्वीकार की। उन्हें भक्त मलूक की हठ के आगे झुकना पडा। कोठरी अद्वितीय प्रकाश से जगमगा उठी। मलूक ने भगवान के दर्शन किए और तब कोठरी से बाहर आए। इस बात के चर्चे दूर-दूर तक फैलने लगे। मलूकदास के संत स्वभाव और चमत्कारी घटनाओ से उनकी ख्याति बढती गई।

पारखी गुरु ने सच्चे हीरे की पहचान की

अब मलूकदास 'बाबा' कहे जाने लगे। उन्हें परमात्मा की अनुभूति ही नहीं, साक्षात् दर्शन भी हुए। मलूकदास के दोहे और पद, जो वह अपनी मौज में कहते, घर-घर में प्रसिद्धि पाने लगे थे। इन्हीं में धर्म की अति सरल व्याख्या, दो पक्तियों की, हर जिह्वा पर छा गई

भूखेहि टूक प्यासेहिं पानी। एहि भगति राम मनमानी।।

निर्धनों की दुर्दशा देखकर उनकी अंतरात्मा से पुकार उठी कि भूखों को रोटी का टुकडा देना और प्यासे को पानी पिलाना भक्ति के मूल आधार हैं, जिससे राम प्रसन्न होते हैं। इन्हीं दिनो की बात है कि उनके गांव के बाहर मुरार स्वामी नाम के संत ने अपने नौ सौ शिष्यों के साथ डेरा डाला। मलूकदास अपने चुने हुए कुछ भक्तों के साथ उनके दर्शनों के लिए गए। आदर के साथ उन्हें अपने आश्रम पर ले आए और आवभगत मे जुट गए। कहते हैं कि मलूकदास के आश्रम में केवल बीस सेर चावल डालकर खिचड़ी रांधी गई और उसे मुरार स्वामी के नौ सौ शिष्यों ने भी खाया और प्रसाद के रूप में भक्तों में भी बांटी गई, तो भी खिचड़ी कम नहीं हुई । कडा तथा आसपास के हजारो लोगो ने खिचड़ी खाई। देगची में खिचड़ी कम नहीं पडी, बल्कि अंत तक बची रही और स्वाद मे छप्पन व्यंजनो को भी यह खिचड़ी मात करती थी। इस खिचड़ी की चर्चा चारों ओर फैल गई। मुरार स्वामी कोई महीना-भर वहां रहे और फिर प्रयाग के लिए जब विदा होने लगे, तो उन्होने मलूकदास को अपना शिष्य बनाते हुए मलूक के सिर पर पगड़ी बांध दी और उन्हें द्वाराचार्य के महत्त्व के पद पर आसीन कर दिया। इससे गुरु मुरार स्वामी के शेष शिष्य ईर्ष्या करने लगे, किंतु कोई कुछ बोला नहीं। गुरु मुरार स्वामी समझ गए। प्रयाग मे उन्होंने त्रिवेणी तट पर डेरा जमाया था। वहा ऐसा सयोग हुआ कि किसी शिष्य को भिक्षाटन में या दान के भडारे में कुछ भी अन्न न मिला। तीन दिन तक लगातार यही घटना होती रही। शिष्यों में बडी निराशा और परेशानी बढी। तब गुरु मुरार स्वामी ने शिष्यों के सामने मलूकदास के पास संदेश भेजा, संदेश भी कैसे भेजा, वह गंगा जी के तट पर खड़े हो गए, आंखें बंद कर लीं। बस, कहते हैं, उधर मलूकदास के पास गुरु का संदेश पहुच गया। उन्होंने एक थैली में रुपए रखकर, साथ एक पत्र भी लिखकर रख दिया और गंगा में थैली डाल दी। प्रातः मुरार स्वामी स्नान करने गंगा जी के जल में उतरे, तो उनके हाथ वह थैली लगी। उन्होंने अपने शिष्यों को दिखाते हुए वह थैली खोली और कहा कि 'लो, सारी विपत्ति टल गई। मलूक ने रुपए भेजे हैं और साथ ही पत्र भी।' यह चमत्कार देखकर शिष्यों को विश्वास हो गया कि गुरु मुरार स्वामी ने क्यो मलूकदास को उन सबसे अधिक और ऊंचा सम्मान दिया है। उन सबने माना कि मलूक सचमुच इस सम्मान के योग्य हैं।

अकाल को सुकाल बना दिया

सत मलूक से थोडा पहले कड़ा में एक प्रसिद्ध सूफी संत हुए ख़्वाजा कड़क शाह। उनके चमत्कारी व्यक्तित्व की धूम दूर-दूर तक फैली थी। एक बार वह बाज़ार से गुजर रहे थे तो उन्होने देखा कि एक धोबी अपने गधे को बड़ी बेरहमी से पीट रहा है। ख़्वाजा उसे देखकर खड़े हो गए। धोबी ने उनकी साभिप्राय दृष्टि को समझकर भी गधे को

पीटना जारी रखा। गधे ने हाकिम के धुलने आए वस्त्र फाड दिए थे। इससे धोबी उसे पीट रहा था। ख़्वाजा ने उसे ऐसा करने से रोका, पर वह नहीं रुका। तब ख्वाजा एक मूक पशु को पिटता देख क्रोध से भर गए और जोर से धरती में पाव मारा। वहा एक गड्ढा बन गया और वहा से पानी का फव्वारा बह निकला। ख़्वाजा तो वहां से चले गए किंतु फव्वारा और तेज होता गया। धोबी का घर भी उस फव्वारे से बने पनाले की चपेट में आ गया। उसके बाद हर वर्ष वर्षा के दिनो मे पनाले का पानी बडी तबाही मचाने लगा। एक बार तो सात-आठ दिन पानी बरसता रहा। कड़ा के अनेक घरो मे पानी भर गया, खेत डूब गए। पशुओं तक के लिए चारा न मिल पा रहा था। लोग बाबा मलूकदास के पास आए। उनका कष्ट सुनकर बाबा सोच मे डूब गए, फिर कुछ सुझाव दिए। उनके अनुसार कुछ मज़दूर बुलाए गए। लोग स्वयं भी तैयार हुए। ईंटे मगवाई गई ताकि पनाले को बांधा जा सके, पर लोग ईंटें डालते तो वे बह जातीं, फिर कुछ मुसलमानो ने भी बाधा डालनी चाही कि हमारे ख़्वाजा पीर के पांव मारने पर निकले पनाले को बद करना ख्वाजा का अपमान है। बाबा ने उन्हें समझाया कि 'पीर-फ़कीरो का जीवन ही लोगो की भलाई के लिए होता है। इस नाले से पूरी बस्ती के लोग बडे कष्ट मे हैं। इसे बाधने से सबका कष्ट दूर होगा, तो ख़्वाजा पीर खुश ही होंगे।' उन्होने ये शब्द भी कहे, जिन्हें सुनकर वे लोग शांत हो गए—

मलूका सोई पीर है, जो जाने पर-पीर।
जो पर-पीर न जानई, सो काफ़िर बे-पीर।।

बाबा ने स्वयं पनाले के स्थान पर जाकर कुछ ईंटें उठाकर लोगों को दीं और कहा कि पहले इन ईंटों को लगाओ। जैसे ही ईंटे लगाई गईं, वे जमने लगीं। देखते ही देखते वह नाला बांध दिया गया। अब विरोधी भी बाबा के मुरीद बन गए। नाले से होने वाली हर वर्ष की तबाही भी रुक गई। पशुओं को भरपूर चारा मिलने लगा। खेत भी उजडने से बचने लगे। बाबा की प्रसिद्धि और भी अधिक फैल गई।

कोढ़ी को जीवनदान और धर्म की दीक्षा

लालचंद नाम का एक धनाढ्य कायस्थ था। प्रयाग में उसके पुरखों की बडी सपत्ति थी। लालचंद ने सारा धन सुर, सुरा और सुंदरियो की भेंट चढा दिया। तिस पर उसे हाथो-पैरो मे कोढ़ फूट आया। उसके तीन पुत्र थे, पर अब उन तीनो ने ही निर्धनता और रोग मे उसका साथ छोड दिया था। लालचंद दर-दर का भिखारी हो गया। सब उससे नफ़रत करते।

पूर्णिमा की रात थी। बाबा मलूकदास के परम भक्त लाला गोपालराम खत्री ने मलूकदास की रसोई बनवाई। भोज के बाद फेंकी जूठी पत्तलें आदि एक व्यक्ति बीन-बीनकर जूठन खा रहा है। यह देख गोपालराम उसके पास गए। यह उनके बचपन

का साथी लालचंद निकला। गोपालराम को बड़ा दुःख हुआ। वह उसे बाबा मलूक के पास ले आया। बाबा ने करुणापूर्ण नज़रों से उसे देखा और अपने आश्रम में ठिकाना दिया। स्नान करवाया। वस्त्र पहनाए। अपने हाथों उसके घावों पर मरहम लगाया। तीन-चार दिनों में ही लालचंद के घाव ठीक हो गए। वह बाबा जी का भक्त बन गया। बाबा ने उसका नाम दयालदास रखा। बाद में गोपालराम और दयालदास ने काबुल और इसफ़ाहाबाद में जाकर बाबा की गद्दी स्थापित की।

औरंगज़ेब ने मलूकदास की सिद्धि को स्वीकार किया

मुगल बादशाह औरंगज़ेब बडा ही कट्टर था। उस तक बाबा मलूकदास की ख्याति पहुंची तो उसने अपने तीन सिपाहियों को भेजा कि बाबा जिस भी हालत में हों, उन्हें तुरंत मेरे सामने पेश किया जाए। उन तीन सिपाहियों में से एक बडा धूर्त प्रकृति का था। दो भलेमानुष थे। पहले ने सोचा कि बाबा जी जिस हालत में होंगे, उन्हें उसी हालत में जबरदस्ती पकड़ लाएंगे, किंतु संयोग कहिए या संत का अनिष्ट सोचने की सज़ा, यह पहला सिपाही रास्ते में ही मर गया। शेष दो आश्रम में पहुंचे। उन्होने बादशाह का फ़रमान कह सुनाया। बाबा ने दूसरे दिन प्रातः उनके साथ जाना तय किया। प्रथम दिन सायंकाल के सत्संग में जब सब लोग मग्न हो गए तो बाबा अपना चदरा ओढ़कर अंतर्धान हो गए और दिल्ली पहुंच गए। शाही महल में बादशाह अपनी बेगम के साथ जहां हवाखोरी कर रहा था, बाबा उधर जा निकले। अजनबी व्यक्ति को पूर्व सूचना के बिना अपनी ओर आता देख बादशाह चकित हुआ और पूछा, 'तुम कौन हो?' बाबा ने उत्तर दिया, 'वाह, बादशाह हुक्म देकर इतनी जल्दी भूल गया? मैं मलूकदास हूं, जिसे तुमने बुलवाने भेजा है।' बादशाह ने उन्हें अदब से बैठाया। बेगम वहां से हट गई। बादशाह ने उनकी जाति पूछी, तो उन्होंने जवाब दिया कि 'फ़कीरों की कोई जाति नहीं होती।' इतने में मस्जिद से मुल्ला की अज़ान सुनकर औरंगज़ेब वहीं पास ही एक कुएं के पास गया, जिसकी जगत पर मोटा-मज़बूत कपड़ा बंधा था, और उस पर खड़ा होकर नमाज़ पढ़ने लगा। जब वह नमाज पढ़कर आया, तो मलूकदास ने कहा, 'बादशाह, तू तो नमाज पढ चुका। अब मुझे भी अपने भगवान को याद करना है।' इतना कहकर मलूक भी उसी कुए के निकट गए, जगत पर शून्य में ही बिना किसी आधार के आसन लगाकर बैठ गए और कहा, 'खुदा की इबादत मे कपडे का पर्दा भी क्यो रखा जाए?' औरंगज़ेब चकित तो हुआ, पर सोचा, इस फ़कीर ने करिश्मा करके मेरी नज़र को लगता है, बांध दिया है। इसके बाद उसने कहा, 'बाबा जी, आप भी क्या यह बात मानते हैं कि अल्लाह एक है और उसकी कोई शक्ल नहीं होती, फिर हिन्दू इतनी शक्लें बनाकर बुतपरस्ती क्यों करते हैं? यह तो कुफ़्र है।'

बाबा मलूकदास ने सहज भाव से उत्तर दिया, 'यह बात ठीक है कि अल्लाह एक है। इसमें दो राय हो ही नहीं सकती, पर वही एक ही तो ज़र्रे-ज़र्रे में तथा सबमें समाया

हुआ है। सबमे उसी का नूर है, तो फिर उसे सबके रूप में देखना कुफ़्र कैसे हो गया? क्या किसी ने या आपने अल्लाह को सीधे देखा है? जब सीधे नहीं देखा, तो इन पशुओ, पक्षियो, मनुष्यों या अन्य अनेक रूपों मे देखना भी बुरा क्यो है? सबमें उस एक अल्लाह के नूर को देखना भी धर्म ही है। हां, अल्लाह के नाम पर बंदे-बंदे में भेद करना कुफ़्र है।'

औरगज़ेब इन तर्कों के सामने निरुत्तर हो गया। उसने बाबा की और परीक्षा लेने के लिए भोजन के लिए पूछा, 'तब क्या आप हमारे यहा भोजन लेगे?'

'हां-हां, क्यो नहीं।' बाबा ने उत्तर दिया। खाना मगवाया गया। भोजन में मांस परोसा गया था, पर बाबा के सामने रखकर जब ऊपर से कपड़ा हटाया गया, तो नीचे चमेली के फूल महक रहे थे। बादशाह ने पुनः भोजन मंगवाया, यह समझकर कि शायद कोई भूल हो गई हो। इस बार भी कपडा हटाया और देखा, तो थाली मे राख ही राख पडी थी। अबकी बार बादशाह की नज़रें नीची हो गईं। बाबा ने व्यंग्य में पूछा, 'ऐ बादशाह, क्या तेरे यहा फ़कीरो को राख खिलाई जाती है?'

बादशाह ने उत्तर दिया, 'बाबा, आप तो फ़कीर हो। आपके लिए तो सबकुछ खाक है, राख है।'

तब बाबा ने निम्नलिखित पद कहा—

नाम हमारा ख़ाक है, हम ख़ाकी बंदे।
ख़ाकहिं ते पैदा किये, अति ग़ाफिल गंदे।।
कबहुं न करते बंदगी, दुनिया में भूले।
आसमान को ताकते, घोड़े चढ़ि फूले।।
जोरू लड़के खुश किये, साहेब बिसराया।
राह नेकी की छोड़ि के, बुरा अमल कमाया।।
हरदम तिसको याद कर, जिन वजूद संवारा।
सबे ख़ाक-दर-ख़ाक है, कुछ समझ गंवारा।।
हाथी घोड़े ख़ाक के, ख़ाक ख़ानख़ानी।
कह मलूक रह जायेगी, औसाफ़ निसानी।।

बाबा ने थाली मे से एक चुटकी राख उठाई और फूंक मारकर आकाश में उड दी। खाक उडते ही तेज़ आंधी बहने लगी। आंधी इतनी गहरी हो गई कि कुछ भी दिखा न देता था। तब आलमगीर औरगज़ेब और बेगम ने बाबा से क्षमा मांगी और भविष्य मे किसी फ़कीर को तग न करने, उसकी परीक्षा न लेने का वचन दिया। बाबा प्रसन्न हुए आंधी रुक गई। तब बादशाह ने बाबा से कहा, 'आप हमें कुछ ख़िदमत बताएं। हम आपकी क्या सेवा करें?'

'हम फकीरों को किसी बात की कमी नहीं होती। हां, तुम उन दो सैनिकों के ऊचे ओहदे लिख दो, जिन्हे मेरे पास भेजा था।'

बादशाह ने उसी समय एक परवाना तैयार करवाया। हिन्दुओ पर लगा जज़िया (धार्मिक टैक्स) कड़ा से हटा दिया और दोनों सैनिको के लिए एक-एक सूबा बख्श दिया तथा आश्रम के नाम सिराथू और ख़्वाजा जगीपुर के दो गाव भी लिख दिए।

बाबा वहां से अंतर्धान होकर पुनः अपने आश्रम कड़ा में प्रकट हो गए। चदरा उतारकर अलग रख दिया और सत्संग मे सम्मिलित हो गए। प्रातःकाल बाबा ने उन दोनों सैनिकों को बुलाकर बादशाह के फ़रमान दिए। वे दोनों भौचक रह गए। उनमें से एक सैनिक फ़रमान लेकर बाबा के चरणों में नमस्कार करके चला गया, पर दूसरे सैनिक फतेह खां ने फ़रमान फाड़कर फेंक दिया और बाबा के पैरों में बैठकर बोला, 'अब मैं इन चरणों को छोड़कर कहीं नहीं जाऊंगा। अब मुझे और किसी बादशाह की मेहरबानी की ज़रूरत नहीं।' बाबा ने उसे प्यार से उठाया। दीक्षा दी। उसका नामकरण किया। हिंदुओं का प्रिय नाम 'माधव' और मुसलमानों का प्रिय नाम 'मीर' लेकर 'मीरमाधव' नाम दिया। मीरमाधव बाबा का अनन्य भक्त बन गया। पूरा जीवन बाबा की सेवा मे रहा। बाद में भी उनके नाम का प्रचार करता रहा। आज भी उसकी समाधि बाबा मलूकदास की समाधि के बगल में बनी हुई है। राष्ट्रीय एकता, सांप्रदायिक सद्भावना का यह एक पवित्र तीर्थ है।

बाबा मलूकदास की काया संवत वैशाख बदी चतुर्दशी (दिन बुद्धवार) 1739 को सिंह लग्न बिताकर 108 वर्ष की आयु में पंचतत्व में विलीन हो गई। 'परिचयी' के अनुसार—

संवत सत्रह सौ उन्तालिस बुद्धवार तिथि आय।
चतुर्दशी वैशाख बदी सिंह लगन बिताय।।
समाधान सबको कियो नाना रूप दिखाय।
गुरु मलूक निज धाम को चले निसान बजाय।।

उस समय तक उनकी प्रसिद्धि दूर-दूर तक फैल चुकी थी और भक्तों तथा उनकी गद्दियो का विस्तार भी अनेक प्रदेशों में हो चुका था। गुजरात, गंगानगर, काबुल, कधार, नेपाल, मुल्तान, झबुआ, इसफाहाबाद, श्रीकाकुलम, द्राविड देश मद्रास (अब तमिलनाडु) आदि में गद्दिया स्थापित होने के विवरण एवं प्रसिद्धिया व प्रमाण मिलते हैं। बाद में जगन्नाथपुरी में भी उनका मठ निर्मित हुआ, जो आज भी विद्यमान है और श्रीकाकुलम गद्दी के अंतर्गत आता है। इन गद्दियों की व्यवस्था उनके सुयोग्य शिष्यों सर्वश्री रामदास, उदयदास, सुदामादास, गरीबदास, हाथीराम, गोपालराम, मोहनदास, पूरनदास, बिहारीदास, सारंगदास, दयालदास और केशवदास कर रहे थे। कड़ा, प्रयाग की गद्दी उस समय सर्वाधिक प्रतिष्ठित एवं प्रसिद्ध थी।

कहते हैं, बाबा जी की काया क्षीण होने लगी तो शरीर त्यागने से छह माह पूर्व उन्होंने इसे छोडने का निर्णय ले लिया। अपने उत्तराधिकारी को नियुक्त करने की चिंता हुई। सभी शिष्यों को दुखी देखकर उन्होंने समझाया कि सतगुरु को जानना-पहचानना ही साधना का लक्ष्य होना चाहिए। मेरा इस सतगुरु से मिलना हो गया। जब से यह मिलन घटित हुआ है, तब से वही वह है, मैं नहीं हूं, फिर तुम्हे भी चिता क्यो करनी चाहिए। उन्होंने अपने भतीजे रामसनेही से गद्दी संभालने को कहा और उसे अपनी ताकत और शक्तियां बख़्श दीं। तब सभी अन्य बारह प्रमुख चेलो ने रामसनेही को मत्था टेका और उनकी सेवा मे आए। बाबा की पत्नी और पुत्री का देहात बहुत पहले ही हो चुका था। बाबा ने देह छोडने से पूर्व अपने चेलो और प्रमुख भक्तों को ज्ञान देते हुए यह पद कहा--

हमरा सतगुरु बिरला जानै।
सुई की नोक सुमेर चलावै, सो यह रूप बखानै।।
की तो जानै दास कबीरा, की हरिनाकस पूता।
की तो नामदेव और नानक, की गोरख अवधूता।।
हमरे गुरु की अद्‌भुत लीला, ना कछु खाय न पीवै।
ना वह सोवे न वह जागै, ना वह मरै न जीवै।।
बिन तरवर फल फूल लगावै, सो तो वाका चेला।
छिन में रूप अनेक धरत है, छिन में रहै अकेला।।
बिन दीपक उजियारा देखै, एड़ी समुंद थहावै।
चींटी के पग कुंजर बांधे, जाको गुरु लखावै।।
बिन पंखन उड़ि जाय अकासे, बिन पंखन उड़ि आवै।
सोई सिष्य गुरु को प्यारा, सूखे नाव चलावै।।
बिन पायन सब जग फिरि आवै, सो मेरा गुरु भाई।
कहै 'मलूक' ताकी बलिहारी, जिन यह जुगत बताई।।

कहते हैं, जब देह छोड़ने का दिन आया, तो बाबा ने सब चेलो और भक्तो को कह कि दो पहर दिन गए जब तुम्हारे अंतर में घटा और शंख की ध्वनियां सुनाई देवे तो समझ लेना कि हमने चोला छोड़ दिया और यह भी कहा कि हमारे शरीर को जलाना नहीं, बल्कि गंगा जी की धारा मे प्रवाहित कर देना। अतः उनके आदेश के अनुसार ही किया गया और कडा में उनकी समाधि बना दी गई।

कहते हैं कि गंगा के प्रवाह मे बहता हुआ बाबा का शरीर पहले प्रयाग के घाट पर रुका। वहा घाट पर रहने वाले से पानी मांगकर पिया। वहां से पुनः पानी में उतरकर डुबकी मारी और काशी मे जा निकला वहा भी पानी पिया और कलम दवात मंगाकर

यह भी लिखा कि यहां मलूका काशी मे पहुंचा और अपनी पहुंच दर्ज कर दी। काशी से पुनः पानी मे उतरकर डुबकी ली और जगन्नाथपुरी मे जा पहुचे। जगन्नाथपुरी में जगन्नाथ के पंडों को स्वप्न आया कि समुद्र-तट पर एक अर्थी है, उसे उठा लाओ। पंडे अर्थी उठा लाए और उसे भगवान जगन्नाथ की मूर्ति के आगे रख दिया। स्वय सब बाहर चले गए। मंदिर के द्वार बाहर से बंद कर दिए। कहते हैं, तब बाबा ने जगन्नाथ जी से प्रार्थना की कि हमारे विश्राम के लिए आपके पनाले के निकट स्थान दिया जाए, और कि आपके भोग के दाल-चावल के पछोरन, किनका का रोट और तरकारी के छीलन की भाजी मिले। जगन्नाथजी ने इसे स्वीकार कर लिया और कहा कि हमारे भोग से भी अधिक स्वाद तुम्हारे भोग में होगा। तब से आज तक मलूकदास के नाम का रोट जारी है। यह रोट यात्रियों को जगन्नाथ जी के प्रसाद के साथ दिया जाता है और मलूकदास जी का स्थान भी अब तक समुद्र-तट पर विद्यमान है, जहा लोग आदर सहित मत्था टेकते हैं।

मलूकदास जी के ये शब्द कितने मार्मिक और यथार्थ हैं, जिन में भूखे-प्यासे मनुष्य के प्रति करुणा भरी हुई है—

भूखेहि टूक, प्यासेहिं पानी,
एहि भगति राम मन मानी।

संत मलूकदास जी के पीठाचार्यों की नामावली—

1 महंत रामसनेही
2. महंत कृष्णसनेही
3 महंत ठाकुर दास
4. महंत गोपाल दास
5. महंत कुंजबिहारी दास
6. महंत राम सेवक
7. महंत शिव प्रसाद दास
8. महत गगा प्रसाद दास
9 महत नद सुमेर दास
10 महंत अयोध्या प्रसाद
11. महंत कृष्ण प्रसाद
12. महत बृज लाल
13 महत पन्ना लाल
14 महत योगिराज नानकचंद (वर्तमान)

अनुक्रम

मलूक दोहावली

कुछ चुने हुए विशिष्ट दोहे

राम सुमिर ले रे मना, बिरथा न जन्म गँवाउ।
औसर बीता जाता है, बहुरि न ऐसा दाँउ।।

राम भजन कर लेहि मन, जब लगि तन कुसलात।
नदी नीर ज्यौं जन्म पद, मारू मारू किये जात।।

रामहिं सुमिरहु रैन दिन, छाँड़ि कर्म फल आस।
संतन की सेवा करत, मिलिहैं हरि सुख रास।।

अब सागर के तरन को, है हरि नाम अधार।
सो बिसरायो सहज ही, रे मन मूढ़ गंवार।।

मेरो कछु न जाइहै, अंत सोई पछताइ।
जो हरि नाम बिसारिहै, वादि क्रोध लपटाइ।।

व्याकुल भया बिनती करी, राखहु सरनि मुरारि।
मोरे कछु न बसात है, लीजै मोहि उधारि।।

क्रोध तो काला नाग है, काम तो परगट काल।
आपु आपु को ऐंचते, करि डारा बेहाल।।

एक कनक अरु कामिनी, ए दोऊ बटमार।
मीठी छूरी लाइ के, मारा सब संसार।।

उपजत बिनसत थकि परा, जिया उठा अकुलाइ।
कहै मलूक बहु भरमिया, अब नहिं भरमा जाइ।।

अंत एक दिन मरहुगे, गलि गलि जैहैं चाम।
ऐसी झूठी देह ते लेहु न साँचा नाम।।

सुंदर देही पाइ के, मत कोइ करै गुमान।
काल दरेरा खायगा, क्या बूढ़ा क्या ज्वान।।

सुंदर देही देखि कै, उपजत है अनुराग।
मढ़ी न होती चाम तो, जीवत खाते काग।।

इस जीने का गर्व क्या, कहा देह की प्रीत।
बात कहत ढह जात है, ज्यों बालू की भीत।।

मरने मरनै भाँति हैं, जो मरि जानै कोइ।
राम द्वारे जो मरै, बहुरि न मरना होइ।।

मुवा मुई को ब्याहता, मुवा ब्याहि कै देइ।
मुए बरातहिं जात हैं, मुवा बधाइ लेइ।।

इन की यह गति देखि के, जहँ तहँ फिरौं उदास।
अजर अमर प्रभु पाइया, कहत मलूकादास।।

भजि ले चरन मुरारि के, जीती सार न हारु।
कहै मलूक हरि चरन बिनु, जनमि मुए कै बार।।

कहत मलूक सपूत सो, जो भगति करै चित लाइ।
जरा मरन ते बीच परै, अजर अमर होइ जाइ।।

पसु पंछी तिनते भले, जो हरि सुमिरत नाहिं।
जीवन ही भूतन भजैं, ते नर नरकहिं जाहिं।।

जा घर भगति न भागवत, संत नहीं मेहमान।
ता घर जम डेरा कियो, जिय तेहि परो मसान।।

हाक सुनी गजराज की, चौधाये बृजराज।
गोली लागै पहिले ही, पाछे होत अवाज।।

दया धरम हिरदै बसै, बोले अमृत बैन।
तेइ ऊँचे जानिये, जिनके नीचै नैन।।

भेदी होइ सो जानै, नट बाजी संसार।
झूठे नाते जगत के, ताते मात सुत नार।।

और सकल सब धंध है, साँचा तू करतार।
जग फुलवारी ज्यों रची, तिन बहु रंग सँवार।।

अंत न तेरा लखि परै, अलख निरंजन राइ।
आसा तृस्ना लाइ तिन, दिया जगत भरमाइ।।

सब घट मेरा साइंया, दुतिया भाउ बिसारि।
हित सों पूजा कीजिए, मन बच कर्म बिचारि।।

जाति हमारी आतमा, नाम हमारा राम।
पाँच तत्व का पूतरा, आइ किया विश्राम।।

मानि लेहु हरि आरती, भइ मोते बड़ि चूक।
एक बार करि दो छिमा, तेरो दास मलूक।।

सुनत पतित हरि को विरद, अधम उधारन हार।
अब कोउ नहिं अटकिहै, मोसौं उतरो पार।।

ध्यान धारि निज रूप को, काया कीजै भेंट।
छूट जाय भय काल को, हरि सों बाढ़ै हेत।।

प्रीतम राम सँभारिये, मन बच कर्म बिचारि।
मीत कन्हाई भगत का, भाषत वेद पुकारि।।

हरि दरसन के चाउ ते, लागी हरि सों प्रीति।
बिसरी कुल मरजाद सब, प्रेम अटपटी रीति।।

प्रेम भगति उर आनि कै, निज सरूप धरि ध्यान।
अपनो विरद सँभारि कै, तब मिलिहैं भगवान।।

महिमा प्रेम भगति की, बरनौं कहा विशेष।
सो हरि देखौं नैन भरि, जाकौ रूप न रेख।।

षट दरसन दरवेस पुनि, संन्यासी भगवान।
प्रेम बिना पहुँचै नहिं, दुर्लभ पद निर्वान।।

प्रेम परम पद पाइये, प्रेम उतारै पार।
प्रेम भगति की महिमा, श्री मुख कही मुरारी।।

प्रेम भगति नहिं छँड़िये, जब लगि घट में प्रान।
जासों हित कीन्हें मुझे, आइ मिले भगवान।।

प्रेम प्रीति सों आरती, कीजै बारम्बार।
आरती आरतवंत की, सहि नहिं सकत मुरारि।।

प्रेम भगति जाके घट, पूरन ग्यानी सोइ।
कह मलूक जल तरंग ज्यों, कहत सुनत में दोइ।।

जा हरि के दीदार को, भया दीवाना जीव।
सतगुरु की दया भइ, सहज मिला सो पीव।।

मैं चूँकी निरभय भया, आई मन परतीति।
धर्म-कर्म सब छुटि गया, लागी हरि सों प्रीति।।

सोवत राम प्रताप अब, जागि मरै बलाइ,
उपजो ब्रह्मानंद सुख, दुख सब गये बिलाइ।।

तीन लोक मे जानिया, बैठा भया सलूक।
गुरु गोविन्द किरपा करी, भया 'मलूक' मलूक।।

हृदय राम मन हरि बसै, रघुपति कीन्ह निबाहु।
दास मलूका यों कहै, भयो चोर ते साहु।।

घरी घरी हरि गुन रटत, गै सब विघन बिलाय।
दास मलूक सुखी भये, श्री गुरु राम सहाय।।

राम नाम पूजा मेरी, सुमिरन मेरे राम।
तीरथ गंगा आदि सब, मेरे हरि के नाम।।

संध्या तरपन सब तजे, तीरथ कबहुँ न जाउँ।
हरि हीरा हृदय बसै, ताहि पैठि अन्हवाउँ।।

वेद पुरान सासतर, पूजा क्रिया अचार।
एक पुरुष के आसरे, तजिये सब बेवहार।।

सर्ब व्यापक आत्मा, सतगुरु दियो बताइ।
अब क्यों पाती तोरि कै, प्रतिमा पूजौं जाइ।।

उहाँ न कबहुँ जाइये, जहाँ न हरि का नाम।
दीगम्बर के गाँव में, धोबी का क्या काम।।

राम राम के नाम को, जहाँ नहीं लवलेस।
पानी तहाँ न पीजिये, परिहरिये सो देस।।

दाग जो लागा नील का, सौ मन साबुन धोय।
कोटि बार समझाइया, कौआ हंस न होय।।

दु:खदायी सबतें बुरा, जानत हैं सब कोय।
कहत मलूक कंटक मुआ, धरती हलकी होय।।

माया मगन महन्त के, तुम मत बैठो पास।
कौड़ी कारन लड़ि मरै, कथनी कथै पचास।।

चार पहर दिन होत रसोई, तनिक न निकसत टूक।
कह मलूक ता मंदिर में, सदा रहत हैं भूत।।

आदर मान महत्त्व मत, बालापन को नेह।
ये चारों तब हीं गये, जबहिं कहा कछु देह।।

जेते सुख संसार के, इकठे किये बटोर।
कन थोरे काँकर घने, देखा फटक पछोर।।

हरि रस में नाहिं रचा, किया काँच ब्योहार।
कह मलूक वो ही पचा, प्रभुता को संभार।।

उतरे आये सराय में, जाना है बड़ कोह।
अटका आकिल प्रेम बस, ली भठियारी मोह।।

गर्व भुलाने देह के, रचि रचि बाँधे पाग।
सो देही नित देखि के, चोंच सँवारे काग।।

मलूक कोटा झाँझरा, भीत परी भहराय।
ऐसा कोई न मिला, जो फेर उठावै आय।।

जागो रे अब जागो भैया, सिर पर जम की धार।
ना जाने कौने घरी, कहि लै जइहै मार।।

कुंजर चींटी पशु नर, सब में साहेब एक।
काटे गला खोदाय का, करै सूरमा लेख।।

साधो दुनिया बावरी, पत्थर पूजन जाय।
मलूक पूजै आत्मा, कछु माँगै कछु खाय।।

कह मलूक हम जबहिं तें, लीन्हों हरि की ओट।
सोवत ही सुख नींद भरि, डारि भरम की पोट।।

जीवहुँ ते प्यारे अधिक, लागैं मोहीं राम।
बिनु हरि नाम नहि मुझे, और किसी से काम।।

किरतिम देव न पूजिये, ठेस लगै फूटि जाय।
कह मलूक शुभ आत्मा चारों जुग ठहराय।।

प्रेम नेम जिन न कियो, जीती नाहिं मैन।
अलख पुरुष जिन न लख्यौ, छारि परो तेहि नैन।।

पीर सभन की एक सी, मूरख जानत नाहिं।
काँटा चूभे पीर होय, गला काट कोउ खाय।।

राम नाम एकै रती पाप के कोटि पहार।
ऐसी महिमा नाम की, जार करै सब छार।।

राम नाम औषध करौ, हिरदै राखौ याद।
संकट में लौ लाइये, दूर करै सब व्याध।।

नाम जहाज बिना कोउ, भवजल अगम अपार।
तरि न सकै नारद सुक, निस्चै कियो विचार।।

ज्यों बनिया मन अगुआ, पूँजी हरि को ध्यान।
कहै मलूक यह लाभ बड़, भेंटो श्री भगवान।।

सब पानी को चूपरो, एक दया जग सार।
जिन पर आतम चीन्हिया, तेई उतरे पार।।

करै भक्ति भगवन्त की, कबहुँ करै नहिं चूक।
हरि रस में राँचो रहै, साँची भक्ति मलूक।।

सोई सूर सराहिये, जो लरै धनी के हेत।
पुरजा पुरजा कटि परै, तऊ न छाँड़ै खेत।।

जहाँ जहाँ बच्छा फिरै, तहाँ तहाँ फिरै गाय।
कहै मलूक जहाँ सन्त जन, तहाँ रमैया जाय।।

हरि की माया जग ठगै, ब्रह्मा विष्णु महेस।
सो अजीत प्रभु आपकी, धरो मोहनी भेस।।

कहो विवेक जग आइकै, मरना है निरधार।
पै हरि द्वारे जो मरै न, मरै दूजी बार।।

जेते देखे आतमा, तेते सालिगराम।
बोलनहारा पूजिए, पत्थर से क्या काम।।

आतम राम न चीन्हहीं, पूजत फिरैं पषान।
कैसहु मुक्ति न होयगी, केतिक सुनौ पुरान।।

देवल पूजे कि देवता, कि पूजे पहाड़।
पूजन को जाँता भला पीस खाय ससार

हम जानत तीरथ बडे तीरथ हरि की आस।
जिनके हिरदे हरि बसैं, कोटि तीरथ तिन पास।।

हरि निर्गुन क्यों बरनिये, एक अनेक परकार।
सोइ सब कुछ सब कुछ सोई, रहत सदा संसार।।

कारन जग को ब्रह्म है, और न कोऊ आहि।
यह प्रपंच सब ब्रह्म है, जानहु निस्चै ताहि।।

अनंत कोटि ब्रह्माण्ड धरि, सब विधि पूरत आस।
जानै अपनी आपु गति, कहत मलूकादास।।

कठिन पियाला प्रेम का, पियै जो हरि के हाथ।
चारों जुग माता फिरै, उतरै जिय के साथ।।

सब कोउ साहब बन्दते, हिन्दू मुसलमान।
साहब तिनको बन्दते, जिन का ठौर इमान।।

जे दुखिया संसार में, खोवौ तिनका दुक्ख।
दलिद्दर सौंपि मलूक को, लोगन दीजै सुक्ख।।

जो तेरे घट प्रेम है, तो कहि कहि न सुनाव।
अंतरजामी जानि हैं, अन्तरगत का भाव।।

भेष फकीरी जे करै, मन नहिं आवै हाथ।
दिल फकीर जे हो रहे, साहब तिनके साथ।।

मैं जाना मन मरि गया, तन करि डारा खेह।
इस मन की परतीत क्या, मारे अनेक विदेह।।

मन ही के संकल्प ते, भयो जो तन अभिमान।
सो छूटै जब कीजिये, ब्रह्म नदी असनान।।

हरि प्रसाद से पाइये, अस्थित पद निर्वान।
कह मलूक मन के मुए, होइ न आवा जान।।

हरि तो सों तेरे निकट, तू पुनि फिरत उदास।
मृग कस्तूरी नाभि में, फिर फिर ढूँढ़ै घास।।

नाभि बसै कस्तूरिया, मृग निज सुधि बिसराय।
भ्रम तो तरू बैली सकल, ढूँढ़ै बन-बन जाय।।

तरू बैली बन ढूँढ़ते, सो भ्रम नित अधिकाय।
जब थिर देखै आपु में, तब वह भ्रम नसि जाये।।

जौं तोहूँ ज्यों मृग भ्रमहिं, छाँड़ि धरइ हरि ध्यान।
कहै मलूक तो सहज ही पावै पद निर्वान।।

जरा मरन आवा गमन, पाप पुन्न संदेह।
जन मलूक के धनि प्रभु, भ्रम काटो करि नेह।।

हरि अनादि गति अविगति, निर्गुन सगुन प्रमान।
भगतन के हितकारी प्रभु, प्रगटत प्रीति समान।।

जो भाया सोई किया, करनहार समरत्थ।
काइ वाकि मन ते परे, कहो न जाइ सकत्थ।।

एकहिं अक्षर ते सकल, प्रकृति पुरुष विस्तार।
कह मलूक बहु विधि जगत, नामहि है निस्तार।।

कारन में कारज नहीं, कारन कारज माहिं।
स्थित घट में मृतिका, मृतिका में घट नाहिं।।

सब्द सरूपी पुरुष जो, करन करावन हार।
जैसे का तैसा भया, अविगत अगम अपार।।

यह घट है घट के सदृस, दस इन्द्री दस द्वार।
तिन के भीतर आहि मन, चंचल जल अनुहार।।

जो जल थिर भये आत्मा, गगन सदृस दरसाइ।
तासों दास मलूक कह, राखिब मनहिं लगाइ।।

नित्य निमित्य प्राकृत, अंतक प्रलै समान।
जैसे का तैसा रहा, कहै मलूक निर्वान।।

पद निर्वानहिं को गहै, करे कहि सकै विसेष।
रमित रूप नहिं लख परै, ताते नाम अलेख।।

छोटो बड़ो न घटि बढ़ि, आपुहिं सब प्रकास।
कहै मलूक अनादि हरि, साधन को विश्वास।।

पावै पद निर्वाण सो, जीवन मुक्ति रिसाल।
हरि संग हरि उर में रहै, हरि तेहि सदा दयाल।।

निरंकार अविनासी, प्रनवउँ दुह कर जोरि।
जाकी सरनि सदा सुख, भ्रमै नहीं मति मोरि।।

मन के आज आनंद है, बैठे भगतन पास।
इहै घरी लेखे परी, कहत मलूकादास।।

ठाकुर को बिसराइ मन, भूलत सपन समाज।
नाता लावत जागत में, आवत नाहीं लाज।।

हरि के जनम कर्म गुन, गावत होत प्रकास।
संकट निकट न आवई, कहत मलूकादास।।

परान पियारा पाहुना, घरि एक बिलवा आइ।
करिहौं सेवा भली विधि, न जानौं कब जाइ।।

बहुत काल भरमत भये, खोजत ब्रह्म भुलान।
आदि ब्रह्म हरि जागे, सूत्र सूत्र परवान।।

ना मैं भूत न देह हौं, नहिं इन्द्री विस्तार।
इनको मैं साक्षी सदा, याको नाम विचार।।

रहौं भरोसे राम के, बनिजहि कबहुँ न जाउँ।
दास मलूका यों कहै हरि बिरवै मैं खाउँ।।

माला जपौं न कर जपौं, जिभ्या कहौं न राम।
सुमिरन मेरा हरि करैं, मैं पायो विश्राम।।

ध्यान धारि गुरु रूप को, काया कीजै भेंट।
छूटि जाय भय काल को, बाढ़ै हरि सों हेत।।

प्रेम ग्यान जब होय दृढ़, रहै न भ्रम को लेस।
तब मलूक संसै बिना, क्या देइ गरू उपदेश।।

लघु दीरघ नहिं आतमा, सब में यों दरसाइ।
नभ में घट, घट माहिं नभ, घट मठ ह्वै न जाइ।।

जब जीवै निज मान तजि, धरै रूप निज ध्यान।
प्रेम भगति रस ऊपजै, सुनि अनहद धुनि कान।।

यह मलूक निरनै कियो, सकल शास्त्र-मत-सार।
भवसागर के तरन को, नामै है आधार।।

कह मलूक जब तें लइ, राम नाम की ओट।
सोवत हैं सुख नींद भरि, डारि भरम की मोट।।

नमो नमो पुनि पुनि नमो, नमो पुरुष भगवान।
अर्ध नाम जा के तरे, जल ऊपर पषान।।

मलूका संध्या तर्पन सब तजे, तीरथ कबहुँ न जाहिं।
हरि हीरा हिरदै बसे, ताहि पैठि अन्हवाहिं।।

सुनि श्रीगुरु के वचन जिउ, लागो करन विचार।
मन तारै मन बोरै, मनै उतारै पार।।

भजि मुरारी के चरन, तजि अहमेव अहंकार।
कहै मलूक या ते अधिक, नार्ही और विचार।।

नमो जगतपति जगतगुरु, जगन्नाथ जग राइ।
जग जीवन जग हित करन जग मनि मो जदु राइ

अभ्यास बिना पावै नहीं, सत चित ब्रह्म बिलास।
ताते ब्रह्म अभ्यास से, ब्रह्म भाउ होइ जाइस।।

मन याके हैं रूप द्वै, एक कनक एक नारि।
दोउ सेती प्रीति तजि, भजि हरि पद करू प्यार।।

रे मन सूता क्या करै, उठि भज चरन मुरारि।
जैसा सपना रैन का, तैसा यह संसार।।

राम सुमिरि रे मना, जो चाहत कुसलात।
अटके जग जंजाल में, जन्म सिरानो जात।।

राम नाम औषध करौ, हिरदै राखौ याद।
संकट में लौ लाइए, दूर करै सब व्याध।।

हम जानत तीरथ बड़े, तीरथ हरि की आस।
जिन के हिरदै हरि बसैं, कोटि तिरथ तिन पास।।

जब आए तुम जगत में, तब हँसिया सब कोय।
अब तुम ऐसी कर चलो, पाछै हँसी न होय।।

कल्पि डाहि जो लेत है या तें पाप न और।
कह मलूक तेहि जीव को तीन लोक नहि ठर।।

जो मन गया तो जान दे दृढ़ करि राखु सरीर।
बिन जिह चढ़ी कमान का क्या लागेगा तीर।।

शब्द भाग

सतगुरु महिमा

अब मैं सतगुरु पूरा पाया।
मन तैं जनम जनम डहकाया।।
कई लाख तुम रंडी छाँड़ी, केते बेटी बेटा।
कितने बैठे सिरदा करते, माया जाल लपेटा।।
कितने के तुम पित्र कहाये, केते पित्र तुम्हारे।
गया बनारस कर कर थाके, देत देत पिंड हारे।।
कई लाख तुम लसकर जोड़े, केते घोड़े हाथी।
तेऊ गये बिलाप छिनक मे, कोई रहा ना साथी।।
आवागमन मिटाया सतगुरु, पूजी मन की आसा।
जीवन मुक्त किया परमेसुर, कहत मलूकदासा।।

हमारा सतगुरु बिरले जानै।
सुई के नाके सुमेर चलावै, सो यह रूप बखानै।।
की तो जानै दास कबीरा, की हरिनाकस पूता।
की तो नामदेव और नानक, की गोरख अवधूता।।
हमरे गुरु की अद्‌भुत लीला, ना कछु खाय न पीवै।
ना वह सोवै ना वह जागै, ना वह मरै ना जीवै।।
बिन तरवर फल फूल लगावै, सो तो वा का चेला।
छिन में रूप अनेक धरत है, छिन में रहै अकेला।।
बिन दीपक उजियारा देखै, एड़ी समुंद थहावै।
चींटी के पग कुंजर बाँधै, जा को गुरु लखावै।।
बिन पंखन उड़ि जाय अकासे, बिन पंखन उड़ि आवै।
सोई सिष्य गुरु को प्यारा, सूखे नाव चलावै।।
बिन पायन सब जग फिरि आवै, सो मेरा गुरु भाई।
कहै 'मलूक' ता की बलिहारी, जिन यह जुगत बताई।।

नाम तुम्हारा निरमला, निरमोलक हीरा।
तू साहेब समरत्थ, हम मल मुत्र कै कीरा।।
पाप न राखै देह में, जब सुमिरन करिये।
एक अच्छर के कहत ही, भौसागर तरिये।।
अधम-उधारन सब कहैं, प्रभु बिरद तुम्हारा।
सुनि सरनागत आइया, तब पार उतारा।।
तुझ सा गरुवा औ धनी, जा में बड़ई समाई।
जरत उबारे पांडवा, बाव न लाई।।
कोटिक औगुन जन करै, प्रभु मनहि न आनै।
कहत मलूकदास को, अपना करि जानै।।

हरि समान दाता काउ नाहीं। सदा बिराजैं संतन माहीं।।
नाम बिसंभर बिस्व जियावै। साँझ बिहान रिजिक पहुँचावैं।।
देइ अनेकन मुख पर अैने। औगुन करै सो गुन कर मानैं।।
काहू भाँति अजार न देई। जाही को अपना कर लेई।।
घरी घरी देता दीदार। जन अपने का खिजमतगार।।
तीन लोक जाके औसाफ। जन का गुनह करै सब माफ।।
गरुवा ठाकुर है रघुराई। कहै मलूक क्या करूँ बड़ाई।।

सदा सोहागिन नारि सो, जा के राम भतारा।
मुख माँगे सुख देत हैं, जगजीवन प्यारा।।
कबहुँ न चढ़ै रंडपुरा, जानै सब कोई।
अजर अमर अबिनासिया, ता को नास न होई।।
नर देंही दिन दोय की, सुन गुरजन मेरी।
क्या ऐसों का नेहरा, मुए बिपति घनेरी।।
ना उपजै ना बीनसै, संतन सुखदाई।
कहैं मलूक यह जानि के, मैं प्रीति लगाई।।

नैया मेरी नीके चलन लागी।
आँधी मेंह तनिक नहिं डोलै, साहु चढ़े बड़भागी।।
रामराय डगमगी छोड़ाई, निर्भय कड़िया लैया।
गुन लहासि की हाजत नाहीं, आछा साज बनैया।।
अवसर पड़ै तो पर्बत बोझै, तहूँ न होवै भारी।
धन सतगुरु यह जुगत बताई, तिन की मैं बलिहारी।।
सूखे पड़ै तो कुछ डर नाहीं, ना गहिरे का संसा।
उलटि जाय तो बार न बाँकै, या का अजब तमासा।।
कहत मलूक जोबिन सिर खेवै, सो यह रूप बखानै।
या नैया की अजब कथा, कोई बिरला केवट जानै।।

प्रबोधन

मुरसिद मेरा दिल दरियाई, दिल गहि अंदर खोजा।
जा अंदर में सत्तर काबा, मक्का तीसो रोजा।।
सातो तबक औलिया जा में, भेद न होय जुदाई।
सम्स कमर ठाढ़े निजाम में, दरसै जहाँ खोदाई।।
हवा हिरिस खुदी में खोवा, अनल हक्क जहँ जानी।
बिन चिराग रोशन सब खाना, ता में तख्त सुभानी।।
बिना आब जहँ बहु गुल फूल, अब्र बिना जहँ बरसै।
हूर बिना सरोद सब बाजै, चस्म बिना सब दरसै।।
ता दरगाह मुसल्ला डारे, बैठा कादिर काजी।
न्याव करै सीने की जानै, सब को राखै राजी।।
जो देखै तो कमला होवै, तब कमाल पद पावै।
साहेब मिलि तब साहिब होवै, ज्यों जल बूँद समावै।।
तिस के पल दीदार किये तें, नादिर होय फकीरा।
मारे काल कलंदर दिल सों, दरदमंद धर धीरा।।
ऐसा होय तब पीर कहावै, मनी मान जब खोवै।
तब मलूक रोसन जमीर होय, पाँव पसारे सोवै।।

अबघू का कहि तोहि बखानों।
गगन मंडल में अनहद बोलै, जाति बरन नहिं जानों।।
अहो अहो मैं कहा कहों तोहि, नाँव न जानों देवा।
सुन्न महल की जुगति बतावे, केहि बिधि कीजे सेवा।।
तीरथ भरमै बड़े कहावैं, बाद करत हैं सोई।
अंधधुंध चल जात निरंजन, मर्म न जानै कोई।।
अबिगत गति तुम्हरी अबिनासी, घट घट रहत चलाया।
जहाँ तहाँ तेरी माया खेलै, सतगुरु मोहि लखाया।।
वेद पढ़ि पढ़ि पंडित माले, ज्ञानी कथि कथि ज्ञान।
कह मलूक तेरी अद्‌भुत लीला, सो काहूँ नहिं जाना।।

प्रार्थना

अब तेरी सरन आयो राम।।
जबै सुनिया साध के मुख, पतित पावन नाम।।
यही जान पुकार कीन्ही, अति सतायो काम।।
बिषय सेती भयो आजिज, कह मलूक गुलाम।।

साँचा तू गोपाल, साँचा तेरा नाम है।
जहवा सुमिरन होय, धन्य सो ठाम है।।
साँचा तेरा भक्त, जो तुझको जानता।
तीन लोक को राज, मनै नहिं आनता।।
झूठा नाता छोड़ि, तुझे लव लाइया।
सुमिरि तिहारो नाम, परम पद पाइया।।
जिन यह लाहा पायो, यह जग आइ कै
उतरि गयो भव पार, तेरो गुन गाई कै।।
तुही मातु तुही पिता, तुही हितु बंधु है।
कहत मलूकादास, बिना तुझ धुंध है।।

एक तुम्है प्रभु चाहौं राज।।
भूपति रंक सैंति नहिं पूछौं, चरन तुम्हार सँवारयो काज।।
पाँचों पांडव जरत उबारयो, द्रुपद सुता को राख्यो लाज।।
संत-बिरोधी ऐसो मारो, ज्यों तीतर पर छूटे बाज।।
तुम्हैं छोड़ि जाने जो दूजा, तेहि पापी पर परिहै गाज।।
कहैं मलूक मेरो प्रान रमइया, तीन लोक ऊपर सिरताज।।

प्रेम

कौन मिलावै जोगिया हो, जोगिया बिन रह्यो न जाय।।
मैं जो प्यासी पीव की, रटत फिरो पिउ पीव।
जो जोगिया नहिं मिलिहै हो, तो तुरत निकासूँ जीव।।
गुरुजी अहेरी मैं हिरनी, गुरु मारैं प्रेम का बान।
जेहि लागे सोइ जानई हो, और दरद नहिं जान।।
कहत मलूक सुनु जोगिनी रे, तनहिं में मनहिं समाय।
तेरे प्रेम के कारने जोगी, सहज मिला मोहि आय।।

तेरा मैं दीदार-दिवाना।
घड़ी-घड़ी तुझे देखा चाहूँ, सुन साहेब रहमाना।।
हुआ अलमस्त खबर नहिं तन की, पिया प्रेम पियाला।
ठाढ़ होउँ तो गिरि गिरि परता, तेरे रंग मतवाला।।
खड़ा रहूँ दरबार तुम्हारे, ज्यों घर का बंदाजादा।
नेकी की कुलाह सिर दीये, गले पेरहन साजा।।
तौजी और निमाज न जानूँ, ना जानूँ धरि रोजा।
बाँग जिकिर तबही से बिसरी, जबसे यह दिल खोजा।।
कहैं मलूक अब कजा न करिहौं, दिल ही सों दिल लाया।
मक्का हज्ज हिये में देखा, पूरा मुरसिद पाया।।

दर्द-दिवाने बावरे, अलमस्त फकीरा।
एक अकीदा लै रहे, ऐसे मन-धीरा।।
प्रेम पियाला पीवते, बिसरे सब साथी।
आठ पहर यों झूमते, ज्यों माता हाथी।।
उनकी नजर न आवते, कोई राजा रंक।
बंधन तोड़े मोह के, फिरते निहसंक।।
साहेब मिल साहेब भये, कछु रही न तमाई।
कहैं मलूक तिस घर गये, जहँ पवन न जाई।।

मोरा पीर निरंजना, मैं खिजमतगार।
तुहीं तुहीं निस दिन रटौं, ठाढ़ा दरबार।।
महल मियाँ कादि लहि में, औ महजिद काया।
छूरी देता ज्ञान की, जब तें लौ लाया।।
तसबी फेरौं प्रेम की, हिया करौं निवाज।
जहँ तहँ फिरौं दिदार को, उसही के काज।।
कहैं मलूक अलेख के, अब हाथ बिकाना।
नाहीं खबर वजूद की, मैं फकीर दिवाना।।

अब की लागी खेप हमारी।
लेखा दिया साह अपने को, सहजै चीठी फारी।।
सौदा करत बहुत जुग बीते, दिन दिन टूटी आई।
अब की बार बेबाक भये हम, जम की तलब छोडाई।।
चार पदारथ नफा भया मोहि, बनिजै कबहुँ न जइहौं।
अब डहकाय बलाय हमारी, घर ही बैठे खइहौं।।
बस्तु अमोलक गुप्तै पाई, ताती बाऊ न लाओं।
हरि हीरा मेरा ज्ञान जौहरी, ताही सों परखाओं।।
देव पितर और राजा रानी, काहू से दीन न भाखौं।
कह मलूक मेरे रामै पूँजी, जीव बराबर राखौं।।

भक्त–भगवान

सोई सहर सुबस बसे, जह हरि के दासा।
दरस किये सुख पाइये, पूजै मन आसा।।
साकट के घर साधजन, सुपने नहि जाहीं।
तेइ तेइ नगर उजाड़ है, जह साधू नाहीं।।
मूरत पूजैं बहुत मति, नित नाम पुकारैं।
कोटि कसाई तुल्य हैं, जो आतम मारैं।।
पर दुख दुखिया भक्त है, सो रामहिं प्यारा।
एक पलक प्रभु आप तें, नहिं रखैं न्यारा।।
दीन–बंधु करुनामय, ऐसे रघुराजा।
कहैं मलूक जन आपने को कौन निवाजा।।

देव पितर मेरे हरि के दास। गाजत हौं तिन के बिस्वास।।
साधू जन पूजौ चित लाई। जिनके दरसन हिया जुड़ाई।।
चरन पखारत होई अनंदा। जनम जनम के काटे फंदा।।
भाव भक्ति करते निस्काम। निसि दिन सुमिरैं केवल राम।।
घर बन का उनके भय नाहीं। ज्यों पुरइनि रहता जल माहीं।।
भूत परेतन देव बहाई। देवघर लीपै मोर बलाई।।
बस्तु अनूठी संतन लाऊँ। कहैं मलूक सब भर्म नसाऊँ।।

मन और माया

माया काली नागिनी, जिन डसिया सब संसार हो।।
इन्द्र डसा ब्रह्मा, डसिया डसिया नारद ब्यास हो।
बात कहत सिव को डसा, जेहि घरि एक बैठे पास हो।।
कंस डसा सिसुपाल डसा, उन रावन डसिया जाय।
दस सिर दै लंक मिली, सो छिन में दई बहाय हो।।
बड़े बड़े गारुड़ डसे, कोउ इक थिर न रहाय।
कच्छ देस गोरख डसा, जा का अगम बिचार हो।।
चुनि चुनि खाये सूरमा, जा की करै जग आस।
हम से गरीबन को गनै कहत मलूकादास हो।।

क्या प्रपंच यह पंच रचा।।
आसा तृष्ना सब घट ब्यापी, मुनि गंधर्व कोई न बचा।।
उठे बिहान पेट का धंधा, माया लाय किया जग अंधा।।
तन मन छीन कुटुंबे लाया, छिन रही आप लोग भर्माया।।
औंधी खोपरी फिरै बिचारे, भूले भक्ति क्षुधा के मारे।।
बिनती करत मलूकादासा, थकित भया तेरा देख तमासा।।

राम नाम क्यों लीजै मन राजा।
काहु भाँति मेरे हाथ न आवै, महा बिकट दल साजा।।
कई बार इन पैंड़े चलते, लस्कर लूटा मेरा।
चहुँ जुग राज बिराजी करता, अदब न मानै तेरा।।
येही सब घट दुन्द मचावै, मारै रैयत खासी।
काहू नृप को नजर न आनै, एते मान मवासी।।
कह मलूक जिय ऐसी आवै, छल बल करि ये ही गहिये।
इसहि मारि काया गढ़ लेके, तब खासे घर रहिये।।

हम से जनि लागे तू माया।
थोरे से फिर बहुत होयगी, सुनि पैहैं रघुराया।।
अपने में है साहेब हमरा, अजहूँ चेतु दिवानी।
काहू जन के बस परि जैहौ, भरत मरहुगी पानी।।
तर है चितै लाज करु जन की, डारु हाथर की फाँसी।
जन तें तेरो जोर न लहिहै, रच्छपाल अबिनासी।।
कहै मलूका चुप करु ठगनी, औगुन राखु दुराई।
जो जन उबरै राम नाम कहि, तातें कछु न बसाई।।

माया के गुलाम, गीदी क्या जानें बंदगी।।
साधुन से धूम धाम, करत चोरन के काम।
द्विजन को पूजा देय, गरीबन से रिन्दगी।।

कपट की माला लिये, छापा मुद्रा तिलक दिये।
बगल में पोथी दाबे, लायो फरफंदगी।।
कहत मलूकदास, छोड़ दगाबाजी आस।
भजहु गोबिन्द राय, मेटैं तेरी गंदगी।।

चेतावनी

जा दिन का डर मानता, सोइ बेला आई।
भक्ति न कीन्ही राम की, ठकमूरी खाई।।
जिन के कारन पचि मुवा, सब दुख की रासी।
रोइ रोइ जन्म गँवाइया, परी मोह की फाँसी।।
तन मन धन नहिं आपना, नहिं सुत और नारी।
बिछुरत बार न लागई जिय देखु बिचारी।।
मनुष जन्म दुर्लभ अहै, बड़ें पुन्ने पाया।
सोऊ अकारथ खोइया, नहिं ठौर लगाया।।
साध संगत कब करोगे, यह औसर बीता।
कहे मलूका पाँच में, बैरी एक न जीता।।

राम मिलन क्यों पइये, मोहिं राखा ठगवन घेरि हो।।
क्रोध तो काला नाग है, काम तो परगट काल।
आप आप को खैंचतें, मोहिं कर डाला बेहाल हो।।
एक कनक और कामिनी यह दोनों बटमार।
मिसरी की छुरी गर लाय के, इन मारा सब संसार हो।।
इन मे कोई ना भला, सब का एक बिचार।
पैंड़ा मारैं भजन का, कोई कैसे के उतरै पार हो।।
उपजत बिनसत थकि पड़ा, जियारा गया उकताय।
कहै मलूक बहु भरमिया, मो पै अब नहि भरमो जाय हो।।

इन्द्री खाय गई जग सारा।
निस दिन चरा करे बन काया, कोई न हाँकनहारा।।

पीप रक्त करै तन झँझरा, सरबस जाय नसाई।
जैसी भाँति काठ घुन लागै, बहुरि रहै फोकलाई।।
होता बीज औंट के लोहू, सो देंही का राजा।
ऐसी बस्तु अकारथ खोवै, अपना करै अकाजा।।
मनुवा मार भजै भगवंतहिं, या मति कबहुँ न ठाना।
जियरा दोय घरी के सुख को, कहत मलूक दिवाना।।

अजब तमासा देखा तेरा। ता तें उदास भया मन मेरा।।
उतपत परलय नित उठ होई। जग में अमर न देखा कोई।।
माटी के पुतरे माया लाई। कोई कहे बहिन कोई कहे भाई।।
झूठा नाता लोग लगावै। मन मेरे परतीत न आवै।।
जबहीं भेजे तबहिं बुलावै। हुकुम भया कोइ रहन न पावै।।
उलटत पलटत जग की अंचली। जैसे फेरै पान तमोली।।
कहत मलूक रह्यो मोहि मोहिं घेरे। अब माया के जाउँ न नेरे।।

देखा सब जग ब्याकुल राम। नित उठि दग्धै क्रोध औ काम।।
तुम तो प्रभु जी रहे छिपाय। पाँच मवासी दियो लगाय।।
एक घड़ी काहु कल ना देय। ज्ञान ध्यान आपुइ हरि लेय।।
देह धरे का बड़ा जंजाल। जहँ तहँ फिरता गिरसे काल।।
आई अचानक करत घात। जिप लै भागत कहत बात।।
या पापी तें कोउ न बाच। नित उठि पेट नचावै नाच।।
या का उत्तर देवो मोहिं। कैसे के कोउ मिलै तोहिं।।
जियत नरक है गर्भ बास। उपजत बिनसत बड़ी त्रास।।
कह मलूक यह बिनती मोरी। इन्हें छोड़ि बल जाऊँ तोरी।।

बाबा मुरदे मूँड़ उठाया।
लागी अंग बाय दुनियाँ की, राम राय बिसराया।।
आये पहिरि करम की बेड़ी, हाथ हाथ करि गाढ़ी।
फूले फिरें जनु अमर भये हैं, प्रीति बिषय सों बाढ़ी।।

काहू के मन चार पाँच की, काहू के मन बीस।
काहू के मन सात आठ की, सब बाँधे जगदीस।।
अब भये सौतिन हाथ केरे, घर बीघा सौ कीन्ह।
मेरी मेरी कहि उमर गँवाई, कबहुँ राम ना चीन्ह।।
दिना चार के घोड़े सोड़े, दिना चार के हाथी।
कहत मलूका दिना चार में, बिछुरि जायँगे साथी।।

मुवा सकल जग देखिया, मैं तो जियत न देखा कोय हो।।
मुवा मुई को ब्याहता रे, मुवा ब्याह करि देय।
मुए बराते जात हैं, एक मुवा बधाई लेय हो।।
मुवा मुए से लड़न को, मुवा जोर लै जाय।
मुरदे मुरदे लड़ि मरे, एक मुरदा मन पछिताय हो।।
अंत एक दिन मरौगे रे गलि गलि जैहै चाम।
ऐसी झूठी देह तें, काहे लेव न साँचा नाम हो।।
मरने मरना भाँति है रे, जो मरि जानै कोय।
राम दुवारे जो मरै, फिर बहुरि न मरना होय हो।।
इनकी यह गति जानिके, मैं जहँ तहँ फिरौं उदास।
अजर अमर प्रभु पाइया, कहत मलूकादास हो।।

सोते सोते जन्म गँवाया।
माया मोह में सानि पड़ो सो, राम नाम नहि पाया।।
मीठी नींद सोये सुख अपने, कबहूँ नहिं अलसाने।
गाफिल होके महल में सोये, फिर पाछे पछिताने।।
अजहूँ उठो कहाँ तुम बैठे, बिनती सुनो हमारी।
चहूँ ओर मैं आहट पाया, बहुत भई भुइँ भारी।।
बंदीछोर रहत घट भीतर, खबर न काहू पाई।
कहत मलूक राम के पहरा, जागो मेरे भाई।।

अबधू याही करो बिचार।
दस औतार कहाँ तें आये, किन रे गढ़े करतार।।
केहि उपदेस भये तुम जोगी, केहि बिधि आतम जारा।
केहि कारन तुम काया सताई, केहि बिधि आतम मारा।।
थोथे बाँट बाँधि के भोंदू, येहि बिधि जाव न पारा।
ऋद्धि सिद्धि में बूड़ि मरोगे, पकड़ो खेवनहारा।।
अगल बगल का पैंड़ा पकड़ा, दिन दिन चढ़ता भारा।
कहत मलूक सुनो रे भोंदू, अबिगत मूल बिसारा।।

नाम हमारा खाक है, हम खाकी बंदे।
खाकहिं ते पैदा किये, अति गाफिल गंदे।।
कबहुँ न करते बन्दगी, दुनिया में भूले।
आसमान को ताकते, घोड़े चढ़ि फूले।।
जोरू लड़के खुस किये, साहेब बिसराया।
राह नेकी की छोड़ि के, बुरा अमल कमाया।।
हरदम तिस को याद कर, जिन वजूद सँवारा।
सबै खाक दर खाक है, कुछ समुझ गँवारा।।
हाथी घोड़े खाक के, खाक खानखानी।
कहैं मलूक रहि जायगा, औसाफ निसानी।।

उपदेश

अब तो अजपा जपु मन मेरे।।
सुर नर असुर टहलुवा जा के, मुनि गंधर्व जा के चेरे।।
दस औतार देखि मत भूलो, ऐसे रूप घनेरे।।
अलख पुरुष के हाथ बिकाने, जब तें नैन निहारे।।
अबिगत अगम अगोचर अबधू, संग फिरत हैं तेरे।।
कह मलूक तू चेत अचेता, काल न आवै नेरे।।

ऐ अजीज ईमान तू, काहे को खोवै।
हिय राखै दरगाह में, तो प्यारा होवै।।
यह दुनिया नाचीज के, जो आसिक होवै।
भूलै जात खोदाय को, सिर धुन धुन रोवै।।
इस दुनिया नाचीज के, ताबिल हैं कुत्ते।
लज्जत में मोहित हुए, दुख सहे बहूते।।
जब लगि अपने आप को, तहकीक न जानै।
दास मलूका रब्ब को, क्योंकर पहिचानै।।

साधो भाई अपनी करनी नाहीं।।
जे करनी का करैं भरोसा, ते जम के घर जाहीं।।
ना जानूँ धौं कहाँ मुए थे, ना जानू कहाँ आये।
ना जानूँ हरि गर्भ बसेरा, कौने भाँति बनाये।।
महा कठिन यह हरि की माया, या तें कौन बचावै।
जौन कहै जड़ मूलहिं त्यागी, तिन को हाथ लगावै।।
यह संसार बड़ो भौसागर, प्रलय काल ते भारी।
बूड़त तें या सोई बाचै, जेहि राखै करतारी।।
लच्छ गऊ दे अन्न खात थे, राजा नृग से प्यारे।
पुन्न करत जमा और गँवाई, लै गिरगिट कै डारे।।
गौतम नारि बड़ी पतिबरता, बहुत कीन्हे दाना।
करनी करि बैकुंठ न पैठी, काहे भई पषाना।।
आपा मेटो राम भजो तुम, कहत मलूक दिवाना।।

आपा खोज रे जिय भाई।
आपा खोजे त्रिभुवन सूझै, अंधकार मिटि जाई।।
जोई मन सोई परमेसुर, कोइ बिरला अवधू जानै।
जौन जोगीसुर सब घट ब्यापक, सो यह रूप बखानै।।

सब्द अनाहद होत जहाँ ते, तहाँ ब्रह्म कर बासा।
गगन मंडल में करत कलोलै, परम जोति परगासा।।
कहत मलूका निरगुन के गुन, कोइ बड़भागी गावै।
क्या गिरही औ क्या बैरागी, जेहि हरि देय सो पावै।।

किरपा कर गुरु जुगत बताई। आपा खोज भरम नसाई।।
आपा खोजे त्रिभुवन सूझै। गुरु परताप काल से जूझै।।
सब्द ब्रह्म का करै बिचार। सोई चलै जियत होइ छार।।
संतन की सेवा चित लावै। पाहन पूजि न मन भरमावै।।
कामिनि कनक कलह का भंडा। इन ठगनिन सारा जग डंडा।।
होत न हँसै मरत ना रोवै। ता को रंड कबहुँ न बिगोवै।।
षरत तत्त जो दृढ कर रहै। माया मोह में कबहुँ न बहै।।
गुरु के बचन करै परतीत। सोई सिद्ध जाय जग जीत।।
सत संतोष हिये में राखै। सो जन नाम रसायन चाखै।।
काटे कटै न जारे जरै। अर्ध नाम भजन करि तरै।।
न्यारे होयँ पिता और भाई। अगिनि बुझै सीतल होइ जाई।।
मनुवाँ मारि करै नौ खंड। कबहुँ न सहै देह का दंड।।
गुरु गोबिंद सार मत दीन्ह। भला भया जो आतम चीन्ह।।
बड़े भाग से आतम जागा। कहत मलूक सकल भ्रम भागा।।

आपा मेटि न हरि भजे, तेई नर डूबे।
हरि का मर्म न पाइया, कारन कर ऊबे।।
करें भरोसा पुन्न का, साहेब बिसराया।
बूड़ गये तरबोर को, कहुँ खोज न पाया।।
साध मंडली बैठि के, मूढ़ जाति बखानी।
हम बड़ हम बड़ करि मुए, बूड़े बिन पानी।।
तब के बाँधे तेई नर, अजहूँ नहिं छूटैं।
पकरि पकरि भलि भाँति से, जमदूतन लूटे।।

काम क्रोध सब त्यागि के, जो रामै गावै।
दास मलूका यों कहै, तेहि अलख लखावै।।

गर्ब न कीजे बावरे, हरि गर्ब प्रहारी।
गर्बहिं तें रावन गया, पाया दुख भारी।।
जरन खुदी रघुनाथ के, मन नाहिं सोहाती।
जा के जिय अभिमान है, ताकी तोरत छाती।।
एक दया और दीनता, ले रहिये भाई।
चरन गहो जाय साध के, रीझैं रघुराई।।
यही बड़ा उपदेस है, परद्रोह न करिये।
कहैं मलूक हरि सुमिर के, भौसागर तरिये।।

ना वह रीझै जप तप कीन्हे, ना आतम को जारे।
ना वह रीझै धोती टाँगे, ना काया के पखारे।।
दया करै धरम मन राखै, घर में रहै उदासी।
अपना सा दुख सब का जानै, ताहि मिलै अबिनासी।।
सहै कुसबद बादहू त्यागै, छाँडै गर्ब गुमाना।
यही रीझ मेरे निरंकार की, कहत मलूक दिवाना।।

सब से लालच का मत खोटा।
लालच तें बैपारी सिद्धी, दिन दिन आवै टोटा।।
हाथ पसारे आँधर जाता, पानी परहि न भाई।
माँगे तें मकु मीच भली, अस जीने कौन बडाई।।
माँगे तें नाक सिकोरे, गोबिद भला न मानै।
अनमाँगे राम गले लगावै, बिरला जन कोइ जानै।।
जब लग जिव का मोह न छूटै, तब लग तजै न माया।
घर घर द्वार फिरै माया के, पूरा गुरु नहिं पाया।।
यह मैं कही जे हरि रंग राते, संसारी को नाहीं।
संसारी तो लालच बँधा देस देसान्तर जाहीं

जो माँगै सो कछू न पावै बिन माँगै हरि देता।
कहैं मलूक निःकाम भजै जे, ते आपन करि लेता।।

मन तें इतने भरम गँवावो।
चलत बिदेस बिप्र जनि पूछो, दिन का दोष न लावो।।
संझा होय करो तुम भोजन, बिनु दीपक के बारे।
जौन कहैं असुरन की बेरिया, मूढ़ दई के मारे।।
आप भले तो सबहि भलो है, बुरा न काहू कहिये।
जा के मन कछु बसै बुराई, ता सो भागे रहिये।।
लोक बेद का पैड़ा औरहि, इनकी कौन चलावै।
आतम मारि पखानै पूजैं, हिरदै दया न आवै।।
रहो भरोसे एक राम के, सूरे का मत लीजै।
संकट पड़े हरज नहिं मानो, जिय का लोभ न कीजै।।
किरिया करम आचार भरम है, यही जगत का फंदा।
माया जाल में बाँधि अड़ाया, क्या जानै नर अंधा।।
यह संसार बड़ा भौसागर, ता को देखि सकाना।
सरन गये तोहिं अब क्या डर है, कहत मलूक दिवाना।।

है हजूर नहिं दूर, हमा-जा भर पूर।
जाहिरा जहान, जा का जहूर पुरनूर।।
बेसबूह बेनमून, बेचगून ओस्त।
हमा ओस्त हमा अज़ोस्त, जान-जानाँ दोस्त।।
शबोरोज़ ज़िकर, फिकरही में मशगूल।
तेही दरगाह बीच, पड़े हैं कबूल।।
साहेब है मेरा पीर, कुदरत क्या कहिये।
कहता मलूक बंदा, तक पनाह रहिये।।

राम कहो राम कहो राम कहो बावरे।
अवसर न चूक भौंदू, पायो भला दाँव रे।।
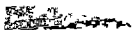
जिन तो को तन दीन्हो, ता को न भजन कीन्हो।
जनम सिरानो जात, लोहे कैसो ताव रे।।
रामजी को गाय गाय, रामजी को रिझाव रे।
रामजी के चरन कमल, चित माहिं लाव रे।।
कहत मलूकदास, छोड़ दे तैं झूठी आस।
आनंद मगन होइ के, हरि गुन गाव रे।।

रस रे निर्गुन राग से, गावै कोइ जाग्रत जोगी।
अलग रहै संसार से, सो (इस) रस का भागी।।
भरम करम सब छौंड़, अनूठा यह मत पूरा।
सहजै धुन लागी रहै, बाजै अनहद तूरा।।
लहरैं उठतीं ज्ञान की, बरसै रिमझिम मोती।
गगन गुफा में बैठ के, देखै जगमग जोती।।
सिव नगरी आसन किया, सुन्न ध्यान लगाया।
तीनो दसा बिसार के, चौथा पद पाया।।
अनुभय उपजा भय गया, हद तज बेहद लागा।
घट उजियारा होइ रहा, जब आतम जागा।।
सब रँग खेलै सम रहै, दुबिधा मनहिं न आनै।
कई मलूक सोइ रावला, मेरे मन मानै।।

बाजीगरै पसारी बाजी। भूल भुलायो सब का जी
देखा मैं मुल्ला बौराना। नाहक पढ़ें किताब कुराना
है हजूर वह दूर बतावै। बाँग जिकिर धौं किसे सुनावै
रोजा करै निमाज गुजारै। उरुस करै और आतम मारै
वो भी मुल्ला बड़ा कसाई। जिन तुझको तदबीर सिखाई
है बेपीर और पीर कहावै। करि मुरीद तदबीर सिखावै
ऐसा मुर्सिद कबहुँ न करिये। खून करावै तिस तें डरिये
अपने मूड़ अजाब चढावै। पैगंबर का धोखा लावै

ऐसा मुर्सिद करै जो कोई। दोजख जाय परैगा सोई।
दरदमंद दरवेस कहावै। जो मोहि राम की रीझ बतावै।
साहेब को बैठे लौ लाई। काहू की नहिं करै तमाई।।
पाँच तत्त से रहै नियारा। सो दरवेस खोदा का प्यारा।।
जो प्यासे को देवे पानी। बड़ी बदगी मोहमद मानी।।
जो भूखे को अन्न खवावै। सो सिताब साहेब को पावै।।
अपने मन तदबीर कराई। साहेब के दर होय बड़ाई।।
जो फकीर ऐसा कोई होय। फिरै बेबाक न पूछे कोय।।
छोड़ै गुस्सा जीवत मरै। तेहिं इजराइल सिजदा करै।।
अपना-सा दुख सबका जानै। दास मलूका ता को मानै।।

आत्म बिस्तार

अब मैं अनहद पदहिं समाना।।
सब देवन को भर्म भुलाना, अविगति हाथ बिकाना।।
पहिला पद है देई पूजा, दूजा नेम अचारा।
तीजे पद में सब जग बँधा, चौथा अपरम्पारा।।
सुन्न महल में महल हमारा, निरगुन सेज बिछाई।
चेला गुरु दोउ सैन करत हैं, बड़ी असाइस पाई।।
एक कहै चल तीरथ जइये, (एक) ठाकुरद्वार बतावै।
परम जोति के देखे संतो, अब कछु नजर न आवै।।
आवा गवन का संसय छूटा, काटी जम की फाँसी।
कह मलूक मैं यही जानि के, मित्र कियो अबिनासी।।

सबहिन के हम सबै हमारे। जीव जन्तु मोहिं लगैं पियारे।।
तीनों लोक हमारी माया। अंत कतहुँ से कोइ नहिं लाया।।
छत्तिस पवन हमारी जात। हमहीं दिन और हमहीं रात।।
हमहीं तरवर कीट पतंगा। हमहीं दुर्गा हमहीं गंगा।।
हमहीं मुल्ला हमहीं काजी। तीरथ बरत हमारी बाजी।।

हमहीं पंडित हमीं बैरागी। हमहीं सूम हमीं हैं त्यागी।
हमहीं देव और हमहीं दानौ। भावै जा को जैसा मानौ।
हमहीं चोर हमहीं बटमार। हम ऊँचे चढ़ि करैं पुकार।
हमहीं महावत हमहीं हाथी। हमहीं पाप पुन्न के साथी।
हमहीं अस्व हमहीं असवार। हमहीं दास हमहीं सरदार।
हमहीं सूरज हमहीं चंदा। हमहीं भये नन्द के नन्दा।
हमहीं दसरथ हमहीं राम। हमरै क्रोध हमारै काम।
हमहीं रावन हमहीं कंस। हमहीं मारा अपना बंस।।
हमहीं जियावैं हमहीं मारैं। हमहीं बोरैं हमहीं तारैं।।
जहँ तहँ सब जोति हमारी। हमहीं पुरुष हमहीं हैं नारी।।
ऐसी बिधि कोई लव लावै। सो अविगत से टहल करावै।।
सहै कुसब्द और सुमिरै नाँव। सब जग देखै एकै भाव।।
या पद का कोड करै निबेरा। कह मलूक मैं ता का चेरा।।

बाबा मन का है सिर तले।
माया के अभिमान भूले, गर्ब ही में गले।।
जिभ्या कारन खून कीये, बाँधि जमपुर चले।
रामजी सों भये बेमुख, अगिन अपनी जले।।
हरि भजे से भये निरभय, टारहू नहिं टरे।
कह मलूका जहँ गरीबी, तेई सब से भले।।

तू साहेब लीये खड़ा, बंदा नासबूरा।
जैसा जिसको चाहिये, देता भरपूरा।।
लाख करोड़ जो गाँठि में, तौ भी यह रोवै।
मरता मारे फिकिर के, सुख कबहुँ न सोवै।।
आँखैं फेरै बुरी भाँति, देखत डर लागै।
लेखा जो कौड़ी चले, दिन चारक जागै।।
बिन संतोष दुखी भया, बहुते भरमाया।
कहत मलूक यह जानकर सरनागति आया।

राम मैं ससा भयो तन धरि के।
प्रभु की सरन में कीन्ह बिलावट आनि घुसा मैं डरिके।।
कुकरा पांच पचीस कुकरिया सदा रहैं मोहिं घेरे।
ठाढ होऊँ तौ पिंड्डरी पकरैं बैठे आंखि गुरेरें।।
कलुवा कबरा मोतिया झबरा बुचवा मोहिं डरवावे।
जब तें लियो तिहारो पीछा कोऊ निकट न आवे।।
इन पाँचों में देखा विष ही एकौ नहिं मन माना।
काटि काटि मैं कीन्ह अहेरा कहत मलूक दिवाना।।

बंदे दुनियाँ की दीन गँवाया।
सो दुनियाँ तेरे संग न लागी, मूड़ अजाब चढ़ाया।।
करम जो लागा बदी खलक की, किन तुझको फर्माया।
गुनहगार तूँ हुआ सरासर, दोजख बाँध चलाया।।
खाकम सेती जिन पैदा कीन्हा, सो साहेब बिसराया।
मोहक मार पड़ी गुरजन की, तब कछु ज्वाब न आया।।
अब किसहूँ को दोष न दीजै, गन्दा अमल कमाया।
कह मलूक जस खिजमत पहुँचा, सोई नतीजा पाया।।

मन नाहिं तौलै यार, का रे तौलै बनिया।।
घाट बाध सोध लेइ, सम रहै नकुनियाँ।
बिसरै ना सुरति, नाहिं फेरि हीय तनिया।।
पाँच औ पचीस चोर, लूटि हैं दुकनियाँ।
सुनहि ना गोहार कोउ, हाकिम हैरनियाँ।।
कहत मलूकदास, तौलैं जब चार रास।
साहेब मिल साहु होय, मिलै तब दमनिया।।

दीन-बंधु दीना-नाथ मेरो तन हेरिये।।
भाई नाहिं बंधु नाहिं कुटुम परिवार नाहिं,

ऐसा कोइ मित्र नाहिं जाके ढिग जाइये।।
सोने की सलैया नाहिं रूपे का रुपेया नाहिं,
कौड़ी पैसा गाँठ नाहिं जासे कछु लीजिये।।
खेती नाहि बारी नाहिं बनिज ब्यौपार नाहिं,
ऐसा कोई साहु नाहिं जासों कछु माँगिये।।
कहत मलूकदास छोड़ दे पराई आस,
राम धनी पाय के अब का की सरन जाइये।।

कवित्त

परम दयाल राया राम परसोत्तम जी,
ऐसी प्रभु छाँड़ि और कौन के कहाइये।।
सीतल सुभाव जा के तामस को लेस नहीं,
मधुर बचन कहि राखै समझाइये।।
भक्त-बछल गुन-सागर कला-निधान,
जाको जस पाँत नित बेदन में गाइये।।
कहत मलूक बल जाउँ ऐसे दरस की,
अधम-उधार जा के देखे सुख पाइये।।

जौन कोई भूखा गोपाल की मोहब्बत का।
तौन दुर्वेसन का पैंड़ा निराला है।।
रहते महजूज वे तो साहेब की सूरत पर।
दुनियाँ को तरक मार दीन को सम्हाला है।।
किसी से न करैं सवाल उनका कुछ और ख्याल।
फिरते अलमस्त वजूद भी बिसारा है।।
कहता मलूक उन्हें सूझता है बेचुगून।
किसी को गरज नहीं अंदर अंधियारा है।।

माला कहाँ और कहाँ तसबीह।
अब चेत इनहिं कर टेक न टेकै।।
काफिर कौन मलेच्छ कहावत।
संध्या निवाज समय करि देखै।।
है जमराज कहाँ जबरील है।
काजी है आप हिसाब के लेखै।।
पाप और पुन्य जमा कर बूझत।
देत हिसाब कहाँ धरि फेकै।।
दास मलूक कहा भरमौ तुम।
राम रहीम कहावत एकै।।
माला कहाँ और कहाँ तसबीह।
अब चेत इनहिं कर टेक न टेकौ।।
बाँधे डोल अकास पाताल लौं।
झूलन जात कहे हरि सेती।।
लोक की लाज में होत आकज है।
कौन सहै मेरे साँसत एती।।
दास मलूक दिन दुइ की बात है।
पायो राम छुट्यो जम सेती।।

बीर रघुबीर पैगंबर खोदा मेरे।।
कादिर करीम काजी माया मत खोई है।।
राम मेरे प्रान रहमान मेरे दीन इमान।
भूल गयो भैया सब लोक लाज धोई है।।
कहत मलूक मैं तो दुबिधा न जानौं दूजी।
जोई मेरे मन में नैनन में सोई है।।
हरि हजरत मोहि माधव मुकुंद की सौं।
छाँड़ि केसवराय मेरो दूसरो न कोई है।।

जिसके दीदार को मुसाफिरी को दिल हुआ।
बहुत खूब ऐसा जो नगीच कर पाइये।।
खाब-सी दुनियाँ को दिल कौन करै सात पाँच।
बन्दे हैं जिसके क्यों न तिसके कहलाइये।।
अगम अगोचर सबहिन में रहता नियार।
जा को जस नीत बर्त्त संतन बार बार गाइये।।
कहता मलूक महबूब पिया खूब यार।
सिर लगाय जमीं मे सिदा कराइये।।

बार बार कहता हूँ नसीहत मैं तेरी तई।
क्यों बे हरामखोर साई तू बिसारा है।।
जिसका नित नोन खात मुतलक भी ना डरात।
अच्छा वजूद पाय औरत से हारा है।।
कौल से बेकौल हुआ किसी की न लेत दुआ।
दोजख के लिए दिल कौन कौन मारा है।।
कहता मलूक अब तौबा कर साहेब से।
छाँड़ि दे कुराह जिन जारे पर जारा है।।

बंदा तैं गंदा गुनाह करै बार बार।
साई तू सिरजनहार मन में न आनिये।।
हाथ कछु मेरे नाहीं हाथ सब तेरे साईं।
खलक के हिसाब बीच मुझको मत सानिये।।
रहम की नजर कर कुरहम दिल से दूर कर।
किसी के कहे सुने चुगली मत मानिये।।
कहता मलूक मैं रहता पनाह तेरी।
दाता दयाल मुझे अपना कर जानिये।।

गाफिल है बंदा गुनाह करै बार बार।
काम पड़े साहेब धौं कैसा फरमावैगा।।
आखिर जमाने को डरता है मेरा दिल।
जब जबरील हाथ गुर्ज लिये आवैगा।।
ख़ाब-सी दुनियाँ दिल को न करै सात पाँच।
काली-पीली आँखैं कर फिरिस्ता दिखलावैगा।।
कहता मलूक किसी मुल्क में बचाव नहीं।
अब कीजै किरपा तब मेरे मन भावैगा।।

भील कद करी थी भलाई जिया आप जान।
फील कद हुआ था मुरीद कहु किसका।।
गीध कद ज्ञान की किताब का किनारा छुआ।
ब्याध और बधिक निसाफ कहु तिसका।।
नाग कद माला लैके बंदगी करी थी बैठ।
मुझको भी लगा था अजामिल का हिसका।।
ऐते बदराहों की बदी करी थी माफ।
जन मलूक अजाती पर एती करी रिस का।।

मेहर की कफनी और कुलाह भी मेहर का।
मेहर का मुतंगा इस कमर में लगाइये।।
मेहर का जामा और तोमा भी मेहर का।
मेहर का आपा इस दिल को पिलाइये।।
मेहर का आसा और तमासा भी मेहर का।
मेहर के महल बिच्च मेहरबान को मनाइये।।
कहता मलूक बंदै कहर की लहर में।
कोटिक बह गये बिन मेहर मेहरबान किस राह से पाइये।।

अदम कबित्त का जिसकी कबिताई करूँ।
याद करूँ उसको जिन पैदा मुझे किया है।।
गर्भ बास पाला आतम में नहिं जाला।
तिसको मैं बिसारूँ तो मैं किसकी आस जिया है।।
लानत इस दुनियाँ को जो दीन से बेदीन करै।
खाक ऐसे खानें जिन ईमान बेंच लिया है।।
कहता मलूक मैं बिकाना हरि मूरत पर।
जिस के दीदार से जुड़ाता मेरा हिया है।।

सुपने के सुक्ख देख मोह रहे मूढ़ नर।
जानत हमारे दिन ऐसहिं बिहायँगे।।
क्या करैंगे भोग अच्छी सुन्दरी रमैंगे नित्त।
छाँह कौ लै चारि जन खूँद खूँद खायँगे।।
सीकरा सो काल है कलसरी सी लपेट लेहै।
चंगुल के तले दबे चिचयायँगे।।
कहत मलूकदास लेखा देत होइहै दुक्ख।
बड़े दरबार जाय अन्त पछितायँगे।।

दीन-दयाल सुनी जब ते तब तें हिया में कछु ऐसी बसी है।।
तेरो कहाय के जाउँ कहाँ मैं तेरे हित की पट खैंच कसी हैग।।
तेरोही एक भरोस मलूक को तेरे समान न दूजो जसी है।।
एहो मुरारि पुकारि कहों अब मेरी हँसी नहिं तेरी हँसी है।।

ज्ञान बोध

हरि भगतन के काज हित जुग जुग करी सहाइ।
सो सिव सेस न कहि सके कहौं कुछुक अगाइ।।

चौपाई

भकत वछल संतन सुखदाई। जन का दुख नेवारहि भाई।।
जन के दुख आपुहु दुख पावै। बाधा होइ तौ जाइ छोड़ावै।।
बंदी छोड़ क्रिस्न का बाना। सो तौ तीन लोक में जाना।।
जेंउ बालक पालै महतारी। तैसें रछ्य करहि मुरारी।।
हरि ध्यान बसहि जन माँही। गुरु रवि ससि छोड़ावन जाँही।।
जहँ जहँ परै भक्त को गढ़ा। जानहुँ राम कालि का गढा।।
राम राम प्रह्लाद पुकारा। पिता बाँधि परबत तें डारा।।
ताती वाउ न लागन पाई। उपरहि राखि लीन्ह रघुराई।।
तब लै असुर खंभे ते बाँधा। काढ़े खड़ग फुलावै कांधा।।
सींघ रूप तब धरा मुरारी। मारा असुर मिला दुख भारी।।
कठिन कठोर तपस्या कीन्हीं। पदई अटल ध्रुद को दीन्हीं।।
पावौं पड़ो जरत उबारे। बार न बाँकै हरि रखवारे।।
सुमिरन कीन्ह द्रोपदी रानी। प्रगटे किस्न हिए की जानी।।
अंबर के अंबार लगाए। भगति हेत प्रभु दौरे आए।।
भीष्म द्रोन बहुत पछताने। रही लाज कौरौ खिसियाने।।
नारद व्यास और सुष देवा। दोनहूँ हरि की कीन्ही सेवा।।
सुमिरन भजन दीन्ह ठहराई। ताँते बहुत बड़ाई पाई।।
दत्तात्रै अरु संकर जोगी। वैर हते हरि हेत वियोगी।।
विघन अनेक तिनहू के द्वारे। छलि छलि असुर केतकौ मारे।।
अमरधुज तमरधुज राजा। उन के सुफल भए सब काजा।।
घर बैठे हरि दरसन दीन्हौं। आधा अंग माँगि कै लीन्हौं।।
आरा एक गोपाल मँगावा। लै राजा के मस्तक लावा।।
माथा दे राजे सत राखा साधु साधु नरायन भाखा

सीस जोरि कै कंठ लगाए। दै असीश राजे को आए।।
बावन होइगै बलि के द्वारा। दीन वचन हरि जाइ पुकारा।।
माँगु माँगु राजा बलि बोलैं। मने करै दुज वचन न डोले।।
तब साढे तीन परग भूइँ माँगे। राजा कहै अलप बुधि पागे।।
तैं तो दछिना माँगि न जानी। देतेंउ आजु तोहि रजधानी।।
मैं का करौं कर्म के हीना। मापि लेहु मै यह वर दीन्हा।।
तब बढ़े किस्न गै लगे अकासा। चकित भए बलि देखि तमासा।।
तीन लोक तीनै पग कीन्हा। बलि को छला इंद्र के लीनहा।।
तब आधे पग कह पीठि मपाई। रीझे बहुत गोबिन्दे राई ।।
तब हरि कहा माँगु बलि राजा। सब विधि तेरो पुरंउ काजा।।
तब बलि कहा अनुग्रह कीजै। दरसन राम सदा मोहि दीजै।।
ऐसे राम बचन के काढ़े। अजहु बलि के द्वारे ठाढ़े।।
घुरी ठाकुर जनक विदेही। वोऊ हरि के परम सनेही।।
वोन के लिए बहुत हरि कीन्हा। दुष्टन को अति साँसत दीन्हा।।
सनकादिक हरि सब घट जाना। चौथे पद कह कीन्ह पयाना।।
सदा गोपाल साकरे साथी। ग्राह तें जाइ छोड़ायो हाथी।।
अंबरीक द्वादसी व्रत पाले। निति उठि कथा किस्न की चालै।।
ताका व्रत रिसि टारन आए। आदर कै राजै बैठाए।।
तब रिषि कहा अन्हाइ कै आऊ। बहुरि तिह से भोजन पाऊ।।
तरपन करत अबार लगाई। समैं की वार न पहुँचे आई।।
राजै एक मंत्र तब कीन्हा । ठाकुर का चरनामृत लीन्हा।।

तब रिसि कीन्ह बहुत रिसियाई। राजहि एक क्रितिका लाई।।
चक्र सुदर्शन जा रन लागा। तब रिषि अपना जीव लै भागा।।
तीन लोक फिरि आए भाई। काहू न राखि लीन्ह सरनाई।।
तब रिसि गए क्रिस्न के पासा। राखु सरनि बोलै दुर्वासा।।
तब हरि इहै जुवाब जो दीन्हा। भगत द्रोह तुम्ह कहै कीन्हा।।

बहुरि जाहु रिषि त्रिप के पासा। सब विधि के वै पुरवहि आसा।।
वचन मानि रिषि त्रिप के आए। राजा जीवा दान के पाए।।
दास देखि रिषि बहुत लजाने। राजा दौरि चरन लपटाने।।
चक्र की जवाला सीतल भई। रिषि असीस बारैखि तउ दई।।
दास सुदाम कंठ लगाए। सेवरी के फल हित सो पाए।।
राका वाका सधन कसाई। तेन्ह हूँ की हरि भले बनाई।।
तेज रूप हरि मर्दन कीन्हा। राजै रीझि बहुत गथ दीन्हा।।
माधौदास जड़ाने भाई। जगन्नाथ सकला वोढ़ाई।।
अचैं गई विष मीराँ बाई। अंत्रित हुवा प्रेम ले गाई।।
वो बन गया सो मुडियन षाया। धाना जाट को खेत जमाया।।

कहान्हा कुवा नानिक दासा। तेनहूँ की हरि पुरई आसा।।
सालिग्राम रैदास बोलाए। वेलंबु न कीन्हें दौरे आए।।
पीपा जी की रहनि अपार। भक्ति करी खाँडे की धार।।
दास कबीर न बूड़न पाए। तोरि जंजीर तीए लै लटाए।।
ऊँच नीच कुल पूछ न कोई। नाहक गर्व करै नर लोई।।
ठाकुर जी को भगति प्यारी। जो कुल करै सोई अधिकारी।।
जब तें सरनि राम के आए। दास मलूका बहुत सुख पाए।।

अथ दोहा

सुख पायो जेहिं मग चलत, सो मग देउ बताई।
तेहि मग जो नर अनुसरै, सोउ रहे सुख पाई।।
श्री गुरु सों मैं प्रथमही, विनती करी सुनाई।
तब संत गुरु करि कृपा, दीयो भगति पथ दरसाई।।

भगति पंथ अति सुखद सहित ज्ञान वैराग।
जो एहि अवर अनुसरै ताके पूरन भाग।।
पूरन भाग ते पाइए ऐसो दैवी पंथ।
जगत पंथ है आसुरी चलहि न तेहि मग संत।।

असुर संपदा मग चलत कामादिक सों प्रीति।
दैवी संपति संत संग वरन कवल सों रीति।।
भेड़िया धसनि न कीजिए तजिए जग टेउ।
गहिए उबट पंथ लहिए ज्ञान बोध को भेउ।।
तजै आसुरी पंथ जो दैवी मारग आई।
कहै मलूक भव सिंध तें सौ परते पर जाई।।
जन मलूक भव तरन को दई हरि भक्ति बताइ।
जिज्ञासा उपदेश विधि अब सुनिए चित लाइ।।

जिज्ञासा वरनन दोहा

भै जिज्ञासी होइ प्रथम विषुवास विसराइ।
श्री रघुवर सों विनती कीन्हीं यौं सिरनाइ।।
राम राइ असरनि सरनि मोहि अपना कर लेहु।
संतन मिलि सेवा करौं भक्ति मजूरी देहु।।

रमैनी सेवकावली

राम राइ तुम राजा जन परजा तेरे सुमिरन करते भारी।
अपनी अपनी टहलैं लागें जो जाके अधिकारी।।
संकर नाचै नारदउ घटै सुकदेव ताल बजावैं।
दै दै तारी सनक सनंदन सेस सहस मुख गावैं।।
अंबरीष बलि व्यास पंडवा अरु पंडौ की दासी।
खड़े रहैं दरबार तुम्हारे विनती सुनु अविनासी।।
ध्रुव प्रह्लाद विदुर अरु भीष्म भली करी सबकाई।
हनोमान अक्रूर सुदामा सेवरी अति मन भाई।।
अमरधुज तमरधुज ऊधौ कहँ लग दास गनाँऊ।
कहे मलूक देहु मोहि आज्ञा अब कलउ के ल्याँऊ।।
रैदास प्रेम की पनंही बनावे ज्ञानहि गिनै कबीरा।
नामदेव सुरति का वागा सीवै माधो दास चलौवै वीरा।।
धन्नाधीर की खेती करता पीपै प्रीत लगाई।
सेन भजन को मर्दन करता चरण धोवै मीरा बाई।।

धर्म खटिक खिदमति कों राखा षिउ को घाटभ मैना।
तत कथन को नानक राख सदा करै सुख्ख चैना।।
सूरदास परमानंद स्वामी इन नीका मत ठाना।
महा मधुर पद नितहिं सुनावहिं मथि मथि वेद पुराना।।
रामानंद तीलोचन जैदेव ए कछु बहुत कहाते।
जिभ्या स्वाद तजे तुम कारन गिरे परे फल खाते।।
दादू पवन चतुर्भुज कालू अनभै काजें लागे।
गगन मंडल में सर्वस पाया भर्म कर्म ते भागे।।
परमदास रमदास बनिया नैनादास मुरारी।
कामादास और दरिया नंद आए सरन तुम्हारी।।
जनवाजी दारौं का बाँका कुवा जाति कुँभारा।
मकरंद केवट कान्हा सदना एक तें एक प्यारा।।
देवल केवल परसा सोभू मुनिंद्रिक जगी ग्यानी।
नरसी नापा मिरजा साल्हे बोलत अमृत बानी।।
तुलसी दास अजामिल गनिका वीलमंगल गोपाल।
जड़भरथ अरु जनक विदेही धुरी तनहि विसारा।।
गोरख दत्त वसिष्ट रामानुजु आदिक जे अचारज।
चरन कवल हिदय में राखें करत सकलई कारज।।
कहत मलूक निरंजन देवा मोहि अपना करि लीजै।
एन के संग कमाँउ रैनि दिन भगति मजूरी दीजै।।

दोहा

भगति मजूरी दीजिए कीजै भव जल पार।
बोरत है माया मुझही गहे बाह बरियार।।

पद राग सोरठ

भव जल बूडत हौं रघुराया।
उठि विहान मोहि तरा वोर कौं ऐंचत हे तेरी माया।।
काहू भाँति बचाउ न देखौं बहुत जुगुति मैं कीन्हीं।
न जानौ यह कौन आपदा पाछें लाई मेरे दीन्ही।

ध्यान धरौं तो ध्यान न व्यापै ग्यानौ परिया खाली।
जोग कथौं तो जोग न मानै महा कठिन घरघाली।।
अति गंभीर कहूँ थाह न पाऊँ विनती सुनहु मुरारी।
कहे मलूक मैं यहै जानिके आया सरनि तुम्हारी।।

पद राग सोरठा माया प्रर्सान खंड

राम तेरी बड़ी बहादुरी माया।
जा के बल निहचिंत भए तुम सब भरमार अडाया।।
जहं तुम्ह कहहु तहाँ उठि दौरै जाइ मौ वासे तौरै।
छता अनेक जौं लगहि ग्यन के तबहू ना मुख मोरे।।
मुनि गंधर्व अनेक संघारे दैतन किय चबैना।
या के डर जन थर-थर काँपै ना कछु लेन न देना।।
जो कोई बैर करै संतन सों ताका खोज न राखै।
कहत मलूक पछारि शत्रु कह रुधिर बेगि दे चाखै।।
एहि विधि अपनी विनती हरि कों प्रथम सुनाई।
कहै मलूक गुरुदेव सों बहुरि कहो एहि भाई।।

गुर सो विनै एहि भाव सोरठा

श्री गुरु परमेवोदार हरि की माया अति प्रबल।
कहिए अब निरधार भौ समुद्र केहि विधि तरौं।।

रमैनी चौपाई सिष वचन

कहौ गुरु केऊँ राखौं काया। अति प्रबल हैं हरि की माया।।
कैसी भाँति ततु ठहराई। कैसे आत्म जीता जाइ।।
कैसे सियार सिंघ सों लरै। कैसे माता डाइनि मरै।।
कैसे पिता जाइ जरि मूल। कैसे मिटै हिय का सूल।।
पांचों बैरी अति बलिवंड। जेन जीता सात दीप नौ खंड।।
काम कसाई क्रोध चंडाल। आसा वैरी त्रिस्ना काल।।
लोभ डोमरा कुदयादारी। मन साचु हरि देइ दुख भारी।।
पाप पुंनि दुनौ कंसवाती। जन्म जन्म जारत है छाती।।
कर्म जजीर बँधा ससार कहौ गुरु केऊँ उतरौं पार

कैसे कटै काल का फंदा। कैसे खिदमति पावै बंदा।।
कैसी भाँति जोगैए जोग। कैसे मिटै हिए का रोग।।

कैसे भौंरा कौलहि पावै। कैसे जग जंजाल मिटावै।।
कैसे राँडी छोड़े साथा। परम ततु केऊ आवै हाथा।।
कैसे मनुवा निर्मल होई। कैसे मैल जाइ सब धोई।।
कैसे गुरु आत्मा जागै। कहत मलूक भ्रम केंऊ भागै।।

गुरु क्रिपा वाकि दोहा

यह जिज्ञास सुनाय गुरु सरनाइ पाई।
भवसागर के तरन कों गुरु जुगति बताई।।

क्रिया करि गुरु जुगति बताई आपा खोजे भर्म नसाई।।
गुरु प्रताप काल तें जूझै। आपा खोजे त्रिभुवन सूझै।।
सबद ब्रह्म का करै विचार। सोई चलै जियत होई छार।।
संतन की सेवा चित लावै। पाहन पूजि न मन भ्रमावै।।
कामिनि कनक कलह का भाँडा। इन ठगिनी सारा जग डाँडा।।
हो तन हँसै मरत नहिं रौवे। ताकों राडन कबहूँ बिगौवै।।
परम ततु जो दृढ़ कै गहै। माया मोह में कबहूँ न बहै।।
गुरु का वचन करै परतीत। सोई साधु जाई जग जीत।।
सत संतोष हिएँ में राखै। सो जन राम रसायन चाखै।।
काटे कटै न जारें जरै। अर्ध नाम लै भौ जल तरै।।
न्यारे होहि पिता अरु माई। अग्नि बुझै सीतल होइ जाई।।
मनुवा मारि करै ना खंड। कबहूँ न सहै देह का दंड।।
गुरु गोबिंद सार मत दीन्हा। भला भया जो आत्म चीन्हा।।
बड़े भाग सों आत्म जागा। कहत मलूक सकल भ्रम भागा।।

भर्म भागा गुरु वचन सुनी मोह रहा नहिं लेस।
तब माया छल हित किया महा मोहनी भेस।।
उन कों आवत देखि कै तब कही बात समुझाई।
अब मैं आयो हरि सरनि तेरो कछु न बसोई।।

हम सों मति लागहि री माया।
थोरे सेती बहुत होगी सुनी पै है रघुराया।।
अपने नाऊ है साहिब हमारा अजहूँ समुझ देवानी।।
काहू दास के वस कीर दैहै भरत मरहिगी पानी।।
तर हुंड चितौ लाज करु हमरी डारि हाथ तें फाँसी।
जन पर तेरा जोर न चलि है रछपाल अविनासी।।
कहे मलूक अब चुप करु ठगिनी औगुन राखु छपाई।
जे जन राम नाम कह उबरे ता पर कछु न बसाई।।

मैं समुझाऊँ तोहि। माया मेरी बात सुनू।।
कछु चाउ नहि मोहि। ख्याल हमारे मति परहि।।
ऐसे बौरे देवाने के ख्याल परै मति। चाकर राम कौ मैं समुझाऊँ।।

फूल औ पान पटारे कि नागिन दै चुपरी मैं कैसे कै पाऊँ।।
दास मलूक मिलै मनमोहन कामरि वोदि कै बैठि लडाऊँ।।
रहों भरोसे राम के वनिजिहि कबहू न जाऊँ।।
हरि को बिद तो खाऊँ मैं अब तुझहि न पतियाऊँ।।
तेरी चंचल प्रकृति है ताते अधिक डराऊँ।।

माया तोहि न पतियैहो।
धूति धूति सारा जग खया अपने निकट न लैहों।।
पतिवरता को वर तन तेरे कहा भरोसो करिसे।।
अति चंचल परकृति तुम्हारी याही ते तोहि डरिये।।
जौं गाड़ौं तौ गाड़ि विगुयौ धाती धरि पछताऊँ।।
बाटि चोटि सब दुखियन दैहों तबहिं बड़ो संच पाऊँ।।
सैंतत ही विपरीत होइगी मोहि कलंक लगैहै।।
जानत हौं घरघली खोजा बात कहत छलि जैहै।।
तेरे कारन देखी माया घर घर होति लराई।।
करि विचार बहुत पिय मारे खा न काहूँ पाई।।

देव पितर अरु राजा रठी काहू सों दीन न भाखों।।
कहत मूलक प्रताप क्रिसन के बिनु आदर लेहि राखौं।।

पद राग सोरठा

जोलाहिन अब न जाऊँ तोरे द्वारे।
बहुत दिनन कों तो वह पाई सुतवा मोर बिगारे।।
या चित ठोर न राखिहि जब तूँ करती पाई।।
ताना बाना तोरि अडारहि दर-दर ही घरहाई।।
हाकिम हूँ का हुकुम न मानहि ऐसी धूतिया खोटी।।
तिनि लोक के गाहक मूसे खाई-खाई भंई मोटी।।
आवत जावत परे पग छाला कमरा अजहूँ पाऊँ।।
अब की बार पकरि मेहतरि यहि मोह कम हाथ लगाऊँ।।

चौथे गाँव मिला एक जोलाहा काज भला वोन कीन्हा।।
कहै मलूक मोहि टुक अमोलिक घर बैठे विनि दीन्हा।।
यह सुनि कै माया लखेउ जानो मेरो भेउ।।
बोली मैं करि हों सदा हरि भगतन की सेउ।।
जेन ठगिनी सब जग ठगा ठगी सो राम सहाई।।
छूटी मन की डगमगी भई बुधि बलसाई।।

नैया मेरी नीके चलने लागी।
आँधी मेह तनक नहि व्यापै यदा साहु बड़भागी।।
राम राइ डगमगी छोड़ाई मोह कम करि बरियाँ लाया।।
गुन लहस की हाजति नाँहि ऐसा साज बनाया।।
औसरा परे जौं परवत बाँझैं तऊ न होती भारी।।
जेन सत गुरु यह जुगति बनाई ता की मैं बलिहारी।।
सूखें परै तौ कछु डर नाहिं न गहिरे का सासा।।
उलटि जाई तौ बार न बाकें ईसक बड़ा तमासा।।
कहै मलूक जो बिनु सिर खेवे सो यह साज बखानै।।
इस बोहित की अकथ कथा है कोई विरला केवट जानै।।

मिटै गै मन की चपलता मूची पाछिल हार।।
एकहि हरि की क्रिपा ते लागी खेप हमार।।

अबके लागी खेप हमारी।
लेखा दीया साहू अपने कों सहजति चीठी फारी।।
सौदा करत बहुत जुग बीते सदिन डटी आई।
अब की बार बेबाक भये हम जम की तलब छेड़ाई।।
चारि पदार्थ नफा भए मोहि वनिजिहि कबहू न जैहों।
अब ढहनाई बलाई हमारी घर ही बैठा खैहों।।
वस्तु अमोलिक गुप्तहि पाई ताती बाउ न लाउ।
हरि हीरा मेरे ग्यान जौहरी ताहि पैं परखाँउ।।
देउँ पितर अरु राजा राठी काहू सों दीन न भाखैं।
कहै मलूक मेरे रामै पूंजी जीव बराबरी राखौं।।

दोहा

जीवहु तै प्यारो अधिक लागै मोहीं राम।
बिनु हरि नाम नहीं मुझे और किसी से काम।।
कहै मलूक जब ते लई हम हरि जी की वोट।
सौवत है सुख नींद भरि डारि भ्रम की मोट।।

जब तें लीन्हीं हरि की वोट।
हलुके भये भार से उतरे, डारी दई पापन की मोट।।
लेखा दिया साहु समुझाया, बहुरि न खाई जम की चोट।
कह मलूका बाजी जीती गुरु प्रताप तें पाकी गोट।।

दोहा

जीती बाजी गुरु परताप तें भया मोहा नरवार।
कहै मलूक यौं हरि क्रिया तें भयो जौ भौ जल पार।।
सुखद पंथ गुरु देव यह दीन्हीं मोहि बताई।
ऐसो ऊपट पाई अब जग मग चलै बलाई।।

अब मैं बाट न चलि हौं भाई।
परग परग पर जोखिउ लागै बहुत होत ठगहाई।।
बड़े-बड़े लाख करोरिन लसिकर पैंडे चलतें लूटे।
काहू का खुर खोज न रौखैं उनसे हाथी छूटे।।
चोरन मिलि वट कुटी करावै महा मवासी राजा।
उहां कछु न्याउ तफाउस नाहिं जातही होई अकाज।।
महा सुगमबट एक पैडा सतगुर मोहिं बताया।
कहै मलूक काहू खूँट न पकरा खेम कुसल घर आया।।

दोहा

यह महिमा हरि भगति की कही मलूक विचारी।
तरै सो भौ संसार को गहि हरि नाम अधार।।
इति श्री ग्यान बोध हरि भक्ति महिमा वरनन प्रथम विश्राम।।

दोहा

नमो-नमो पुनि-पुनि नमो नमो पुरुष भगवान।
अर्ध नाम जाके तरे जल ऊपर पाषान।।

अथ नाम महिमा वरनन

राम नाम तत सार है हित सौं सुमिरै सोई।
राम नाम सुमिरत सदा जोग जग्य सिधि होई।।
राम नाम सुमिरत सबै जगत भए भौ पार।
आरति जग्यासी आरथी ग्यानी निर अहंकार।।
भगतन की कहिए कहा जैहिं सों हरि संग हेत।
अधम अजामिल-से तरे राम नाम मुख लेत।।
राम नाम जपिए सदा जेन केन प्रकार।
कहै मलूक भव तरन को नामै है आधार।।

श्री गुरु महिमा वरनन

हरि को नाम जहाज है करनधार गुरुदेव।
घट औघट दुर्गम सुगम जानत सबई भेव

सबै भेव गुरुदेव जब सिष कों दिया बताई।
कहै मलूक तब संत संग तरै राम गुन गाई।।

संत महिमा वरनन

गुरु गोबिन्द अरु संत सो नहि अन्तर निरधार।
भक्ति ग्यान वैराग मग खेई उतारैं पार।।
नाम प्रथक एतिनि हैं पै तीनौ निज एक।
कहै मलूक सोई जानि है जाके ह्रदय विवेक।।
तीनों की अब एकता देंउ तेहि विधि समुझाई।
जेहि विधि समझे ते सबै संसै जाइ नसाई।।

भगति, ज्ञान, वैराग एकतु वरनन

ए त्रै है त्रै रूप अद्वितीय पार ब्रह्म के प्रेम आनन्द सरूप।।
सत वैराग ग्यान दान तीनों ही सुख मूल है कहिए कहाँ सुमूल।
रहै आपु समें गोइ जेंऊ बीज विर्छि फल फूल।।
बीज सबनि को बन है तरु वैराग अनूप।
भगति फूल रस ग्यान में है, रस प्रेम स्वरूप।।
बीज परत सुध खेत में उगै अंकुर निर्वेद।
सो बाढ़ै सतसंग तें मिटै दुरासा खेद।।
जब निपजै वैराग दृढ़ भगति फूल तक होई।
ततु ग्यान फल पाए ताहि न मेटै कोई।।
ग्यान नीर सों सींचिए जब तरि वर वैराग।
तब उपजै फूल में रस हरि पद अनुराग।।
बीज माह तरु फूल फल तरु फल बीरे जहोई।
अजर बीज हरि भगति है दृढ़ करि गहिए सोई।।
भगति भाव जाके ह्रदये लहै सो गुरु तें ज्ञान।
कहै मलूक पुनि प्रेम तें ताहि मिले भगवान।।

सप्त भूमिका ग्यान की वरनन

सप्त भूमिका ग्यान को प्रेम भगति दस भाऊ।
आठ भाँति वैराग को है अभ्यास प्रभाऊ।।
प्रथम नाम सबके कहौं एहि संग हरि गुण गाई।
जग विरिक्त अनुरक्त हरि निज अनभौ दरसाई।।
ग्यान भूमिका सप्त की अब कहौ सातौ नाम।
एहि मग हरिक भगति दृढ़ पहुँचे हरि के धाम।।

ग्यान की सप्त भूमिका नाम वरनन

सुभ इच्छा सविचारना ग्यान भूमिका दोई।
तनमांसा के परे सो सत्वापति तब होई।।
असंसक्ति पुनि भूमिका तब पदार्था भाऊ।
सप्तम तुरिया भूमिका जहां न चाऊ अचाऊ।।
जन मलूक वरनन कियो सप्त भूमिका ग्यान।
जाके स्रवन विचार ते लहिए पद निर्वानि।।
एहि सातौं को रूप अब सो सब देऊ बुझाई।
कहै मलूक जेहि समुझे संसै सब नसि जाई।।

सप्त भूमिका का रूप वरनन

।। दोहा।।

सो सुभ इच्छा भूमिका को कवि कहत विचार।
जहं उपजै हरि भगति रुचि छुटै विषै सो प्यार।।
सो विचारना जहँ करत सार असार विचार।
सपन रूप जग जानि कै मन छाड़ै विषै विकार।।
तनमांसा सो जानिए कहत विवेकी लोई।
जहँ छूटै आन उपासना विस्न भगति दृढ़ होई।।
सत्वापत्ति सो जानिए जहँ हरि को निजु रूप।
दरसै यौं सब जगत में जेंउ पनिगन में सूत।।
असंसक्ति सो जानिए जहँ सुनि ब्रह्म ग्यान।
बार-बार मनन करत छुटै देह अभिमान।।

सो पदार्थाभाव जहँ प्रगटै प्रेम प्रकाश।
रीझी देई हरि आपन पौ मन संकल्प विनास।।
तुरिया सप्तम भूमिका जहाँ न द्वितीया भाव।
जन मलूक के मन तहाँ प्रेम भक्ति को चाव।।
प्रेम भक्ति दसधा कहत सो अब कहो बखानीन।
एकहु जो गहिए भले लहिए पद निर्वाण।।

प्रेम भगति दस भऊ वरनन

।।दोहा।।

स्रवन, कीरतन, पुनि सुमिरन, पद सेवन, वनवंद।
दास्य, तन, सखा, काय निवेदन ते पुनि प्रेमानंद।।
दस प्रकार की भगति यह प्रगट मुक्ति को तंत।
कहै मलूक दृढ़ के गहै परम विवेकी संत।।
दसधा को जो रूप अब देउ सोउ समझाई।
ताहि समुझै जो हरि भजै बसै सो हरिपुरी जाई।।

दसधा भगति सरूप वरनन

।।दोहा।।

सुवन, सुजस हरि को सुनब, कहब कीरतन सोई।
सुमरिन जो हरि सुमरिए स्वाँस-स्वाँस प्रीत होई।।
पद सेवन, अरचन, वन्दना, हरि भगतन की सेऊ।
भगतन कों भगवंत सों कहो अभेव गुरुदेऊ।।
सो दासत्व, सखत्व, कहो श्रीमुख आपु मुरारी।
सब की सेवा कीजिए व्यापक ब्रह्म विचारी।।
जिन तन हरि हित दीजिए काय निवेदन सोई।
प्रेम बिना नहिं होई सो प्रेम भए ही होई।।
सकल अंग जेऊ देह में नवों भगति तेउ जानु।
दसमे प्रेम को जानिए निस्चै कै जेऊ प्रानु

प्रेम भक्ति जो दृढ़ करे सहित ज्ञान वैराग।
कहै मलूक तेहि पुरुष को जानिए पूरन भाग।।
भक्ति ग्यान कहो वरनि अब वैरागौ सुनि लेहु।
अंग याके सघन आठउ चरन कंवल चित्त देहु।।

वैराग अष्टांग जोग वरनन अभ्यास

जम, नेम, आसन, करिसु दृढ़ प्राणायाम सुधारि।
प्रतियाहार पुनि धारना ध्यान समाधि न टारि।।
कहो जोग अष्टांग यह करै जो नर अभ्यास।
कहै मलूक हरि भगति दृढ़ लहै सो हरिपुर वास।।
येन आठौ को रूप कहो पातंजलि विस्तारी।
अब वरनौ संछेप तें सो सुनि करहु विचारी।।

अष्टांग अभ्यास वरनन

सत, अहिंसा, ब्रह्मचर्य, परधन तजब बिकार।
दया, अर्जव, छिमा, सौच पुनि संग्रह मित्याहार।।
एहि दस को है नाम जम कोविद कहत बखानीन।
दसौ नाम अब नेम के कहौ सुनौ दे कान।।
ईश्वर पूजा आसतिक जप सन्तोष तप दान।
चहव कर्म सुभ असुभ तजि होम अरु सुनिवो ज्ञान।।
आसन चौरासी सकल पथ अरु सहज विसवास।
प्राणायाम त्रिविधि कहत पूरक कुंभक रेच।।
प्रत्याहार मन चपल कों अनत न दीजै जान।
धरिए चित्त विभु रूप में धारन ताहि बखान।।
सोई ध्यान जब होई दृढ़ यह मिति निति हिय माह।
दृश्य दृष्टि दृष्टा हरि होना ही होना है।।
अष्टम अंग समाधि जो सो अब कहु बखान।
जगिए जेहि सविकल्प सों निर्विकल्प विलीमान।।
वरनो दास मलूक यह जोग अंगन को भेउ।
ज्ञान भक्ति वैराग दृढ कीजै हरि पद सेउ।।

मिलि तीनौ की भूमिका जेहि विधि साधन होई।
कहौं सो अब ता भेद को जानै बिरला कोई।।

ग्यान भगति वैराग भूमिका एकत्व साधन

सुभ इच्छा सों श्रवण होई श्रवण सु इच्छा होई।
पै सुभ इच्छा प्रथमहि कही वरनत कविलोई।।
पै सुभ इच्छा तें श्रवन करि जम नेम आसन धारि।
कीजै हरि-हरि कीरतन नित अनित विचारी।।
प्राणायाम प्रत्याहार हरि सुमिरन बारम्बार।
पदसेउ अरचन चित्त करि तनमासाहि निहारी।।
पुनि धारि हरि चरन चित्त करि दासत्व सखत्व।
हरि में सब जगत जानि कै लहिए सत्वापतित्व।।
ता पाछें धरि ध्यान हिय कीजै काई निवेद।
असंम्मक्ति लहि जाहि मिलि जे सब तन क्रित खेद।।
तब समाधि में पगि रहे न पदार्था कोई।
साक्षात हरि होई तब दृष्टा दृष्ट समाई।।
सोई तुरिया सोई लक्षण, सोई है विग्यान।
कहै मलूक सोई निर्विकल्प सोई पद निर्वान।।
क्रम-क्रम सब की भूमिका बाढ़त या परकार।
ग्रास-ग्रास प्रति होत जेऊ तुष्ट पुष्ट आहार।।
कहऊ भूमिका भाऊ अब जग्यासा उपदेश।
जो एहि मारग अनुसरै सो पहुंचै हरि देश।।

शुभइच्छा भूमिका सिष जिग्यासा वरनन

गुरु एहि भव जलधि तें तरिए केंउ करि उतरिए पार।
ए थे हरि भजन को फंदी रहे संसार।।

श्री गुरु वाकि दोहा

फीके है सब विषै रस तजि तन संग प्यार।
तरिए भव संसार को गहि हरि नाम अधार।।

जब सुभ इच्छा माह जीव यौं गहै नाम अधार।
तब विचारना को तिस हित सहज होई अधिकार।।

दुतिया भूमिका वैराग नैष्ठा वरनन
सिष वचन

श्री गुर विषै संग मन अरुझि रहेउ जें ऊतार।
सो तिन सों केउ सरुझई करै हरि कीरतन प्यार।।

श्री गुरु वाकि दोहा

जब मन जानै जग असतितव तजि विषै विकार।
जम नेम आसन करि सदृढ़ करै हरि कीरतन प्यार।।
जब विचारना माह जीव यौं तजै विषै विकार।
तब तनुमांसा को तिसहि सहज कोई अधिकार।।

तृतीय भूमिका तनमांसा सिष वरनन

श्री गुरु होई दयाल अब यह संसै देहु निवारी।
केंऊ करी मन तजि चपलता रहै हरि सरनि द्वार।।

श्री गुरु वाकि दोहा

सुमिरन, पदसेऊ, अरचन, वन्दन, प्रत्याहार।
प्राणायामी अभ्यास किए तैं तजै न पल हरि द्वार।।
जब तनमाँसा माह जीव यौं गहि रहै हरि द्वार।
सत्वापत्ति को तिस हि तब सहज होई अधिकार।।

सत्वापत्ति चतुर्थ भूमिका संसय वचन
(प्रश्न)

श्री गुरु दृश्य अनात्मा आत्म नहिं दरसाई
ऐसे दृष्य अरूप की सेव करौ केहि भाई।।

श्री गुरु वाकि दोहा

निज परमातम रूप है व्यापिक चेत अचेत।
यौं विचारी चित्त धरिए दासतन अरु हेत

जब सत्वापत्ति माह जीव यौं दृढ़ ब्रह्म विचार।
असंसक्ति को तब तिसहि सहज होई अधिकार।।

असंसक्ति पंचमी भूमिका सिष वचन

श्री गुरु जी तुव पद सरनि तुम सरनाई राई।
केंऊ छूटै भै काल को केंऊ हरि भगति दृढ़ाई।।

श्री गुरु वाकि दोहा

ध्यान धरि गुरु रूप को काया कीजै भेंट।
छूटि जाई भै काल को वाढ़ै हरि सों हेत।।
असंसक्ति मह जीव जब यौं तजै तन अहंकार।
तब पदार्थ भाव को होई तिसहि अधिकार।।

पदार्थी भाव षष्टम भूमिका सिष वचन

श्री गुरु भ्रम कैसे नसै केंऊ करि होई प्रकास।
मनमधुकर कैसें लहै हरि पद पंकज वास।।

श्री गुरु वाकि दोहा

जहाँ न भ्रम तम सूर शशि आत्म स्वयं प्रकाश।
पैहै प्रेम प्रकाशते चरण कँवल में वास।।
जब पदार्थाभाव में यौं जीव् धरै प्यार।
तब तुरियापद विमल को हो तिस अधिकार।।

तुरिया सप्त भूमिका प्रेम लछना भगति

प्रेम ज्ञान जब होई दृढ़ रहै न भ्रम को लेस।
तब मलूक संसै बिना क्या देई गुरु उपदेश।।
कही भूमिका भाई ते जिज्ञासा उपदेश।
शनै-शनै एहि मग चले सो पहुँचे हरि देश।।
सुनि हरि नाम विचारी यौं तजिए विषै विकार।
सत टहल कीजै दया व्यापिक ब्रह्म विचार।।
पुनि धरिए हरि ध्यान उर निजु सरूप पहिचान।
प्रेम भगति उपजै मिलै श्रीपति श्रीभगवान।।

प्रेम भगति नहीं छाँड़िए जब लगि घट में प्राण।
कहै मलूक तब पाइए अस्थित पद निर्वाण।।
ग्यान, भगति, वैराग ए तीनौ जऊ तजि एक।
बीतराग ज्ञानी सोई प्रेम भगति जेहि टेक।।
ए तीनों पुनि त्रिविधि है प्रगट कहौ समुझाई।
सात्विक, राजस, तामसिक सो सुनिअव चित लाई।।

त्रिविधि वैराग निष्ठा वरनन (सोरठा)

हरि हित जो वैराग। सोई सात्विक जानिए।।
राजस त्रिय अनुराग। धन अनुराग सो तामसी।।

चौपाई

मन वचन कर्म करै हरि पूजा। सात्विक भगति न जाने दूजा।।
आन देव पूजै अभिमानी। फल आसा से राजस जानी।।
रिपु निमित हित धर्म न करै। भगति तामसी भूत न विस्तरै।।

त्रिविधि ज्ञान निष्ठा

सात्विक ज्ञान सो जानिए आत्मदर्शी होई।
सर्व द्वंद्व ते मुक्ति होई मान अपमान न कोई।।
नाना दरसी राजसी फलक लोभ लुभाई।
छुद्र देवतन को भजै बिनु हरि फल नहि पाई।।
व्यापिक हरि जानै नहिं पंडित मानी होई।
ज्ञान तामसी जानिए यह अज्ञानी सोई।।
ए तीनों गुन प्रकृति के रज तम तजि सत सेऊ।
अति सुख है या पंथ में हरि जन जानत भेऊ।।
ग्यान भक्ति वैराग सुत एक कहो ममुझाई।
अब परोक्ष, अपरोक्ष का कहो प्रगट दरसाई।।

अब परोक्ष अपरोक्ष ज्ञान वरनन

है परोक्ष निज ज्ञान सो जो गुरु श्रुति ते होई।
सो अपरोक्ष बखानिए जब निज अनभै होई

अनभै होई परोक्ष बिनु सो जेउ सपन विलास।
बिनु जाने संजीवनी जानि परे जेऊ घास।।
संजीवनी को भेद जब भेदी देई बताई।
आवै मन विस्वास निजु लीजै कंठ लगाई।।
त्यौ अनभै गुरु ग्यान होई सोई है परवान।
कहै मलूक जाके सुनत पावै पद निर्वाण।।

क्षेय पुरुष भगवान वरनन जगत पति

आदि पुरुष अविगति अलख रहत भेद आकार।
ताकी इच्छा ते प्रकृति कियो जगत विस्तार।।
ता जग मह जगदीश लीन्हों आई निवास।
न्यारो नहिं लखि परै पुहुप मध्य जेउ वास।।
पुहुप मध्य जेउ वास है प्रकृति पुरुष यौं संग।
घटै बढ़ै शशि की कला निज शशि सदा अभंग।।
है अभंग परमात्मा शिशु किशोर एहि भाई।
जैसे छाया वृक्ष की लघु दीर्घ दरसाई।।
लघु दीर्घ नहीं आत्मा सब में यौं सब भाई।
नभ में घट, घट मा नभ, घट मठ होई न जाई।।
कहों न जाई, सब मे रहै, सब तैं रहै निनार।
जैसे मनि गन सूत में त्यौं जग को आधार।।
जग अधामनि सूत जेंउ अरु पुनि जगत नेवास।
जेऊ घट-घट प्रति बिम्बु शशि निज शशि बसै आकाश।।
शशि जेऊ साक्षी सर्वदा जन मलूक को ईश।
सकल प्रकासिक जानिए जेऊ रवि तेऊ जगदीश।।
सो पुरुष को सत चित्त अकह कहो एहि भाई।
अब ज्ञाता वरनन करौ लछ बाचि समुझाई।।

ज्ञाता लक्षार्थ वरनन दोहा

लक्ष्यार्थ यौं जानिए भूषण कन कन आन।
जीवई सत्ता मर्म सो लीजत है मन मान।।

रवि ते किरनी न आन कछु जलहि तरंग लखाऊ।
खाँड खिलौना, सुत्र पट तेउ, जग आत्मा भाऊ।।
जग आत्मा मृदु मिट्टी कुम्भ, जेउ बुलबुला जल मह होई।
जग हरि में, हरि जगत में, सिंह तर गण दोई।।
दोई नहीं आकाश शशि दृष्टा दोष दरसाई।
कहै मलूक मन भ्रान्ति ते यौ जीव ईश लखाई।।
लक्ष्यार्थ ग्याता कहो बाँचि अर्थ यह जानि।
जेऊ नलनी के सूबटा मानै तन अभिमान।।
तन अभिमान अज्ञान ते सो छूटै गहि ग्यान।
मुक्ति बध्य दोऊ जीव को सो तहाँ न लीजै मानि।।
सो तहां बध्य न मुक्ति है नहीं ज्ञान अज्ञान।
आत्म ज्ञान उदय भये चिद् अभ्यास न आन।।
दोऊ अवस्था जीव की कहे मलूक बखान।
बंधो होत अज्ञान गहि मुक्ति होत गहि ज्ञान।।
लछि बाचि जीव के कहे गुरु श्रुतिवचन प्रमान।
अन्तःकरण अध्यास को मर्म अब कहौ बखानि।।

अन्तःकरण अध्यास वरनन दोहा

ब्रह्म अंश जीव निर्विकार, अन्तःकरण निहार।
मानि रहो बिन ही भये ताके सकल विकार।।
ब्रह्म सच्चिदानन्द धन जग व्यापक नभ न्याई।
सकल प्रकाशी सुप्रकाश साक्षी दिनकर भाई।।
ताहि दिनकर की किरनी जेऊ ताको तन अभिमान।
निज नहीं पै जेउ कपि सुआ रहो वृथा ही मान।।
वृथा मानि रहो जीव सब अन्तःकरण सुभाई।
जेउ अति नर्म फिटिक में कुसुम आभा दरसाई।।
कुसुम चतुष्ट्य अन्तःकरण मन बुद्धि चित्त अहंकार।
तेन के रूप पृथक कहौ सो सुनि लेहु विचारी

मन को अंकित सु कुल बुद्धि पीत अनुहार।
हरे वरन चित्त जानिए अरुन वरन अहंकार।।
मन को धर्म संकल्प है बुद्धि को निश्चयै धर्म।
चित्त को सुमिरन धर्म है होमै अहंकार कर्म।।
मन निर्मल अरु समल जेऊ दर्पन होई प्रकार।
एक एक में दरसहि भाऊ अपार।।
बुद्धिऊ द्वै परकार की अव्यवसाई, व्यवसाई।
प्रथम मिलि मन चपल होत दुतिया मिलि ठहराई।।
चित्त भूमिका पाँच है सुनहु करौ सोई बोध।
क्षिप्त, मूढ़, विक्षिप्त पुनि अरु एकाग्र, विरोध।।
संशारी प्रथमा द्वितिया तृतीया मध्यमं जान।
चौथो उत्तम पाँचए मानो पदनिर्वाण।।
चित्त की वृति अनेक हैं कहं लो कहौ विस्तारी।
जहाँ जैसो तैसो तहाँ उतिम ब्रह्म अकार।।
अहंकार पुनि त्रिविधि है तन में जीव में ब्रह्म।
जेऊ दर्पन में दुईत भाऊ ये सब तेऊ भ्रम।।
सागर माँह तरंग जेऊ पवन लागि दरसाई।
तेऊ इच्छा त्रिगुण में है, हरि जलनिधि माई।।
अहंकार सुभा यह एनको जीव निज जानि।
जैसी इच्छा का तल है गति होपै ता उनमानि।।
इच्छा को कारन जगत, इच्छा बिना बिताई।
इच्छा विनसें जीव को जीवपनो नसि जाई।।
निर्नय जीव ब्रह्म को अन्त:करण अध्यास।
श्री गुरुचरन प्रसाद कहो, कहत मलूका दास।।
ब्रह्म और जीव अध्यास यह वरनि कहो वेद उक्ति।
सो बहुरौ कहि अब कहौ बंध मुक्ति की जुक्ति।।
जीव ईश जेऊ पंछी बसहि दोऊ तरु माँहि।
दोऊ सुन्दर रूप हैं रंग वरन कछु नाहिं।।

रंग वरन तिनको नहीं आत्मा साक्षी भाई।
तीहू अवस्था का मर्म जानि रहै अलगाई।।
रहे अलग रवि जेऊ सदा निरअहंकार निनार।
शब्द, रूप, रस, गन्ध पुनि नहिं परसै वेवहार।।
नहिं परसै वेवहार कछु, कहो प्रगट दरसाई।
जेऊ रसना षटरस परसी नेकु नहीं चिकनाई।।
नहि भीजै जल कुकरी रहै सदा जल बीच।
तेऊ निर्मल परम आत्मा लियै न दुख सुख बीच।।
जीव इसको अंश है पै निज रूप भुलाई।
स्वानें कर्ता भोक्ता इन्द्री रसन लोभाई।।
बहुरों वश तिन रसन कें जीव मरकट अज्ञान।
बिन ही भए गुन देह कें गेत आपुस को मानि।।
बद्ध अभिमानी बन्ध है मुक्ति भक्ति अभिमान।
अन्तजाम तीसागति कहो वेद बखानि।।
जब जीव ए दोउ मानत जिधरै रूप निज ध्यान।
प्रेम भक्ति रस उपजै सुनि अनहद धुनि कान।।
सुनि सुनि अनहद ध्वनि श्रवन रहै न देह संभार।
निज अपन जानि जन तब दरस देहि मुरारि।।
दरसन देहि मुरारि जब निज अपनो जन जानि।
कह मलूक हरि कृपा तें लहै सो पद निर्वाण।।
ग्यान, ग्याता, ज्ञेय, बहुरि मुक्ति बंध समुझाई।
ध्यान ध्याता ध्येय कहो क्रिया कर्म दरसाई।।
सत, रज, तम, गुण पुनि कहेऊ उपदेश अरु हिय।
कह मलूक या जीव को है सतसंगति प्रिय।।
सतसंगति करि ज्ञान लहि छोड़ विषै विकार।
कह मलूक सों राम भजि तरैं सिंधु संसार।।
यह मलूक निर्नय कियो सकल शास्त्र मत सार।
भव सागर के तरन को नामै है आधार।।

नमो जगत गुरु जगत पति असरनि सरनी मुरारी।
जो कोई आवै सरनि तकि तरै सिंधु संसार।।
कहो द्वै विश्राम सुभऊ वट मग को भैऊ।
अति संक्षेप सो मैं कहौ विस्तृत सनुष्ट हरि सेऊ।।
ऊँचा अति निर्वान पद ताको ऊबट पंथ।
सप्त भूमिका ज्ञान गहि चढ़ै विवेकी संत।।
सप्त भूमिका ज्ञान की प्रथक प्रथक जिज्ञास।
प्रथक प्रथक उप इच्छा पुनि प्रथक शिष्य विस्वास।।
ते पद साख सो कहौं कहै मलूक समुझाई।
सनै सनै एहि मग चले वसै सो हरि पुर जाई।।

इति श्री ग्यान बोध

भक्ति विवेक

अथ सुभ इच्छा प्रथम भूमिका भगति रुचि उत्पत्ति वरनन दोहा

सुभेच्छा नर हदै उदै राम क्रिपा ते होई।
कहत सोई सुभ वासना जिज्ञासा यौं सोई।।
बिनु जिज्ञासा न लहै श्रीगुरु को उपदेस।
श्वेत न होहि दूध सौं श्याम वरन जे केश।।
सो बड़ भागी जानिए जाके मन जिज्ञास।
श्री गुरु ते उपदेश लहि गहै भक्ति विस्वास।।

शिष जिज्ञासा वचन (प्रश्न)

श्री गुरु एहि भव जलधि ते केऊ कर उतरि पार।
आए थे हरि भजन को फंदि रहे विषय विकार।।

पद राग विलावल

आए थे हरि भजन को सो तो कछुब न कीन्हा।
कनक कामिनी फंदि रहे गोपाल न चीन्हा।।
भाऊ भगति के कारने प्रभु यह तन दीन्हा।
कहै मलूक माया पापिनी मनुंवा हरि लीन्हा।।

गुरु वाक्रि दोहा

फीके हैं सब विषय रस तजि कुपंथ संग प्यार।
तरिए भौ संसार को गहि हरि नाम अधार।।

राग सिंधकरखा

जगत सिंध के पार कों नाम ही नाऊ है।
चित्त लै ला सत गुरु करनधारी।।
ना कहूँ घाट नहिं पायत थाह कहूँ।
भँवर भ्रम तजि चरन तट संभारी।।
पाप अरु पुण्य की लहर संगम जहाँ।
जनम भै तहाँ नहि टरत टारी

लोक अपलोक के भावना भाव तजि।
सरनि भजि सारंग धारी।।
शब्द घर खोजि कै सोधि लै, मौन धरि श्वास।
प्रति श्वास रहिए विचारी।।
मोह के वोह जो घाव बहुत बहि गए।
मुक्ति तब लहै गुरु सूत्रधारी।।
द्रोपदी, ग्राह, गजराज, संकट हरन अजामिल।
पतित गणिका उधारी।।
सरनि जे जे गये पार तेते भये।
जन मलूका कहत यौं पुकारी।।

पद नट राग

तरि-तरि गये ते ई दास जेन नाम को विश्वास ।
कीन्हों तजि जगत की आस।।
रैनि दिन हरि नाम लेते बैठि संतन पास।
कह मलूका भाऊ भोले पायो बैकुण्ठ वास।।

चेतावनी

सन्तहू राम नाम ततु सारा। राम सुमिरि भौऊ तरहु पारा।।
राम नाम पट तर कछु नाहिं। देखा ढूँढ़ी सकल जग माँही।।
दीन गरीब जो कोई जाऊँ। ताहि राम की रीझी बताऊँ।।
आपा मेटि भगति जो करै। सहै कुशब्द जीवता मरै।।
छाड़ै निंध्या, वंध्या अहंकारा। सो ग्यानी बहु रामहि प्यारा।।
तपसी सो जो तन सुख देई। आत्म दगधि न हत्या लेई।।
हृदयै माह लगावै छारा। सो तपसी बहु रामहि प्यारा।।

अब के जो हरि नाम न लेते।
जम के दूत बड़े जालिम धकेलि नर्क में देते।।
साकठ का वै सील न राखै इतन मैं सुनि पाई।
तबही जाई कै माला लीन्हीं प्रीति राम सों लाई।।

विष इनके संग बकि बकि मरते जनम अकारथ जाता।
भरमि-भरमि चौरासी परत भली भई कुशलाता।।
लेखा देत महा दु:ख होता साँसति सहते भारी।
कहत मलूक गया घर बहुरा क्रिपा कीन्ह मुरारी।।

दोहा

ऐसी भाँति विचारी जीव विषै वास विसराई।
करन लगो हरि सों विनै कहै मलूक सुख पाई।।

अधम उधारन हार।
अपनो विरद संभारी कै मोर करहु उधार।।
सुनि कै मैं आयो तब तेरी सरनि राम।
जबतें सुनियो साधु के मुख पतित पावन नाम।।
यह जानि पुकार कीन्हों अति सतायो काम।
विषै सेती हुवा आजिज कहै मलूक गुलाम।।
नाम तुम्हारा निर्मला निर्मोलिक हीरा।
तू साहिब समरथ है, हौं मल मूत्रक कीरा।।
पाप न राखै देह में जो सुमिरन करिए।
एक अछर के कहत ही भौ सागर तरिए।।
अधम उधारन नाम है प्रभु विरद तुम्हारा।
यह सुनि सरनागति आइया तब पार उतारा।।
तुझसा गुरुवा तूँ धनी जामे बड़ी समाई।
जरत उबारे पाण्डवा ताती वाऊ न लाई।।
कौटिक औगुण जन करै प्रभुहि मन न आनै।
कहै मलूका दास को अपना करि मानै।।

विसम्भर भगवान।। जगत आस पूरन करन
देहु राम सोहि दान।। जेहि आवै संतोष जिय

तूँ साहिब लिए खड़ा बंदा नासाबूर।
जाकों जैसा चाहिए देता है भरिपूर।।
लाख करोरैं गाँठि में तौ भी यह रोवै।
मरता मारा फिकिर का सुख कबहूँ न सौवै।।
आँखै फेरै बुरीय भाँति देखत डर लागै।
जौ कोड़ी फले खटै दिन चारिक जागै।।
बिन सन्तोष दुखि भया बहुतै भरमाया।
कह मलूक यह जानि कै तब सरनि आया।।

राम मैं ऐसा बंदा तेरा।
अपनी कीमति कहौ आपु सौं जो बुरा न मानहूँ मेरा।।
मैं असवार फिरौ तुम पयादे तुम साहिब मैं पाजी।
मैं सोवौं तुम जागहु निस दिये ते पर हौ राजी।।
ऐसी तौ कुवति है मुझमें जैसे कचा सूत।
खिजमति को मैं बड़ा आलसी खैवे को मजबूत।।
भीतर मेरे फिरै कतरनी बाहेर रहौं खलास।
जो लावहु सो लागै मुझको कहत मलूका दास।।

वन्दा तौ गन्दा गुनाह करै बार-बार।
साहेब तो सिरजनहार कुछु मन में न आनिए।।
मेरे कछु हाथ नहीं, हाथ सब तेरे साँई।
खलक के हिसाब बिच मुझहि मति सानिए।।
रहम की नजरी करु, कूरहम दिल तें दूरि करु।
किस हू के कहे सुने चुगली न मानिए।।
कहता मलूक मै तो रहता पनाह तेरी।
मदन गोपाल मुझहि अपन कै जानिए।।

रे खता भील कदि कर धी भलाई जिय आपुजानि।
निष्फिल कदि हुआ था मुरीद कहुँ किस का

गीध कदि ग्यान के कितैव का किनारा छुवा।
व्याध और बधिक इंसाफ किया तिसका।।
नाग कदि माला लैकै बंदगी करी थी।
बैठ मुझहि भी लागा है अजामिल का हिंसका।।
एते बद राहहुँ की बदी करी थी माफ।
जन मलूक अजादि पर एती रिसि का।।

विष्णुपद पा जियरा के पतन न सुनियत अधम उधारन।
मन परमोधन इंद्री सोधन विषैवास निरवानन।।
अजामिल गणिका तें जस भयो अनेक पतित के तारना।
और देव की कृत्रिम पूजा तुम अक्रिय के कारना।।
या घट मे जो यह मति दीन्हीं तो ढरिए ढरनि सुढारना।
दास मलूक कृपा करि राखौ चरन कँवल की सारना।।

दोहा

जब सुमीछा माँह जीव यौग है नाम उधार।
यह शुभेच्छा निष्ठा कहि मलूक विचारी।।
तरै सो भौ संसार कों गहि हरि नाम आधार।
तब विचारना को तिसहि सहज होई अधिकार।।

शुभेच्छा पूरन

अथ विचारना द्वितीय भूमिका दोहा

नमो जगतपति जगत गुरु बद्रीपति भगवान।
सकुचत जेन को नाम सुनि काम क्रोध भय मान।।
जब शुभैच्छा माँह जीव कीन्हों नाम अधार।
तब रुचि भई हरि कीर्तन अरु कियो यहि विचार।।
सो तौ मन बिनु मान विनय मन तजे विशै विकार।
तेन हित जग्यासा करत करि विनती परकार।।

राम राई मन भूप है सब जग द्वंद्व नचाई।
बल करि गहो न जात यह कीजै कौन उपाई।।

राम राइ केंऊ लीजै मन राजा।
काहू भाँति मेरे हाथ आवै महा विकट दल साजा।।
कई बार एन पैंडे चलते लसकर लूटा मेरा।
चहुं जुग राज विराजी करता अदब न मानै तेरा।।
एही सब द्वन्द्व मचावै मारै रैयत खासी।
काहू नृपति कौं नजरि न आए ते मान मवासी।।
कहै मलूक मेरे जिय जैसी आवै छल बल कै एहि गहिए।
इसहि मारि काया गढ़ लीजै तौ सुख सों घर रहिए।।

दोहा

श्री गुरु ऐसो मन चपल माया मोह सोहाय।
समुझाएँ समुझ तन ही कीजै उपाय।।
सब बातन कौं चतुर है सुमिरन को काँचा।
राजा राम विसारी कै माया मनु राँचा।।
जेंऊ-जेंऊ नचाया कामिनी तेंउ ही तेंऊ नाचा।
कह मलूक भ्रम त्यागि कै मत गहत न साचा।।

श्री गुरु वाकि

यह सुनि बोले क्रिपा कै गुरु सरनाई राई।
महाबलि मन भूप है बल करि गहो न जाई।।
ताकी अब उत्पत्ति कहौं सहित सकल परिवार।
पुनि जे विधि वसि कीजिए कहि हो सोऊ विचार।।

मन राज का उत्पत्ति वरनन

पुरुष प्रकृति के जोग में है मन को औतार।
जेहि संकल्प विकल्प ते उदय भयो संसार।।
मन दासी प्रवृति है, निवृति है सतनारी।
मोह विवेक आदिक सकल तिन को है परिवार

प्रवृत्ति कुटुम्ब वरनन दोहा

मोह काम अरु क्रोध लोभ दंभ गर्व बरियार।
मद अधर्म प्रवृत्ति सुत ए आठौं निधार।।
प्रथम अविधा दृष्टि है मोह राई की नारी।
ममता है ताको वधु, पुत्र देह अहंकार।।
रति नारी है काम की सुत को लालच नाम।
लोलुपता ताकी वधू भ्रमत आठऊ याम।।
क्रोध नारि हिंसा प्रगट पुत्र बली अविचार।
भूल वधू ताकी कठिन जगत बढ़ावै रारि।।
लोभ नारी तृष्णा अधिक पुत्र पाप को मूल।
चिन्ता ताकी है वधू करवे को उर सूल।।
दंभ नारि आसा भरी पुत्र प्रगट घमण्ड।
वधु कुविद्या जानिए जाते जगत प्रचंड।।
गर्व नारी निन्दा प्रगट जायो अपयश पूत।
अपकीर्ति ताकी वधू अति निर्लज बड़ी धूर्त।।
भयो जोबन मद रूप मद त्रिमद धनमद आन।
बहुरि बाहुकुलराजमद विद्या मद लै आन।।
मद की नारी ईर्ष्या ताको पुत्र विरोध।
असपरधाता की वधू जो मेटै निज बोध।।
नारि सपरधा झूठ सुत है अधर्म को जानि।
बुद्धि विषय आसक्ति है जाके रंचन कानि।।
आठौ सुत प्रवृत्ति के तिन का यह परिवार।
असद वासना तिनके भई अब वरनो गिरधार।।
अद्या श्री भगवान की तातें भयो अज्ञान।
असद वासना ता हृदये किया मोह सनमान।।
तिन तें यह संतानि पुनि प्रगट भयो जग आनि।
असद संग जग भाऊ पुनि चित्त विक्षेप भौ जानि।।
संसै उर आलस अधिक कर्म असंजम नाम।
जन्त्र-मन्त्र अरु रोग बहु पुनि प्रपच अभिराम

तीनि ताप सुता पुनि भई अब सुनु तनया भेऊ।
जगमति निर्दय भ्रष्टता व्याकुलता निज टेऊ।।
कुमति धृष्टता कामना मलितन मति कहत बखानी।
पुनि जो सिखना विषमता बहुरि कुटिलता मानी।।
जे उपाधि के मूल सब प्रगट भए जग आई।
कहै मलूक एनते छूँटव नहिं बिनु राम सहाई।।
राई विवेक विचार धीरज अरु संतोष सुत।
सील धर्म वैराग सत ए आठों निवृत्ति सुत।।
प्रथमहि राई विवेक की ब्रह्म सुविधा नारी।
पुत्र ज्ञान ताके भयो सत संगति तें प्यार।।
पुनि विचार की नारि है निश्चयै नेम सपूत।
शुद्धता ताकी जानिए दुहिता परम अनूप।।
धीरज की नारी छिमा पुत्र अर्जव जान।
मुदिता ताकी है वधू जानत सन्त सुजान।।
तृप्ति नारी संतोष की पुत्र परमानन्द।
करुना ताकी नारी है मेटन को दुख द्वन्द्व।।
नारि साधुता सत की सुत निहकल्प सुजान।
आत्मा जिग्यासा वधू है तिन्है निर्मल वान।।
शील नारी लज्जा निपट पुत्र सुजस जग माहि।
कीर्ति है ताकी वधू पटत न दीजै काहि।।
मुग्धा नारी धर्म की तासु पुत्र परगासु।
पुत्री है सद्वासना वधू शुद्धता जासू।।
सुनु कुटुम्ब बैराग को उदासीनता नारी।
तनया परम तपस्वनी पुत्र अभ्यास विचारी।।
ताकी वधू निरास ताकी सुन आठ सपूत।
जम अरु नेम आसन सदृढ प्राणायाम अरूप।।
प्रत्याहार अरु धारना ध्यानौं ब्रह्म समाधि।
कहै मलूक जेहि ते मिटै सबही जगत उपाधि।।

ए सब सुत निवृत्ति के कुटुम्ब सहित मति धीर।
विष्णु भगति तातें भई मिटन को जम पीर।।
प्रेम भयो हरि कृपा ते सुन्दर निर्मल रीति।
दीन्ही ताहि ब्याहि कै विष्णु भगति कुल दीप।।
प्रेम भगति के पुत्र नौ करत प्रेम आनन्द।
श्रवण कीर्तन सुमिरन पद सेवन अनुवन्द।।
दास तन सपत्व पुनि काय निवेदन वीर।
जन मलूक तेहि दरस तें होई ताप त्रय कीर।।
यह प्रवृत्ति निवृत्ति को वरनो सब परिवार।
संगत गुन एन को कहौं सो सुनि लेहु विचारि।।

प्रवृत्ति संगति गुन वरनन दोहा

है प्रवृत त्रिय मोहनी विषै जोग है डारि।
तासों मन हठ मानि कै परी देह के जारि।।
समुझु रे प्रवृत्ति प्रीति बधिक को सो प्यार है।
तासों हठ मानि कै मन पर देह जार है।।
छुद्र नंद ह्दै धारि निज स्वरूप गुण विसारी।
ग्यान दीप डारी लेत अग्यान अहंकार है।।
विषय मधुर मारि मारि वासना असद में डारि।
मोह मद पियत सुधारि काम सुखे विहार है।।
जन मलूक कह पुकारि तजिए प्रवृत्त प्यार।
भजिए निशु दिन मुरारी यह भलो विचार है।।

निवृत्ति संग वरनन सुखदाई दोहा

सुखद नारि निवृत्ति है जेहि सुत ससन्तोष।
तासों मन हठ मानि कै पावै जग ते मोक्ष।।

सुखद है निवृत्ति जाहि नाम को आधार है।
तासों करु प्रीति जगत मोह मन बिसारी है।।

विषै संग कनक जोरी वासना भली खोरी।
रस विवेक साँझ भोर पियत तन विसारी है।।
निज अनभै के प्रकास ब्रह्मानंद सुख नेवास।
संसै करि ना सहृदै प्रेम भगति धारि है।।
कहत जन मलूक दास सत संग सुख की रास।
पुरवत हरि सकल आस यह मत श्रुति सार है।।

दोहा

संगति गुन निवृत्ति कियो, समुझि किजियो सोई।
अब सोऊ निर्णय करौ जेहि विधि मन वसि होई।।
मन मिरग बिनु मूँड का चहुँ दिस चरने जाई।
हाकि लिया अज्ञान सो बाधा तत्व लगाई।।

जैसे फूटी नाऊ।
केवट बाँधे जतन करि तेंऊ तूँ मन समझाऊ।।
जो अपमारग जाई नहि तैं मन हटकु रे मन हटकु।
अपमारग को जान ना वैज्ञान तें धरि पटकु।।
जाई कै करु साधु संगति बेमुखिन सों सटकु।
कहै मलूका भजु गोपालहि मारि अपन मटकु।।

शिष्य वचन

यह मन मैं धोया बहुत साबुन ततु लगाई।
काम क्रोध प्रदत्त की मैल तउ न जाई।।
यह मन निर्मल कऊ करौ जाकै मैल अपार।
कैसेहु छूटे न कालिमा गुरुवा सिर भार।।
जतन अनेक मैं कै धा कार तजै कुटिलाई।
कामी क्रोधी लालची अपमारग जाई।।
रहै उदास हरिनाम तें परनिन्दा भावै।
पुवाजियै अपकर्म कों इस हि को समझावै।।

ज्ञान की रेहूँ सौ दिया ततु साबुन लाया।
कहै मलूक तऊ ना छूटा बैरी लाख धोवाया।।

गुरु वाकि

मन प्रवृत्त सों काम बस मानत मिर्था मोही।
तू तिन्है यौं समझाउ जेऊ में समझाउ तोहि।।
यह 'परवर्त कसाइनी बकरी सब संसार।
पोषि-पोषि सब को हनत या ते चलहु संभारी।।
जब जग बकरी जोनि कसाई।।
निति उठि जिबह करै रे भाई।।
एक लख जीव जोज ही मारै।।
करते खून न कबहूँ हारै।।

परगट काल रुप है नारी। या तें संतहु चलहू संभारी।।
भौसागर इहई भरमावै। भरमत भरमत पार न पावै।।
यह गरे में फाँसी। मारै विष लाई गासी।।
याके मारै होइ सुमार। साँस न आवै दूजी बार।।
आठौ पहर छूरी पैनावै। बिषयन कू ही ढेर लगावै।।
विषयन का मुड यौरा वधै। काम बान विषयन को साधै।।
विषयान को नीकें कै पाले। विषइयन को मोटे कै मारै।।
विषइन का खुर खोज न राखै। गलै लागि कै लोहू चाखै।।
विषइयन को जरि मूल उखारै। विषइयन को जारै पर जारै।
विषयी तकहि पराई जोई। खटे कबहू न बरकत होई।।
आया रिजुक विषै ते आई। मरै कुमीचु न भगति सोहाई।।
विषयी के मुख स्याही लावै। दे कलंक सब देस फिरावै।।
विषयी के घर लागै आगि । विषयी कहूं न बाचै भागि।।
अब लै आऊँ इन्द्रीजित संत। जा कै संग रमै भगवन्तु।।
माता कै देखै परनारी। तिन संग खैलै सदा मुरारी।।

पर दारा पर धन तें डरही। राखै सत असत न करहीं।
दया दीनता छिमा सोहाती। सीतल करहि सबन की छाती।।
सपने काहु कौं न कल्पावै। मगन भए गोविंद गुन गावै।
माटी छुवते सोना होई। काम क्रोध सब डारा खोई।।
राम रसायन सदा कमाते। जरी बूटी के निकट न जाते।
टौना टामन करहि न पार। वोन कें राम नाम ततु सार।।
जो कोई सरनी राम की आवै। ताको ताती वाऊ न लावै।
राम रसायन भरी-भरी पीवै। कह मलूक जुग जुग जीवै।।
यह परवर्त को भेद मैं जीव समझाये तोहि।
तुमन को समझाऊ अब छाड़ि देईगो मोह।।

शिष वचन जीव

सुनि श्रीगुरु के वचन जीव मन सों कहों बुझाई।
कहा निर्वर्त विसारी के रहो प्रवर्त लोभाई।।

कवित्त

यह नारिन होई नागिनी काली जेहरी न होई मीचु घरानी।
त्रिया न होई तीर है विष का, बिरले काहू या की गति जानी।।
सब नर अरुझि रहा इस ही सों लाड़ लड़ाव ऊमिरि विहानी।
राम राई जरि मूर बिसारा, कहै मलूक यह अकथ कहानी।।
मन याकें है रूप द्वै एक कनक एक नारी।
दोउ सेती प्रीति तजि भजि हरि पद करु प्यार।।

दीप, सीख, पर-नारी।। संत नहि तेहि अदिरहि
बिषयी बिना विचार।। जरि-जरि मरहिं पतंग जेऊ

दीपकि नारी पुरुष पतंग। जरि-जरि मरहि विषै के रंग।।
बाती छुई लेते सुख मानि। बहुरि होई जियरा की हानि।।
एक तलफै एक मरि-मरि जाही। पशुवन को इतनी सुध नाही।।

कनक कामिनी जलती आगी। विरला जन कोई बाचै भागि।।
निकट न जाते संत सुजान। कहै मलूक जन कें दृढ़ ज्ञान।।

कवित्त

आँखिन देखी महा डर लागत काल को रूप है नारि पराई।
बैरिन कों करतार गढ़ी कुल कंटक को तरवारी बनाई।।
बात कहे जम की चढ़ी फाबत सके मुए जेन प्रीति लगाई।
दास मलूक प्रताप गोपाल के साधु की संगति ने सुधि पाई।।

सुधि पाई सतसंग ते काल रूप परनारी।
भूलेहूँ नहि कीजिए परनारी सों प्यार।।

विषनु पद

नारि सो नेह न कीजिए दुर्गति का भाँडा।
बात कहे सिर जात है जम मारत पांडा।।
चौरासी भरमाया चारौ जुग डाँडा।
कहै मलूक हरि नाम लै छुटि जाय माँडा।।

धन मोह निवृत रूप वरनन

मलूका माया मिस्री की छुरी मति कोई पतियाई।
ऐन मारे रस स्वाद कै ब्रह्मै ब्रह्म लड़ाई।।

माया जौ पै काहू संग जाती।
तौ ए लोग धरिक नहि जियते कुटी कुटी मरते छाती।।
जग सपना साँचा कर माना बिसरे दूत बराती।
एते पर समुझि नहीं मूरख लिए रहैं जेंऊ धाती।।
आठौ पहर जरै त्रिस्ना में चिंता देह चबाती।
कहै मलूक सिर परी ठगोरी भाव भगति न सोहाती।।
मन दोई रूप प्रवृत्ति के, मैं तोहि दिया बताई।
तजि दोऊ कों संग रहु हरि पद को चित लाई।।

हरि पद सों चित्त लाई जो सुमिरै नित हरि नाम।
कहै मलूक सुखी सोई जाकी गाँठि राम।।

सोई सुखी जाकि गाँठि राम। ताके सुफल भये सब काम।।
राम धन संचत होई मन चाऊ। कबहूँ न लागै ताती बाऊ।।
जबहि चलै तब ले चलै साथ। अजर अमर धन है रघुनाथ।।
जेन-जेन किया विषै सो हेत। ताको मोहडो देखिये संत।।
निसु दिन चिन्ता तनहि चबाई। सब जमु वारि विषै मे जाई।।
निर:शंक सोवै पाँऊ पसारि। जाके धन है कृष्ण मुरारी।।
राम नाम आई पर नीति। कहत मलूक गये जग जीति।।

मन बोला परवृति संग छिन कत जानहि जाई।
मिलि सतसंग हरि को भजन करौ कौन विधि भाई।।
जीव कहौ तैतौ छिन कहु तजि न सकत यह संग।
पे तेरो यह छिनक में छाडि़ जाहिगें संग।।
तातें या को संग तजि भजु गिरधारी लाल।
है दिन दोइ का पेखना त्रिय सुत मंदिल माल।।
माल सुत मंदिल मोहनी दिन दोई देखि ते भाई।
सपने का सुख मानता यह सब वस्तु पराई।।
लाड़ अनेक लड़ावता माया मन मोहा।
जे अपने कै जानता छिमें होई बिछोहा।।
लाख करोरै जोरता कछु मरम न जाना।
एक कौडी नहि संग चलै जब होई पयाना।।
लाल जवाहर जब जुरे, जुरे मानिक मोती।
यह फिकिरि घर लछमी कछु औरौं होती।।
जेन जेन राम बिसरिया सुख कबहु न पाया।
इस ठगिन सों प्रीति करी ब्रह्मादि रोया।।
करना होय सो कीजिए क्या गहर लगाया।
कहै मलूका अब घरी छलि जायेगी माया।।

जै मलूक दोहा

यह माया छलि जायेगी भजि लै हरि सुख राशि।
दिना चारि इस जगत में है सराई का वासि।।
यह संसार सराई है सब लोग बटाऊ।
काल बली तेन बचै सिर राखि जटाऊ।।
जाना बहुत दूरी है जाका बोर न अन्ता।
पंथी पंथ सवारी ले भजिए भगवन्ता।।
हाथहु पर्वत तौलते तिहुँ लोक में जाने।
तेऊ आधा न रहे जाई खाक समाने।।
जिस को तू अपना कहै सो कछुब न तेरा।
कालि चलैगा कूच कै सब छाड़ि के डेरा।।
एक बटाऊ आवते एक देखो जाते।
एक जो रहे मुकाम कै बहुतैइ तरते।।
ना ऊहाँ जाति न पाति, है नहीं ठौर ठिकाना।
माई का सगा ना बाप का, इस मुलक ही जाना।।
जानत मरना नाहि है तन अमर कै पाया।
कहै मलूका सोई गये मुसै चौटा माया।।
रे मन सूता क्या रहै उठि भजु चरन मुरारी।
जैसा सपना रैन का तैसा यह संसार।।

भाई रे सपन यह संसार ।
सपन लेना सपन देना सपन विधि व्यवहार।।
भाई सपना बाप सपना, सपन सुत और नारि।
सपन चेरी सपन चेरा देखुज यहि विचारी।।
सपन हाथि सपन घोड़ा सपन मंदिल माल।
सपन का सपना भया जब आनि पहुँचा काल।।
सपन साहू व नोटे सपना लेखा करहि बनाई।
बही लिखि-लिखि बही गये पापी परे दोजख जाई।।

सपन में सउ थान रहिले तेई जग में सार।
कहै मलूका हरि भजन करि भए भौजल पार।।

दोहा

गहर न कीजै हरि भजत सुनु मन मेरी बात।
औसर बीता जात है बहुरि न ऐसी घात।।
ऐसी घात न चूकिए सुनु-सुनु मन मेरे।
यह औसर जाँदा चला भजु नेकु सवेरे।।
चौरासी लख भरमि कै पाई नर देही।
जम सौं तिनुका तोरि कै भजु राम स्नेही।।
पर-निन्दा पर-नारि सों तू होहि उदासी।
मारी दामरि जाहीगा एन किए खलासी।।
सरन गए गोपाल की होंदा दिन-दिन लाहा।
चहुँ जुग प्रीति निवाँहदा होता दिन-दिन लाहा।।
दास मलूका की विनति भजु गिरवरधारी।
पार न वाका जाइगा मेटै दु:ख भारी।।
दु:ख भारी तेरे मिटहि भजु गिरधारी लाल।
रे मन गाफिलता छोड़ दै फिरत ग्रासे काल।।

गाफिल होई का रहा अयाना। सेई ले साधु तजि अभिमाना
अपमारग ते चलहु संभारी। बात कहत लै जैहै मारि
कनक कामिनी दोउ बट पार। काहू उतरन देहि न पार
एन भोंडिहु काइ है सुभाऊ। मझधार गहि बोरहि नाऊ
हरि के चरन कँवल चित्त देहू। जीवन जन्म सुफल कर लेहु
मिथा जिनि खोवहु नर देही। कहै मलूक भजु राम स्नेही

साँचा सौदा राम का संत संग वैपार।
खोटा वनिज न कीजिए पूँजी जात न वार।।

मन तै वनिजि करत है खोटा। नफा न आवै दिन-दिन टोटा
टका लाई उपराजै पैसा। देत हिसाब होई दहु कैसा

खाए जात है पूँजी सारी। बोलत नाही साहू है भारी।।
अपमारग लगि हाट लुटावै। हरि के नेग न कौड़ी लावै।।
पूँजी घटै तो बाधे सरिये। कहत मलूक साहू ते डरिये।।

साधु संग चित्त राखिए कुपथ पाँव जिन देहू।
डरिये गुर गोविंद सों हित सों कीजै नेहू।।

अरे मन कछु गोबिन्दहि डरिए।
अपमारग में एकी एका जाइन कबहूँ परिए।।
लेखा देना महा कठिन है अति अपराध न करिए।
कहत मलूका राम सुमिरि कै भौसागर ते तरिए।।

राम सुमिरि रे मना जो चाहत कुशलात।
अटके जग जंजाल में जन्म सिरानो जात।।

जन्म सिरानो जात है अटके जंजाल।
कैसे सुख सोवते जाके बैरी काल।।
फूले-फूले फिरत है नहि तनहि सँभाल।
झूठी माया देखि कै सब मारहि गाल।।
लेखा देना कठिन है किन चेतहू हाल।
कहै मलूक मारे गर्व के भूला गोपाल।।

दोहा

रे मन तन का गर्व का कहा देह का प्यार।
जैसे शीशी काँच की विनसत लगै न वार।।

मन तैन काहे पर गर्वाना।
यह देही जैसे काँच की शीशी अजहू मर्म न जाना।।
जो दिन तो को आजु ग्यो है सो दिन कालि न जैहै।
ठेस लगै पुनि फूटि जायगी फिरी पाछे पछतै है।।

ये जो भाई बन्धु तुम्हारे सपने का सा लेखा
उदै अस्त की बात कहत हौ कोई अमर न देखा।
छत्रपति राजा जिजोधन एको तरसै जाके भाई
तेउ घरिक में काल गरासेउ, जेउ मूसेहि लेत विकलाई।
रावन वैर किया रघुपति सों लंका देखि भुलाना
बोला गलते वार लगतु है रावन जात न जावना।
चलत फिरत एक बड़ा तमासा सब कोई नाता लावै
प्राण गये जब काया भिन्न कै तब कोई निकट न आवै।
कह मलूक चेतु अचेता लेखा देत दुख पैहै
जब गुरजहु की मारि परैगी तब कछु जुबाब न रैहै।

दोहा

गर्व न करिये बावरे हरि गर्व प्रहारी।
गर्व ही तें रावन गये पाया दुःख भारी।।
जलनि खुदी रघुनाथ को जिय नाहिं सोहाती।
जीय अभिमान है ताकी तोरत छाती।।
एक दया अरु दीनता गहि रहिए भाई।
चरन गहो जाई साधू के रीझे रघुराई।।
एही बड़ा उपदेश है पर द्रोह न करिये।
कह मलूक हरि सुमिरि कै भौसागर तरिये।।
भौसागर के तरन कों है हरि नाम आधार।
सो विसरायो सहज ही रे मन मूढ़ गवार।।
मन मूढ़ गवारा केऊ हरि नाम विसारा।
जाना दूरि अवहि केऊ थाका पंथ खाँडे की धारा।।
वेगि दे चेतु हुआ क्या गाफिल अब कछु करहु सवारा।
विषै वास ते बाज न आया मारि-मारि जम हारा।।
रामहि सुमिरु, छाड़ कुटिलाई यह मत लेहु हमारा।
कहत मलूका सेऊ साधू जन उतरि जाहु भव पारा।।

उतरि जाइ भव पारा।। संत संग हरि भजन करि
कीजै नहीं अबारा।। यह औसर फिरी ना मिलै

यह औसर कब पावहुगे।
हीरा जनम दियो परमेश्वर सो कब ठौर लगा वहुगे।।
जब देखौं तब बाइ विवक्ते केंऊ हरि के मन भावहुगे।
अंत काल तब पूरी परी है राम सरनि जब आ वहुगे।।
तबहीं काल कनौडा होई है जब गोबिन्द गुन गावहुगे।
कहत मलूक प्रताप भजन के जम की तलब छोड़ावहुगे।।

राम भजन करि लेहि मन जब लगि तन कुशलता।
नदी नीर जेंऊ जन्म पद मारू मारू किए जात।।

जन्म जात मारू मारू किए।
जो दिन आजु सो कालि न मूरख अजहुँ वेगि दै चेतु हिए।।
मारो फिरै हरि नाम विसारे मानो मदरा पान किए।
झूठ बोलि परजिया नकरावत नर्क परत हौ काहि लिए।।
महा दुखन पाई नर देही बिना भगति धिक्कार जिए।
कहत मलूक करौ हरि सुमिरन छुटि जाहू बिनु लेख दिए।।
राम सुमिरि ले रे मना वृथा जन्म गवाऊँ।
औसर बीता जात है बहुरि न अैसा दाऊँ।।

कवित्त

राम कहु राम कहु राम कहु बाऊरे।
औसर न चूक भोंदू पाए भल दाऊ रे।।
जेन तोको तन दीन्हों ताको न भजन कीन्हों।
जन्म सिरानो जात लोहे कैसो ताऊ रे।।
राम जी के गुन गाऊ, राम जी सौं चित्त लाउ।
राम को लड़ाऊ नीके राम को रिझाऊ रे।।

राम को हृदय बसाऊ राम को मन में ध्याऊ।
राम जी के चरन कमल चित्त लाऊ रे।।
कहत मलूक दास छाँड़ि दै तैं झूठी आस।
आनन्द मगन होई कै राम गुन गाऊ रे।।

कवित्त

जेन गायो है राम, तिन कीन्हों है सयानो काम,
जेन नाँहि गायो सो तो पाछें पछिताइगो।।
दीया सो जन्म जब बूझते परैगी बूझी,
माया जै है छूटी जम दूत फारी पाइगो।।
हाथी घोरे रीझि चतुराई कै जवाल कीन्हो,
गर्व गुमान मूढ़ बोला सो बिलाइगो।।
कहत मलूक बिनु सुमरिन माधौ जी के,
वाही को अकाज होई है मेरो कहा जाइगो।।

मेरो कछू न जाई है अन्त सोई पछताई।
जो हरि नाम बिसारी है वाहि क्रोध लपटाई।।
वाद करत है असुर क्रोध मन राखत है पस।
निदंक हरि के चोर सदा रहते जम के बस।।
चुगुलि करहि कपूत अन्त कों पावत हैं गस।
साधुन पै डाभिन, छिमा करि पियहि राम रस।।
सबकों शीश नवाई जगत में पावत है जस।
विनती करही मलूक क्रिसन कर मारग है अस।।

दोहा

मन जीव सों यह भेद सुनि अति हिय होई उदास।
तब विचार लागो करन आयो मन विश्वास।।
झूठा मारग छाडि कै साचा मग गहिए।
हरि के चरन चित्त राखिए कहूँ अनत न बहिए।।

यह माया दिन दोई की तामे अटकि न रहिए।
कहै मलूक मारि जमन की काहे वर सहिए।।
यौं विचारि जीव सों कहो मैं लिय अब यह नेम।
तजि हों कामादिक विषै तजौं न हरि पद प्रेम।।

कवित्त

जो बन गवै हौं मन मोहन लड़ै हौं,
भया गर्व गुमान अभिमान तेज त्यागि हौं।।
करि हौं न बाद सब दासन को चेरा होई हौं,
ठाकुर के पाछें गुर चिउटा होई कै लागि हौं।।
रीझि हौं न हाथी घोरे कामिनी न दैहौं चित्त,
लालच के नाते परसादऊ न माँगिहौं।।
कहत मलूक अब ऐसी मेरे मन बसी,
और सब छाडि़ हौं हरि चरचा न छाडि़ हौं।।

दोहा

यह विचार कामादि सुनि घिरि आए मन पासि।
दाऊ धाऊ लागे करन डारि मोह की फाँसी।।
यह गति एन की देखी कै मन जीव सों कहो सुनाई।
कामादिक दौरे फिरत कीजै कौन उपाई।।

जीव वचन मन सों

तब जीव मन के वचन सुनि चरन कँवल चित्त लाई।
श्री रघुवर सो विनति किन्हीं यौं सिरनाई।।
मन भया व्याकुल राजा राम। निस दिन दगधै क्रोध काम।।
तुम तौ प्रभु जी रहे छपाई। पाँच मोहसिल दिए लगाई।।
एक घड़ी काहू कल न देहि। ग्यान ध्यान हरि आपू लेहि।।
देह धरे का बड़ा जंजाल। जहँ तहँ फिरत ग्रासे काल।।
आनि अचानक करत घात। जिय लै भागै कहता बात।।
एहि पापी सों कोऊ न बाच। निति उठि पेट नचावै नाच।।

एहि का उत्तर देहु मोहि। कैसे कै कोऊ मिलै तोहि।।
जियत नर्क है गर्भ वास। उपजत विनसत अति त्रास।।
कहै मलूक यह विनति मोरी। एन्हैं छोड़ाव बलि जाऊँ तोरी।।

एन तें बेगि छोड़ाइए महाराज रघुराई।
संसा भयो मैं धरि तन घुसा सरनि बिलिआई।।

राम मैं संसा भयो तन धरि कै।
सरनि तुम्हारी कीन्ह बिलावट आनि घुसा मैं डरि कै।।
कुकुर पाँच पचीस कुकुरियाँ फिरा करैं मोहि घेरे।
ठाढ़े होते फीली पकरैं बैठे आँखि गुरेरें।।
कलुवा कबरा मोतिया झबरा बुचवा मोहि डरवावै।
यातें लिया तुम्हारा पाछा अब कोई निकट न आवै।।
ए मैं देखें पाँचों विसहे एकौ नाम ना माना।
काटि काटि मोहि किया अहेरा कहत मलूक देवाना।।

जीव वचन दोहा

व्याकुल भया विनति करी राखहु सरनि मुरारी।
मेरो कछु न बसात है दीजै धर्म द्वारी।।

अब के धर्म द्वारी माधौ दीजिए।
संकट वेगि निवारु भगति तेरी कीजिए।।
घेरि लिया चहुँ ओर ते अरि दल आई कै।
जन को करहू सहाई लेहू छोड़ाई कै।।
काम क्रोध मद लोभ जराए मारते।। चक्र सुदर्शन कस।
केंऊ न सँभारते औरहु की वेर सूर हमै कायर भये।
अब परा मारिका आई खेत ते टरि गये।।
सन्मुख होई कै राम सत्रु बिचलाइये।
भागे वैरी वीर वीरदल जाइये।।

जल तें तीनौं देव अग्नि अपनी अपनी।
कहत मलूका दास मेरे बल तू ही धनी।।
एहि विधि अपनी विनती हरि को जीव सुनाई।
कहै मलूक गुरुदेव सौं पुनि बोलेऊ सिर नाई।।

श्रीगुरु परम उदार।। केऊ कर मिलिए राम सों
कामादिक बटमार।। चलन देत नहीं भगति मग

राजा राम मिलन केंऊ पाइए मोहि लीन्हीँ ठगयन घेरि रे।।
क्रोध तौ काला नाग है काम तो परगट काल।
आपु आपु को ऐंचते मोहि कर डारा बेहाल।।
एक कनक और कामिनी ए दोऊ बटमार।
मिस्री की छुरी गलें लाई कै एन मारा सब संसार।।
एन में कोई ना भला सब का एक विचार।
पैंडा मारहि भजन का कोई कैसें कै उतरै पार।।
उपजत विनसत थकि परा जियरा उठा अकुलाई।
कहै मलूक बहु भर्मिया मो पें अब नहीं भर्मा जाई।।
यह सुनि के गुरु क्रिपा निधि धर्म दया उर आनि।
कहन लगे निज सिष सौं ऐसी भाँति बखानी।।

कामादिक सब चोर।। मिले रहै मूसों यहै
केंऊ नहीं रोवै भोर।। जो एन मिलि सोवत रहै

सूतें-सूतें जन्म गँवाया।
माया मोह मसान परो सिर मरम न काहू पाया।।
मीठी नींद लई सुख अपने कबहूँ ना अलसाने।
गाफिल होई कै महल मुसाया फिरी पाछें पछताने।।
अजहूँ उठहूँ कहा तुम पौढ़े विनति सुनहू हमारी।
चहूँ ओर मैं आहट पाया बहुत भई भुँई भारी।।

बादी चोर रहत घट भीतर खबरि न काहूँ पाई।
कहत मलूक राम कोप हरूँ माँगहु मेरे भाई।।

तन धरि के कोई सुखी न देखा।
उदय अस्त की बात कहत हों सल सज सौ माँगे लेखा।।
जोगी जग में है अति दुखिया तपसी को दुख दूना।
आसा त्रिस्ना सब घट व्यापी कोई महल न सूना।।
बाटे-बाटे सब जग दुखिया का ग्रिही का वैरागी।
शुक्राचार्य दुःख के डर तें गजहि माया त्यागी।।
साचु कहौं तो हरि मोहि खीझै झूठा कहा न जाई।
कहत मलूक वोनहूँ दुःख पाया जेन यह चाल चलाई।।
कामादिक प्रबलता एहि विधि गुर समुझाई।
बहुरौं तेन की विजै कों दई यह जुगति बताई।।
विजै करैं एन कों सोई जो तजै विषै बेकार।
सत सन्तोष आनि उर गहै नाम आधार।।

श्री गुरु को उपदेश सुनि आई जीव परतीती।
सत सन्तोष सहाई लै लैहों पाँचों जीति।।

यह सुनि कै पुनि देवराज गये बिनु भगति सिराई।
तिनकों सुमरि पुनि पुनि ऐसी विधि बताई।।
पाँच पहर धंधे गये तीन पहर रहे सोई।
एकौ घरी न हरि भजे कुसल कहाँ तें होई।।
जो चाहत अजहूँ कुशल तो भजु राधे साई।
जा दिन का डर मानता सो बेला पहुँची आई।।
जाके लिए तूँ पचि मुवा सब दुःख की राशि।
रोई रोई जन्म गँवाइया परी मोह की फाँसी।।

तन मन धन अपना नहीं नहि सुत अरु नारी।
बिछुर बार न लागिह जिय देखु विचारी।।
साधु संगति कब रहुगे यह औसर बीता।
कहै मलूक वैरी पाँच में एकौ नहि जीता।।
यह कामादि विचार कों सुनत भयो बहु त्रास।
काया नगरी माह मिली ते सब भै भौ वास।।
भय भव त्रासी पाँच जन काया नगर मँझार।
देखि जीव सो नगर यौं लगो करन विचार।।

काया नगरी बड़ा मौसा। जहँ बसत है पाँच जौसा।।
ए पाँचौं हैं वैरी मेरे। जहाँ तहाँ मोही फिरत हैं घेरे।।
एक मारि मैं करि भारी। अलख पुरुष हैं कुमक हमारी।।
पाँचों मारि काया गढ़ लेउँ। हरि के नाम एक वैर देऊँ।।
एक बार मैं सन्मुख लरौं। कहै मलूक पाँचों बस करौं।।

यह विचार ठहराइ जीव मनसों कहो सुनाई।
साहिब रहम किया मुझहि सतगुरु हुवा सहाई।।

साहिब रहम मुझ पर किया। प्याला प्रेम का दिया।।
पीवत गया तन मन माति। तूँही-तूँही रटौं दिन राति।।
हुवा अलस्त मस्त जोर। डरि कै भागै पाँचों चोर।।
रहौं निशंक मैं जग माह। मुझहि किसहू का डर नाह।।
तुरी मैं पवन का साजा। दमामा ग्यान का बाजा।।
ताज न तत लिया मैं हाथ। बिरला पहुँचता मेरे साथ।।
काया गढ़ निकट लाग जाई। सतगुरु हुआ मेरी सहाई।।
अब तेरै जूझे ही पै बनै। साहेब सूरी वाकै गनै।।
दुष्ट न दीजिए केंऊ पीठी। हरि सौं जोरिए केंऊ दीठि।।
भागे भला न कहसी कोई। आगे जाते होई सो होई।।

पाछें पाँव नहि टारौं। मौ वासी पाँचऊ मारौ।।
जग में जीवना दिन चारि। कहत मलूक लरौं परचारि।।

लरि हौं अब परचारि मैं तैहूँ उठि धरु धीर।
सत सन्तोष सहाइ लै भेटु मोह दल भीर।।
सोई सूर सराहिए जो लरै धनी का हेत।
पुरजै-पुरजै कटि परै तऊ न छाड़ै खेत।।

यह सुनि मन सन्तोष सत हित जुत हिंए लगाई।
आयो ग्रह निवृत्ति के हित प्रवृत्ति विसारियाई।।
मन की यह गति देखि कै त्रिय प्रवृत्ति खिसियाई।
रोदन करत नृप मोह सौं कही बात तिन जाई।।
सुनि कै मोह महाबली चढ़ो जुधि के हेत।
इत तें चले विवेक नृप आए सैन समेत।।
मनसा भूमि सौहावनी पहुँचै दोउ दल आई।
सैन साजि गढ़े भए अपने-अपने दाई।।
सूर वीर दोऊ ओर के अतुलित बल बरियार।
कहै मलूक तिन सबन में, संत जो बड़े जुझार।।

सब से संत सिपाही गाढ़े। पाऊ पलक नहि जीन उतारहि
रहते रन में ठाढ़े। आठ पहर करते असवारी

चैन न पावैं धोरे।
बिनु सिर लरहि राम के आगे जाई मौवासे तोरे।।
प्रेम प्रीति का बखतर पहिरें ग्यान रत का खाँडा।
बात कहत वै दुश्मन मारै जेन सारा जग डाँडा।।
एकछत्र राज किया काया गढ़ द्वंद्व रहन न पावै।
कहै मलूक वेगि तेहि मारैं जो कोई मूँड उठावै।।

दोहा

प्रथमहि धायो कोपि कै काम बड़ो बरियार।
राई विवेक विचारि कै पठ्यो वस्तु विचार।।

काम और वस्तु विचार संवाद (राग सिंघ)

बड़ो सूर बल भर रन काम आयो।
देखी तिन वस्तुत विचार विचारि करि बिना वैराग मन में शंकायो।
राई तब बोलि वैराग सौं यौं कहो जाई अब तुम करौ सरनाई
मिलत वैराग विचार को बल भयो सुध निरूप जगमति मिटाई।
कहो तब मार विचार सों कोपि कै जाहि तू पलटि मति मंदभारी
देव वर जहाँ लौं वसि किए तहाँ लौं कौन जो मोहि तें केउ न हारी।
मैं विरंचि निज सुता रूप वसि किए इन्द्र को द्विज धरनि छवि लोभयो
पस्रंगी रिषि गाधि सुवनादिकन गवन में रुद्र मोंसों नहि वचन पायो।
कहो विचार बल तेहि जदिप घनो, मुझ बिना क्रिपिनी जग लेत मोहि
गई सुधि भूलि जो मान तेरो हनो शंभु जब बंक करि दृष्टि जो ही।
कपि यों काम तजि प्राणा रन मह परो रति भयो सोचु लालच संभारो
नारि निस्चै सुपन नेम विचारी कै धरि-धरि बेगिही ताहि मारो।
काम को जाति करि देव सुकदेव नर सत विचार जस जगत छायो
जन मलूका सरनि राम की जे न गहि जीति दल मोह सब भय मिटायो।

दोहा

उठो क्रोध तब करि क्रोध सकुयो वस्तु विचार।
धीरज ने धीरज दीयो अब मैं लरौ प्रचार।।

क्रोध धीरज संवाद करखा (राग सिंघ)

सुभट क्रोध करि क्रोध रन भूमि आयो।
चलो वीर बदि धीरज छिमा संग लै ग्यान मिलें बल अधिक पायो।
बोलो क्रोध करि क्रोध ने धीर मौसों सुनो केतिक बल तोहि जो लरन आयो
नींद अरु भूख जे न प्यास सागर तरे तेनहि मैं मारि गौ पद डुबायो।

छिमाँ भगवंत की ओट गहि रहे तब कही तुम हौ बड़े राखि लीजै
गयो नहि रोष धरि दोस पुनि यौं कही कहा तुम क्रिपनि पर दया कीजै।
कही तब छिमा बड़े दोस मन नहीं धरत पूतना दुष्ट विष देत तारी
बान के हेतु निर्बान दियो व्याध को भिगुलता हृदे धारे मुरारी।।
कोपि हिंस्या कहो और को जग बड़ो रुद्र मोतें नहि सकेऊ संभारी।
दक्ष को मान पुनि जग बढ़ो वसि कियो इन्द्र निजु गुरु को शीश झारी।।
तब कहो छिमा पुनि विनै करी क्रोध सौं सरनि गये संग हौं लै उबारो।
क्रोध को प्राण गयो छिमा आनन्द भयो चलो अविचार हिंसा संभारो।।
ग्यान गहि खड्ग सुविचार हिस्या हनी मारि अविचार आनन्द बढ़ायो।
जन मलूका तहां क्रोध को कौन भय तजि जगत राम की सरनि आयो।।

चढ़ो तहाँ वाकों बली लोभ हृदै धरि रोष।
राई विवेक विचारि तब पठयो सत सन्तोष।।

लोभ सन्तोष संवाद करखा (राग सिंध)

चढ़ो अटल वाको बली लोभ जोध।
इतहि सन्तोष कों राई आग्या दई ज्ञान अरु भगति निज रूप सोधा।।
कहो तब लोभ सन्तोष सों कोपि कै कहा तूँ क्या भगति है विचारी।
पंडु कुरु सुर जुरे अष्ट दश अक्षोहिणी तेऊ मम तेज नहि सकि संभारी।।
कहो सन्तो लरे मत्त बल कत कहा तोहि मिलि मूढ़ परै नर्क घोरी।
मुझे मिली सनक जनकादि साधु जन नाहि जीवत तुझे तीन कोरी।।
पुनि कहो लोभ अरु भीत अभिमान धरी जगत मह मीत नहीं धन सो कोई।
कियो सन्तोष किन काम धन कृपनि का बिना मोहि रंच जग सुख न कोई।।
कहो संतोष बिनु ग्यान आत्म उदय देह को लोभ मन ते न जाई।
आई जब संचरो ग्यान सत्या हरो लोभ तकि सन्धि यह कही सुनाई।।
कहो संत जड़ देहा लोभ क्या आत्मा अमर नहीं मरै मारे।
तृप्ति जब हीं उदै कहाँ त्रिस्ना रही पाप अरु ताप सब ही नेवारे।।
लोभ माया जरी मान आसा भरी भए आनन्द गुण तब उदासी।
काटियो लोभ को शीश सन्तोष तब मान आसा छूटी लोभ फाँसी ।

जाग्यो आनन्द नर देव जै जै करे भयो सन्तोष निवृत्ति रानी।
जन मलूका तहां सुख सदा जै सदा जहां रघुनाथ सारंगपाणि।।

दोहा

दंभबली तब आयो सैना साथ अपार।
चलो सत ताके निकट संग श्रद्धा लै नारि।।

बली दंभ रण खंभ सुन्दर बनायो।
चलो इत सत निष्कपट सुत संग लै ग्यान अरु भगति तब नृप पठायो।।
कहो तब दंभ पाखण्ड को बोलि के ढिग हटकु एन गुरु पग अचैआयो।
हसि कहो सत यह बात अति बुध सुनो आपनो दोष हम कों लगावौ।।
तब कहौ दंभ रे सत्त मैं एक दिन सहज ही ब्रह्मपुर को सिधायो।
बैठ विजोग कहूँ ठौर पायो नहीं चतुरमुख जहाँ अपनो लिपायो।।
यह सुन तब तक हो असत नहीं ए तो भलो मलिन चित्त आस पिण्डत कहावै।
भगति जेहि ठाँव मैं नाम तेरो नसै कहा ये बात हमकों सुनावै।।
दम्भ तब दोऊ कर जोरि विनति करै मैं तुम्हारो नहि भेद जानों।
अंक भरि लियो मिलि सत कों गयो ढिग असत तब भगति जानों।।
भक्ति मिलि ज्ञान सौं मन्त्र तब यह कियो बिना वैराग बल कछु न पूजै।
ज्ञान मिलि भजि वैराग आसा हनि मिलो तब सत सौं जुधि दूजै।।
सनो पाखण्ड जब कहो कर खडग तब सत की ओर करि क्रोध धायो।
ग्यान की मुसटिका हिय ताको हनो सो बिना आस जीवन न पायो।।
खडग विचार आत्म लियो सत तब भेंट वैराग सो दम्भ मारो।
जन मलूका भई जीति रन राम बल देव, नर सबनि जै जै पुकारो।।

दोहा

गर्व बलि धायो तहाँ सत रहो सकुचाई।
सील आई धीरज दीयो लै वैराग सहाई।।

गर्व-शील संवाद करखा (सिंघ राग)

वली गर्व सो कौन नर हाथ जोरै।
देखी चहुँ बीर की लोधि कंपित अधर सत कों निरखि भौहैं मरोरै।।
सत मन संकियो सील धीरज दियो मिले बैराग बल अधिक पायो।
सील कहो गर्व सों कुसल हैं मोह जी रावरे दरस तें दु:ख बहायो।।
गर्व मुख बक करि कहो निज नारि सों कहाया रंक को उत्तर दीजै।
सील तब यौं कही चूक हम तें भई सुनो बडराई अब छिमा कीजै।।
गर्व कहो रे निर्लज संगहि लिए फिरत महा डरपनि नहीं धीर तेरें।
सील गहि मौन सम बुधि को बान लै मारि निध्या सबै दु:ख नेवारे।।
तब कहो गर्व सभारु मेरे बलहि में निज पिता को न मान राखो।
देत उपदेस गहि केश गुरु सभा में देख यह सबनि मोहि धनि भाखो।।
तब कहो सील गहि चरन दीन होई तुम बड़े हौ न मैं भव जानो।
गर्व महि पर परो प्राण नाहिं रहो पुत्र अपजस अधिक मनस का मानो।।
बान सुक्रित लगे प्रान अपजस तजे मिटि गई रारि सुख बहुत पायो।
जन मलूका महान कीन्हीं क्रिया सील को सुजस जग मह बढ़ायो।।

दोहा

तब अधर्म रण माह चढ़ि आयो चौबाई क्रूर।
पठयो राई विवेक तब धर्म सूर बल भूर।।

धर्म-अधर्म संवाद वरनन करखा

सुनो राई जो अधर्म विकराल आयो।
बोलि कै धर्म कों राई अग्या दई भगति अरु ज्ञान संग पठायो।।
निरखि अधर्म कहै धर्म सों कोपि कै देव नर में प्रगट नाम मेरो।
जहाँ मैं तहाँ है भोग सब देह को मूए सब मुक्ति कहा काम तेरो।।
झूठ सुत बोलि पुनि वेद निन्दा करत मोहि बिना जगत नाहिं ना भलाई।
कहो तिन धर्म निज नारि सौं संग लै छाडू रे ढीठ अैसी ढीठाई।।
वरन आश्रम धर्म वेद परवान करि ग्यान उर भगति जब प्रगट होई।
व्यापि तब प्रेम रस रहैं हरि प्रेम बस सब तहाँ धर्म न अधर्म कोई।।

सोच मन में कीयो कछु न उत्तर दीयो मोह की सैन कों पलटि धायो।
जन मलूका सुमिरि नाम श्री राम को पाप को ताप सबही नसायो।।

दोहा

जब अधर्म रन तें गयो संकुचो मोह नरेश।
न्याई पठायो राई कहि जाहि मोह तजि देश।।

न्याई-अन्याई संवाद वरनन करखा

नृपति मन्त्र सुनि न्याई बलिवंड धायो।
राई आग्या दई देस तजि जाहि तूँ मोह सों जाइ यौं कहि सुनायो।।
कोपि यों मोह अन्याइ बोलो तहाँ ढीठ तैं बहुत कीन्ही ढिठाई।
छिन महं मारि निरबृत्त कुल कों हरौं कहा तूँ करत निज नृप बड़ाई।।
सति निज आत्मा अमर नाहि मरै जगत बल ऋहा मिथ्या अन्याई।
देह बिनु आत्मा भ्रम सुख भोग तेहि मुक्ति अन्याई ऐसी बनाई।।
बहुरि अन्याई कही सुनु रे न्याई तूँ हम मिलें मन जगत भोग पावै।
वध कों मुक्ति, अरु झूठ कों साँचु कहै, असुर कों सुर सुर को असुर जानै।।
मोह नृप आजु दल साजि आयो रनहि रावरे हू सैन साज कीजै।
जन मलूका सुमिरि राम अभिराम गुन मोह दल सकल अब जीति लीजै।।
राई सुनो जब न्याइ तें चढ़ो मोह नृप आजु।
पहिरि कौ चहरि नाम को चढ़े सैन सब साजु।।

मोह-विवेक संवाद वरनन करखा

चले सुमट संग्राम मानो अभ्र छायो।
तहाँ ज्ञान विचार पुनि धीरज सन्तोष सत शील अरु धर्म वैराग छायो।।
दोउ सैना सुभट विकट बाँके जुरे एक ते एक वलिबंड भारी।
मोह दल सकल बल धरत अहंकार कों राई दल हृदये सारंगधारी।।
राई अग्या चलो न्याई बलवान तब मारि अन्याय के कर्म मेटी।
मोह नारी तजे प्राण तत्काल ही मरि लीन्हीं वचन सत सैं हर्षी।।
बहुरि तहँ धर्म निज धर्म जो खड़्ग वरवेद परवान जो अधर्म मारो।
दया सब पाप कों ताप मेटो सकल वस्तु विचार विकार जारो।।

प्रकट अभ्यास आलवडो मारि लियो कपट को सीस तब सत काटो।
सील सब विक्रता, शौच, अशुद्धता विषय की प्रीति कों ग्यान मेटो।।
राग अरु द्वेष वैराग ने खाई लए मौन नृप आत्म न मूरछाई।
आत्मा चिंत अति मान तन को हरो चाह सन्तोष सों गै विलाई।।
हरि सत संग तें असत संगति सबै ग्यान अहंकार तत ने प्रहारो।
मोह की सैन सब सुनत विह्वल भई होई गयो सकल दल हाहाकारो।।
चित्त विक्षेप प्रतिहार सब मारि लए कृपनिता, दान सनमान नासी।
काय नर्वेद संसै जो शिष्या हरी कामना सकल सुमिरन विधंसी।।
विकलता धीरज दुहूँ सील गुण, सील ते मौन बकवाद को मूल खोयो।
नींद प्राणायाम अपकीर्ति लज्या हरि सकल दुर्मतिहिं मति सम समोयो।।
शील हिंसा मुदित दया तें मारि लई एकता सकल संसै निवारी।
भूल अरु भ्रम मत वेद अरु मनन तें नेम उचाट तुरितहिं पछारी।।
ब्रह्म विचारना तें असद वासना करत निश्चै गये वोल पाए।
जुबा कोटिक असक दर्व आस पुनि साध संगति मिलत सब बिलाए।।
रोग संजम हरे सकल चेटक जरे उदै निहकपट मति भगति जाई।
मंत्र अरु जन्त्र प्रकाश तें छिपि गए, बलि बैराग चिन्ता मिटाई।।
मरन निश्चै कियो तब रसाएन गयो पुनि परालब्धि सब सोच खोई।
सैन सब खपि गई मोह चिन्ता भई बिना जग मति रहो बल न कोई।।
देह आसक्ति तब मोह परगट करी आतमा सति यह राई भाई।
नित्य अनित्य विचार गयो भक्ति मिलें देह आसक्ति तब गै विलाई।।
किया मद प्रगट विद्या महा मोह तें राई निज ग्यान लीन्हों सहाई।
कहो विद्या अविधा कहाँ है तहाँ भ्रम जगत की नासपाई।।
ज्ञान अभियान कर्म कांड घापल किए कर किए धर्म सौ वीर मारो।
गहि निज फल की बाँह सरधा तबहि मोह को जाल तजि सुधि संभारो।।
नृपति यह बोलि यों बोलि दास संत तेउ कर्म के काण्ड गुण जीति आए।
मोह मन संका भई पलटि पाछ गयो द्रोह तन को तहाँ ओट पाए।।
मर्म को चाँप लै मोह धायो बहुरि नृप इहै वेगि लियो ग्यान खाण्डा।
श्रवण अरु मनन बड़ ध्यास के सान धरि मारि लियो मोह अेन जगत दांडा।।

मोह के वीर सब देखि नृप आपने गए कछु भागि कछु मा।
राई दल सुख भयो सोच सब मिटी गयो, फिरत आनन्द युत प्रे
मोह बिनु सीस तब खडग संसै लियो राई की ओर कों तब पल
बाननि सहै लियो नृप विवेकी तबे मारि कै मोह सब दुःख ।
देव जै जै करत संत आनन्द भरत राई को जस सकल जग।
जन मलूका विदित बात यह जगत में कीर्ति श्री राम जी नित्त

सन्तन को भायो करत जुग–जुग आपु मुरारि।
नृप विवेक आनन्द भयो जीति मोह परिवारि।।
अकध कथा के दल दोऊ सब घट रहत विशेष।
सावधान बिरला कोई अगम लराई देख।।

महायुद्ध वरनन पद सोरठा

साधौ भाई देखी अगम लराई।
अकध कथा के दोई दल उमड़े महिमा वरनि न जाई।।
एक दिस विज एक दिस है बकरी परा मारिका भारी।
मूसें धाऊ सिंह पर डारा अपना आपु संभारी।।
चींटी जाई पछाड़ा हाथी ससा स्वान पर गाजा।
मेडुक जाई सर्प को घेरा महा विकट दल साजा।।
हालें हलहि न टारें टरते लरने लागे सूरा।
शब्द अनाहत मारु बाजै पाया मैदान है पूरा।।
एक पुर साज एक अति ही ओछा जेउ परवत और राई।
कृतम शंभु दोउ रहे बराबरी बड़ अचरज भौ भाई।।
कहै मलूक यह अति अगाध पद विरला औधू जानै।
तजि अभिमान मरै जौ जीवतहिं सो यह भेद बखानै।।

दोहा

मोहादिक की जुधि सुनि भई प्रवृत्त बेहाल।
भयो आनन्द निवृत्त के गयो मोह को जाल।।
मन निवृत्त बिछुर कहो दुःसह नारि बिछोह।
बोलो तहँ वैराग नहिं कीजै माया मोह।।

वैराग वचन पद राग बसन्त

काको पुरुष को काकी नारी। गोरु वासंघाती देव संचारी।।
काको पिता को काको पूत। जनम-जनम को अरूझो सूत।।
समझायै सोई सुजान। मेरी मेरी करि का तजहि प्रान।।
काकी माई को काकी धीय। समुझी न देखहु अपने हीय।।
काल जब पहूँचै आई। बाँह पकरी जम लेईय जाई।।
ठगौरी परीय जोर। निसदिन मूसहि पाँच चोर।।
गए देखि भाई बंध। आपि न खोलहू हिय रे अंध।।
ठगवैं बड़ धोख कीन्ह। झूठी माया जग लाई दीन्ह।।
बाजी अब लखै सोई। कहै मलूक जो भेदी होय।।
भेदी होई सो जानै नट बाजी संसार।
झूठे नाते जगत के तात मात सुत नारि।।

झूठे नाते लौग भूलाना।
माया मोह में बाधि अडारा मरन न काहूँ जाना।।
माई कहै यह पूत हमारा, बहिन कहै मेरो भाई।
आपुन मरै और कह रोवै राम ठगौरी पाई।।
यह संसार धुँवा को मंदिल कौन भरोसा कीजै।
जैसे दूध काहू दे वा कों सपने में लै दीजै।।
पवन मेलि के भीत बोलाया तौन कहै घर मेरा।
माया देखि मगन होई बैठे हरि का मरम न हेरा।।
धीय अरु पूत साहु की पूँजी खबरी न काहूँ पाई।
माँगत बार हँसी मोहि आवै जब करते मचलाई।।
तीन लोक में एक मुराई घर घर खेत लगाया।
काचे पाके सब फल तोरै उसहि कहा के माया।।
जन दस मास गर्भ में पाला गुप्तहि दूध पियाया।
कहा मलूक सुनहुँ रे भोंदू सो ठाकुर बिसराया।।

दोहा

ठाकुर कों बिसराई मन भूलत सपन समाज।
नाता लावत जगत में आवत नाहीं लाज।।

नाता लावत लाज न आवै। मरघट में कूकर घंसि आवै।।
दोई-दोई चारि चारि मरि मरि जाहिं। जग सों प्रीति करन को नाहिं।।
ना कोई सासू नहीं कोई साला। ना कोई फूफू ना कोई खाला।।
ना कोई बाप ना कोई भाई। ना कोई बहिनी नहिं कोई माई।।
ना कोई नानी ना कोई नाना। आँखि आगे खाक समाना।।
ना कोई बेटी न कोई बेटा। माया जाल संसार लपेटा।।
नहीं कोई पुरुष नहीं कोई नारी। कहत मलूका भजऊ मुरारी।।

भगति वचन मन सों दोहा

तेही औसर कहो भगति मन कहा दासी को मोह।
मिलि निरवृत्ति हरि कीरतन करी जोगी जन जोह।।

मन वचन भक्ति रस

विश्नु भक्ति के वचन सुनि बाढ़ो मन अनुरक्त।
तासो यह उत्तर दियो भली कही तैं भक्ति।।
सुखदायक निरवृत्ति है सहित सकल परिवार।
चौरासी भरमत फिरो पापि न मिली अविचार।।
यौं कही हरि की भगति सों बहुरी कहो ऐहि भाई।
बहुत दिवस बिछुरें भयों तूँ अब देही मिलाई।।
विस्नु भगति निरवृत्ति को लै आई मन पास।
देखो तब निरवृत्ति ने मन कों निपट उदास।।

निरवृत्ति वचन मन सों दोहा

मन सों तब निरवृत्ति यह कही बात समुझाई।
छाँड़ि मोह परवृत्ति को तरु हरि के गुण गाई।।

कंता तैं झूठे भर्म भुलाना।
अरे तैं हरि का मर्म न जाना।।
मर्म न जाना भर्म भुलाना संचा साहु विसराइया।
दिन चारि का सुख देखि मोहा कामिनी चित्त लाइया।।
ए सपने के पकवान मूरख एन्हहि न पतियाइए।
नीन्द उचटे कछु न पावै बहुरि मन पछताइए।।
लेखा देना महा दुर्लभ भगति प्रभु की कीजिए।
कह मलूका साधू संगति बैठि हरि रस पीजिए।।

तैं उपदेश न मानहि मेरा।
अरे पियु खोटा प्याला है तेरा।।
उपदेश न मानहि मर्म न जानहि अब घरी यम आवदा।
मैं कहौं कछू और तैनू तै कछू मन गाँवदा।।
धोखें-धोखें जन्म खोया झूठी माया भूलिया।
दिया चारि के मेहमान कलि में तेंन्हें क्यातैं फूलिया।।
दरबार भई पुकार तेरी हुकुम धनी का आइया।
कहै मलूका चलु अचेता वेगि तुझहि बोलाइया।।

अरे पिय वेगि दै तुझहि बोलाया।
साहिब आपुँ ही फरमाया।।
वेगि बोलाया रहन न पाया छरीदार मारत लै चले।
किसी का कछु न बसाई वोन सों त्रास सब देखें खड़े।।
छरीदार पिय नो पकरि कै दिवान के आगे कीया।
कीसी का कछु ऊजर नाँहि जिस का था सो तिन लीया।।
जाई कै जग माँह मूरख क्या खटा खाईया।
कहै मलूका धनी पूछै कैसा अमल कमाईया।।

अरे पिय जब के जग में आए।
तुम खोटे अमल कमाए।।
अमल कमाए हरि बिसराए जवाब क्यों करि दीजिए।
बात कहंदे गुरु जब रिसै कहुँ तहाँ क्या कीजिए।।
जिस लागि हीरा जन्म खोया सो कोई संग न आया।
झूठा नाता देखि मोहा अपना किया सो पाइया।।
अब की बेर जौ छूटिए तौ माया में ना बँधाइए।
कहै मलूका दास होई कै राम के गुन गाइए।।

गावो राम के गुण मना जाके रहत अधार।
झूठा मोह प्रवृति को तिसहि तूँ देहि विसारि।।
झूठे नाते लाल क्या लपटाना। तुझ देखत सब जगत बिलाना।।
कहाँ तेरे बाप कहाँ तेरी माई। कहाँ तेरे कुटुम्ब कहाँ तेरे भाई।।
ढूँढ़ी फिरे कहूँ धुरी न पाई। कहाँ ते हाथी लाल कहाँ तेरे घोड़े।।
कहाँ बैमवासे जो जाइ-जाइ तोरे। खाक मिले जिन लसकर जोरे।।
कहाँ तेरी देवी लाल कहाँ तेरे देवा। जिनकी तू रचि-रचि कीन्हीं सेवा।।
हरि के चरण चित्त कबहूँ न लाया। कहत मलूका छलि गै माया।।

झूठो मोह प्रवृति को सुनि निरवृत्ति की बैन।
लीया बैराग उर लाई कै मन मन भयो सुख चैन।।
पुनि जीव मन होई एकता जगत मोह विसराई।
करन लगे हरि सौं विनै एहि विधि हरि गुन गाई।।

सच्चा तूँ गोपाल सच्चा तेरो नामु है।
जहँ जहँ सुमिरन सचु धनि सोई ठाँऊ है।
साचु जो तेरे संत जो तुझको जानत। तीन लोक का राज मन ही नहीं आन
झूठा मारग छोड़ी तुझ ही लौ लाइए। सचु हिय में राखी परम पद पाइ
तिन ही लाहा पाइया जग में आई कै। भौ सागर तरि गए तेरे गुण गाइए कै
तूँ ही माई तूँ ही बापू तूँ ही भाई बन्धु है। कह मलूक तूँ ही सचु और सब धंधु है

दोहा

और सकल सब धंधु है साँचा तू करतार।
जग फुलवारी जेऊ रचि तैंन बहुरंग सवारि।।

हरि मालिया सब जग फुलवारी। नाना रंग रचे बनवारि।।
भाँति भाँति के फूल जै फूले। देखि तमासा तेरे सेवक भूलै।।
एक तोरै एक आनि लगावै। सदा न कोई रहने पावै।।
सात समुद की बाँधी खाई। दृढ़ रखवारा आपे साँई।।
कहै मलूका वाकी अद्भुत माया। शिव सनकादिक अंत न पाया।।

दोहा

अंत न तेरा लखि परै अलख निरंजन राई।
आशा तृष्णा लाई तिनही दीया जगत भरमाई।।

क्या परपंची परपंच रचा।
आशा तृषा सब घट व्यापी मुनि गंधर्व कोई नहीं बचा।।
उठि विहान पेट का धंधा। माया लाई कीया जग अंधा।।
औंधी खोपरी फिरहि बिसारे। भूली भगति छुधा के मारे।।
तन मन छीन कुटुम्बहि लाया। छुपि रहा आपु लोक भरमाया।।
विनति करत मलूका दासा। थकित भया तेरा देखी तमासा।।
अजब तमासा मैं देखा तेरा। तातें उदास भया मन मेरा।।
उत्पत्ति प्रलै नित उठि होई। जग में अमर न देखा कोई।।
उलटत पलटत किया जग चोली। जैसें फेरै पान तम्बोली।।
झूठा नाता लोग लगावै। मन मेरे परतीति न आवै।।
माटी के पुतरहि माया लाई। कोई कहै बहिनी कोई कहै भाई।।
हुकुमें भेजै हुकुमें बोलावै। हुकुम भए कोई रहन न पावै।।
कहत मलूक रहो तेहि घेरे। अब माया के जऊ न नेरे।।

यह नेष्ठा वैराग की कही मलूक विचारि।
सपन रूप जग जानि कै तजिए विषै विकार।।
जब विचारना माह जीऊ विषै विकार।
तब तनमासा को तिसहि सहज होई अधिकार।।

इति सुविचारना भूमिका पूरन।।

अथ तनमात्रा भूमिका प्रथम दोहा

नमो नमो पुनि पुनि नमो भगतवच्छल भगवान।
आदर कर तन्दुल लिए निज अपनो जन जानि।।
जब विचारना माह जीव मल मिलि तजै विकार।
तब रुचि भगति अनन्य की सुच्छिम रूप विचार।।
कछु एक मन में रहि गई सुरगादिक की आस।
तिन हित जग्यासा करत कहत मलूका दास।।

जग्यासा शिष वचन

चौपाई

त्रिय मोहनी केंऊ छोड़ै साथ। परम ततु केऊ आवै हाथ।।
कर्म जंजीर बँधा संसार। कहहु गुरु केऊ उतरहि पार।।

गुरु वाकि

गिलि संतन भजिए रघुनाथ। परम ततु तब आवै हाथ।।
परम ततु जो दृढ़ के गहै। माया मोह में कबहूँ न बहै।।
काटे कटे न जारै जरै। अर्ध नाम लै भौ जल तरै।।

तरे सोई भव जलधि को जो गहै नाम आधार।
करनी की आसा करत गये बहुत यम द्वार।।

गौतम नारि बड़ी पतिवर्ता बहुतक कीन्हा दाना।
करनी करि बैकुंठ न पैठी काहें भई पाषाण।।
लछ गऊ दै अनखात थे राजा निर्धन से प्यारे।
पुनि करत जम बारि गवाई लै गिरगिट कै डारे।।
ना जानौं धौं कही मुए थे न जानो कहाँ आए।
ना जानौ हरि गर्भ बसेरा कौनी भाँति बनाए

अथ तनमात्रा भूमिका प्रथम दोहा

यह संसार बड़ा भवसागर प्रलै काल वेमारी।
याते बूड़त सोई बाचै जेहिं राखै बनवारी।।
महा कंठिन है हरि की माया यातें कोई न बचावै।
जौन कहैं जरिमूरहि त्यागी तेहि मोहकम हाथ लगावै।।
क्रिया करै जब ठाकुर मेरा तबही तौ कछु पावै।
नातरू बाधा महा जाल में भरमत पार न पावै।।
मारहू मान छिमा करि बैठहु त्यागहूँ गर्व गुमाना।
आपा मेटे राम भजहु तुम कहत मलूक दिवाना।।

रामहि सुमिरहु रैनि दिन छाँड़ि कर्म फल आस।
संतन की सेवा करत मिली है हरि सुख रास।।

रामहि सुमिरहु आठौ बार। छोड़ि देहु भर्म उतरि जाहु पार।।
कापु नींव का परि बाल्याई। हरि की भगति करहु रे भाई।।
एतना वचन मानि किन लीजै। भेड़िया धंसनि कबहूँ नहिं कीजै।।
कोटिक गहन लागि किन जाई। तुम जिननि देखहु मूँड उठाई।।
व्यर्थ जाई जाई कंचन बचै। आसा बाँधि जुगहि जुग रोवै।।
कहत मलूक सेवहू संत। सहजहि आई मिलै भगवन्त।।

संतन कों आवत निरखि लीजै कंठ लगाई।
हित करि भोजन दीजिए सादर शीश नवाई।।
दालि भात की भगति है बात की नाँही।
मन मानै तो कीजिए बूझि हियरे माँही।।
हाथ जोरि खरे हूजिए जब साधू आवैं।
शीश काटि दीजै बेखटका जब हरि जस गावैं।।
भोजन आदर भाऊ तें लै आगे धरिए।
जौं परमेश्वर चाहिए तो जीवत मरिए।।
तीन लोक में सार है टुका अरु पानी
कहि मलूक ते तरि गये जेन यह मति ठानि

श्री गुरु लक्षण साधु के मोहि कहौ समुझाई।
जाहि निरखि हित आपने करौ सेव चित्त लाई।।

गुरु वाकि

सब कलियन में बास है बिना बास नहिं कोई।
अति सुख ता में पाइए जो कोई फूली होई।।
स्वामी नाथ महंथत बहु फिरत धरे बहु भेष।
साहेब का बाना सबै हरि सेवक कोई एक।।
राई सारे निर्गुण राई सा गावै कोई जागृत जोगी।
अलग रहै संसार तें सो इस रस का भोगी।।
मर्म कर्म सब छाँड़ि कै वोन ठाना मत पूरा।
सहजहि धूनी लागी रहै बाजै अनहद तूरा।।
लहरैं रे उठती ज्ञान की बरिसै रिमझिम मोती।
ज्ञान गुफा मे बैठि कै देखैं जगमग जोती।।
सिव नगरी आसन किया शून्यहि ध्यान लगाया।
तीनौं दशा विसारि कै चौथा पद पाया।।
अनभै उपजा भौ गया हद तजि बेहद लागा।
घट उजियारा होई रहा जब आतम जागा।।
सब रंग खेलैं सम रहै दुविधा मनहि न आनै।
कहै मलूक सोई रावला मेरे मन मानै।।
कहै मलूकति संत सों वैर किसी सों नाँहि।
मानि सबनि सों मित्रई मुदित रहै जग माँहि।।
नितहीं देवारी तत के अरु नितहीं फागु।
नित हीं हरि जस गाँवते जेन माथे भागु।।
नित ही मंडवा छावते नित मंगलाचार।
पूरेहु पुँनिहु पाइए राजा राम भरतार।।
नित आवहि जन पाहुनो नितहि जेवनहार।
चलह पहल नित महल में क्रिया करिय मुरारी।।

नित पुर्नेंउ नित चाँदना, नित नितहि तेवहार।
कहै मलूक आनन्द सदा सन्तन के दरबार।।
श्री गुर के सुनि वचन जीव आनि हृदयै विश्वास।
मन सों पुनि लागो कहन कहत मलूका दास।।
चलु मन ढूँढ़ि ल्याए ठाकुर के छौना।
सिर के साँटे मिलत है वे संत खेलौना।।
राम नाम नित पढ़त है सुनते सुख लागै।
पाऊँ न टिकते पाप के वोन भागे।।
प्रेम जंजीर गढ़ाई के गहि बाँधो भाई।
संत भगत के मोह ते आवै रघुराई।।
कह मलूक सब त्यागी कै जन पालौ हाल।
जोइ सोइ सूरति सत की सोइ गोपाल।।

दोहा

यह सुनि सून कहो जीव सों उतिम है यह मंत्र।
चलहु खोज लै आइए राम स्नेही संत।।
दोऊ एक मत होइ कै यह निश्चय करि विचार।
तेहि औसर हरि कीर्तन सुमिरन परम अधार।।
मिली हरि जस गावन लगे कहि पद साखि विचार।
षट्दर्शन खोजन लगे प्रेम प्रीति उर धारि।।
खोजत खोजत मिल गए राम स्नेही साथ।
जेन के दर्शन परस किए मिटहि कोटि अपराध।।

संत सभाव वर्णन कवित्त छप्पय

संत विवेक प्रेम ज्ञान विचार भगति सुनि।
धीरज अरु संतोष पुनि शील धर्म गुनि।।
सौच अहिंसा दान दया संगति वैराग भै।
करन राम गुनगान पाप अरु ताप नास भै।।

तिन्हहि-निरखि मन मुदित भयौ जैऊ पंकज अलि देख।
कहै मलूक हरि गुण सुमिरि वर्तत वचन विशेष।।

मन वचन

तेरे जन जेते गोपाला।
तिलक मुद्रा अति विराज कंठ शोभित माला।।
तेरे नाम को परता ऐसो आज्ञाकारी काल।
कहैं मलूका फिरहि फूले काटि माया जाल।।

दोहा

तेहि औसर हरि कीर्तन सुमिरन परम अधार।
मिलि हरि जस गावन लगे कहि पद साखि विचार।।
नाम अमल रस सार। हम पायो श्रुति सिंधु में।
हमरे है आधार। और अमल मन ना धरै।।

अमल हमारे केवल राम। और अमल सौं नहिं कछु काम।।
जेते अमली अमल बिनु मरै। ठाढ़े होते गिरि-गिरि परै।।
पोस्ती मरम पोस्त का जानै। नए-पुराने बैठि बखाने।।
कहैं मलूक हम सें तिन पाया। तन-मन धन दै मोल लै आया।।
राम राम राम राम राम रटिये। रामहि केवल जम को डटिए।।
रामै राम पढ़ो भाई चटिये। कहत मलूक सकल भ्रम सटिए।।
हरि बोलु हरि बोलु भाई। हरि के बोलत तेरो कहा घटै न साई।।
हरि के बोलत दुःख दारिद पराई। आगे पाछें तेरी सबै पनि जाई।।
दिन मनि दीनानाथ दीन बंधु भाई। सहज सनेही राम सदा लह गाई।।
अरस परस ताके पाप पराई। सुन्दर बदन परम मलूक बलि जाई।।
राम कहो माटी के तोते। पींजर तोरी न लेई बिलाई।।
भौ सागर में खाहू न गोते। राम कहे छूटहु लदन ते बहुरि।।
कहै मलूक न होहुँ ऊँट के बोते। तरि जाहू सहज ही जैसे तरे पंडू के पोते।।

राम कहो माटी की मैना।
टेंह टेंह का करसि अभागी काहे न बोलहू अमृत बैना।।
राम कहे तरि गयो अजामिल ना पतियाहू तैं देखहु नैना।
कहत मलूक पारखि आए तो मारि दई दूतन की सैना।।

पुनि महिमा हरि भगति की प्रेम प्रतीत सो गाई।
पुनि लीला औतार की बहुरि कहि समुझाई।।
जुग जुग हरि औतार धरत संत प्रतिपालहिते।
नटवर क्रित आपार कोउ भरम न लखि सकै।।

दसौं औतार वरनन कवित्त छप्पय

प्रथम मछ पुनि कछ वाराह रूप धरि।
नर सिंह बावन परसराम परसाकर।।
राम कृष्ण अभिराम सोई पुनि बुद्ध कहायो।
निहकलकी सोई होई करै सन्तन मन भायो।।
दसौं रूप औतार हरि जुग-जुग संत सहाई हित।
जागत सोवत रैनि दिन कहै मलूक धरि ध्यान नित।।
जनम नाम गुन कीरतन सुनत भयो आनन्द।
मन आयो विश्वास निज तरिहो अब एहि संग।।

भगति नौधा वरनन मन वचन कवित्त

श्रवन परीछत तरो सुक कीर्तन भेवन।
सुमिरन ते प्रह्लाद तरो, लछमी पद सेवन।।
अर्चन सों प्रिथु तरो, तरो अक्रूर सो वन्दन।
दासंतन कपि तरो सखहि तारो अर्जुन।।
बलि कियो काय नेवेद अजहूँ हरि ताके द्वारे।
कह मलूक एहि संग मिलै हरि प्राण प्यारे।।

तब अर्चन वन्दन कहो पद सेवन समुझाई।
संत टहल जो कीजिए तो रीझे हरि राई।।
मन तिन सों करि विनति यौं बोलो लहि आनन्द।
करिहों हित सों मैं सदा सेवन, अर्चन, वन्द।।
मन में आजु आनंद है बैठे भगतन पास।
इहै घड़ी लेखें परी कहत मलूका दास।।

मलूक देव पितर मेरे हरि के दास। गाजत हौ जेन कवि स्वास।।
साधू जन पूजौं चित्त लाई। जेन के दस नहि यारों जुड़ाई।।
चरन पखारत होई आनन्द। जनम जनम के काटहि फद।।
भाऊ भगति करते निहकाम। निसु दिन सुमिरहि केवल राम।।
घर वन का वोन के भाव नाहीं। जेंऊ पुरहनि रहती जल माँही।।
भूत प्रेतन देंऊ बहाई। देव खरि लीपै मोरि बलाई।।
वस्तु अनूठी सन्तन लाऊ। कहैं मलूक सब भर्म नसाऊ।।

जब मन मन कें उदै भयो भाऊ भगति यौं आई।
तब तिनहि दिढ़ सत कहो अैसी विधि समुझाई।
मन सों करवे कों भगति सब कोऊ करत उमंग।
पै जौं करै दिढ तजि कपट, रीझहि तेहि गोबिन्द।।
अन्तर कपटी कुटिल नर बातें कहै बनाई।
लोहे को पैसा भयो कहा देखिए ताई।।
ताकों लोग भला कहैं जो अन्न-पानी नहीं खाई।
पवन भुवंगम भखि रहै तिसहि न मिलै हरि राई।।

साधौ भाई छाड़ कहाँ सो काहूँ न छाड़ा लेन कहाँ सोई त्यागा।।
बैंगन मसुरी औ हिन्दुवाना एन्हहि कहौ क्या लागा।।

नींदहि कदू नींदहि सूरन नींदहि गाजर मूरी।
वोन बातन सों बाज न आवै जातें बैठें सूरी।।

नारी चोरी और मिथ्या इनतैं नाँहि डरते।
काटहि गला निरशंक पराया नर्क जाई-जाई परते।।
भाऊ भगति दया न दीनता अैसे नर अपराधी।
आशि लगावहिं ईंट चलावहिं यहै तपस्या साधी।।
हरि भगतन सों करहि मसखरी पखान पुराना।
जीयत जीव नर्क में डारै कहत मलूक दिवाना।।
तेहि औसर कहो धर्म है सत वचन श्रुति सार।
जीव दया कीजै सदा व्यापिक ब्रह्म विचार।।
दया धर्म हृदये वसै बोलत अमृत बैन।
तेई ऊँचे जानिए जा के नीचे नैन।।

जेहि घट दया तहाँ प्रभु आपु।
अपना दुख सब का जानै। ताके निकट न आवै पापु।
तीरथ जाई करै जोई कोई। बिनु दया सब निष्फल होई।
पडित पोथी पढ़ैं पचास। बिनु दया सब हो होई निरास।
जैसी बकरी तैसी गाई। ऐन के कुहे रसातल जाई।
बाँधि बाँधि मुख खून कराई। भाड परौ अैसी पंडिताई।
जीवत जीव अग्नि में परै। अैसा जग्य कसाई करै।
भूखेहि टूका प्यासेहि पानी। यह भगति हरि के मन मानी।
कहै मलूक आत्म लौ लावै। जगन्नाथ घर बैठे पावै।

मन कहो है श्रुति सार। जो कछु मैं तुम सो कहो
तुम संग करत विचार। होई है दिन-दिन अधिक सुख

होत महा सुख साधु की संगति जानत जानत जानहिंगे।
मात पिता गुरु तीरथ है एऊ मानत मानत मानहिंगे।।
काम दिन सबै कान्ह के हैं अब बूझत बूझत बूझहिंगे।
थोरि कही कछु सूझ परी आगे सूझत सूझत सूझहिंगे।।
अमृत प्रीति दमोदर की रस पीवत पीवत पीवहिंगे।
आवत जात महा दु:ख पायो है अब जीवत जीवत जीवहिंगे।।

दास मलूक ने धीर धरी हरि आवत आवत आवहिंगे।
रंग लागत लागत लागहिंगे मन भावत भावत भावहिंगे।।

कीन्हों मो पर क्रिपा तुम मैं जाने निरधार।
तुम संग मिलि हरि भगति दिढ़ तरि हौं भौ जल पार।।
तेहि औसर कहो भगति मन मेरो मत वह सार।
और उपासन छाड़ि नित कीजै हरि पद प्यार।।
हरि भगतन के काज को नेकु नहीं अलसात।
जब गज को गाढ़ो परो तब पाई पिआदे जात।।
हाक सुनत गजराज की यौं धाए बृजराज।
ज्यौं गोली लागै पहिले ही पाछे होत अवाज।।

हरि समान दाता कोई नाँहि। सदा विराजहिं संतन माँहि।।
तीन लोक जाका औसाक। जन का गुनह करै सब माफ।।
काहू भाँति अजार न देहि। जाहि को अपना करि लेहि।।
घरी-घरी देता दिदार। जन अपने का खिजमतिगार।।
नाऊँ विश्वम्भर विश्व जिलावै। साँझ विहान रिजुक पहुँचावै।।
देई अनेग न मुख पर आनै। औगुन करै सो गुन कै मानै।।
गुरु वा ठाकुर है रघुराई। कहै मलूक क्या करौ बढ़ाई।।

तब बोलो वैराग है भगति वचन श्रुति सार।
विस्नु, भगति दिढ़ कीजिए मन करि प्रत्याहार।।
जा घर भगति न भागवत संत नहीं मेहमान।
ता घर जम डेरा कियो जियत ही परो मस्नान।।

जा घर नाहिं ना हरि नाम।
ता घर सदा मसान बरतत भूत को विश्राम।।
विमुखिन को माल मन्दिल कृष्ण के केहि काम।
कहै मलूका तातें पशु भले जाको चाम आवत काम।।

पशु पंछी तिन तें भले जे हरि सुमिरत नाहि।
जीवत हीं भूत, न भजै, ते नर नर्कहि जाहि।।

भूत खदेरी पूजहि भूत। नाउ त्यासो माँगहि पूत।।
भोर की निकसी आँवहि साँझ। थाह देत पैठहि घर माँझ।।
कलह करै सान्ति निज खौवै। हीरा जनम अकारथ खौवैं।।
साधु संग कबहूँ नहि करै। भेड़ा मारी नर्क में परे।।
काटहिं गला लेहि सिर भार। पावहि डायन को औतार।।
कह मलूका चारो फूटी। राम विसरीगा भूतवन लूटी।।

यह सुनि आन उपासना मन तें मन विसराई।
विस्नु भगति हृदये धरी राई लियो उर लाई।।
राई लिया उर तोष।। ज्ञान कुवर विचारी पुनि
धीरज, सत, सन्तोष।। शील, धर्म संग चारि गुन
भेंटेउ पुनि वैराग।। अपने निकट बोलाई कै
काम क्रोध दर्प त्याग।। हरि सुमिरन मन लाइकै
भगति अनंनि हृदये धरे करि संतन सो प्यार।
आन उपासना छाड़ि मन गहि सरनि हरि द्वार।।
यौं मन भगति अनंनि दिढ़ बोलो अति सुख पाई।
अब मैं आयो हरि सरनि आन देव बिसराई।।

अब मैं सरनि राम की आया।
देव पितर में अरुझि रहा था अपना आपु छोड़ाया ।।
केया भूतहु को सेवा पूजाए न की झूठी आसा।
मारहि जीव चढ़ावहि हत्या देखे बड़े तमासा।।
भैरो मांगै घेटा चिंगना पीर माँगत है मुरुगा।
कौड़ी माँगै ठैया भुईयाँ भैड़ा माँगै दुर्गा।।

एन बटपारन सब जग मूसा डारि भरम को फाँसी।
अंत काल कों भागि जाहिंगे देखो बड़ेइ लबासी।।
दुविधा पूजि बहुतन बूड़ कोई तरत न देखा।
उदै अस्त की बात कहत हौं सब का माँगै लेखा।।
हरि सुमिरें निहचिंत भया मैं अब जम निकट न अैहे।
कहि मलूक लिया गुरु वा पाछा बाल न बाँका जैहै।।

दोहा

बाल न बाँका जाइगा हरि सरनि द्वार।
जुग जुग है हरि का विरद भगति उधारन हार।।

जौं हरि है तो कहा डर भाई। करिए भगति निशान बजाई।।
सबतें बड़ी तिलक अरु माला। सदा सहाई रहै गोपाला।।
कोई न जन का मारनि हारा। क्या राना क्या रंक बिचारा।।
दूवि साँटि जो संतहि मारै। ताको चक्र सुदर्शन जारै।।
हरिख हरखि हरि के गुन गाऊँ। कहै मलूक निरसंक लड़ाऊँ।।

यों जीव मन होई एक मत हरि सों कहत सुनाई।
दूजा नाता न लेउँ अब जीवउँ तुमहि लड़ाई।।
तुम्हीं लड़ाऊँ रैनि दिन महाराज ब्रिजराज।
छत्र छाँह तुम्हरे रहों नहीं और सों काज।।

एक तुम्हहि हरि चाहौ मैं राज।
नृपति और सेति नहिं पूछौं सरनि तुम्हारी सब रे काज।।
पाँचौं पंडो जरत उबारे, द्रोपद सुता की राखी लाज।
भगत विरोधी यों मारत हों जेऊँ तीतर पर टूटै बाज।।
तुम्हहि छाड़ि जो चाहै दूजा ता पापी पर परियो गाज।
कहै मलूक मेरे प्रान रमैया तीन लोक ऊपर सिरताज।।

दोहा

निष्ठा भगति अनन्य की कही मलूक विचारि।
विस्नु भगति दृढ़ कीजिए मन करि प्रत्याहार।।
जब तनमासा माह जीय यौं गहि रहै हरि द्वार।
तब सत्वापत्ति को तिसहि सहज होई अधिकार।।

इति तनमासा पूरन अथ सत्वापति भूमिका

नमों जगत पति जगत गुरु जगन्नाथ जगराई।
जगजीवन जगहित करन जग मनिसि जदुराई।।
तनमासा में मन सहित जो गहि रहे हरि द्वार।
तब रुचि तत विचार की दीन्ही आपु मुरारी।।
दुइत भाउ मन गहि रहो कहुँ ठाकुर कहु दास।
तेहि हित जग्यासा करत कहत मलूका दास।।

शिष वचन

कैसी भाति ततु ठहराई। कैसे आत्म जीता जाई।।
कर्म की डोरी बँधा संसार। कहौ गुरु कैऊ उतरौ पार।।

गुरु वाकि

हरि में जब जग जाना जाई। परम ततु तब आवैही ठहराई।।
यह मत दिढ़ दासन्तन करै। मन चित तब भौ जल तैं तरै।।
साई सिरजनहार। विश्व भरन जग हित करन
श्री मुख कहो विचारी। मेरे सब मैं सबन को

जाति हमारी आत्मा नाम हमारा राम।
पाँच ततु का पुतरा आई किया विश्राम।।

एकता रमैनी

सबहिन के हम सबै हमारे। जीव जन्तु मोहिं लागत प्यारे।।
तीनों लोक हमारी माया। अंत न काहू ते कोई आया।।
छतिस पवनि हमारी वाति। हमहीं दिन हमहीं हैं राति।।
हम तरिवर हम कीट पतंगा। हमहीं दुर्गा हमहीं गंगा।।
हमहीं मुल्ला हमहीं काजी। तीरथ व्रत हमारी बाजी।।
हमहीं पण्डित हम बैरागी। हमहीं सूम हमैं हैं त्यागी।।
हमहीं देव हमहीं दानौ। भावै कोई कैसेहुँ मानौ।।
हमहीं चोर हमहीं बटमार। हम ऊँचे चढ़ि करहिं पुकार।।
हमहीं महावत हमहीं हाथी। हमहीं पाप पुण्य के साथी।।
हमहीं तुरै हम हैं असवार। हम घासी हम रवादार।।
हमहीं भये नन्द के नन्दा। हमहीं सूरज हम हीं चंदा।।
हमहीं दशरथ हमहीं राम। हमरै क्रोध हमारै काम।।
हमहीं रावन हमहीं कंस। हमहीं मारा आपन अंश।।
हमहीं जीवहिं हमहीं मरैं। हमहीं बूड़ैं हमहीं तरैं।।
जहाँ तहाँ सब ज्योति हमारी। हमहीं पुरुष हमीं हैं नारी।।
ऐसी विधि कोई लौ लावै। सो अविगति सो टहल करावै।।
सहै कुशब्द और सुमिरै नाऊं। सब जग देखै एकै भाऊ।।
इस पद का कोई करै निबेरा। कहै मलूक मैं ताको चेरा।।

सब घट मेरा साईयाँ दुतिया भाऊ बिसारी।
हित सौं पूजा कीजिए मन वचन पूजा कर्म विचारी।।

साँचो मूरति आत्मा अरु देवल देही। नीकी विधि के पूजिए ए परम स्नेही।।
सब घट एकै राम हैं वोन आँखिन देखु। पवन छतिस विराजता आपै आपु अलेख।।
आगे घरु चेत नित नित नाना भोग। दुविधा मनहि न आनिए यह उत्तिम जोग।।
छूछा अब न पछोरिए मत गहिए सार। कहै मलूक सब ते बड़ा जग ब्रह्म विचार।।

अथ तनमात्रा भूमिका प्रथम दोहा

सवा मन की चूपरी एक दया जग सार।
जेन पर आत्म चिन्हीया तेई उतरे पार।।

धनि धनि अन्न देव धनि धनि पानी। जाकी भगति नरायन मानी।।
अन्न में बसे जगत का प्राण। भूखै कछु न सोहाता आन।।
बिनु अन्न बातैं कहै बनाई। छूछ पछोरी उड़ि उड़ि जाई।।
अन्न देव नाचै अन्न देव गावै। बिना अन्न मुख बात न आवै।।
अन्न पानी की भगति अपार। भौजल तरत न लागै वार।।
अन्न की भगति करहु निहकाम। कहत मलूका रीझै राम।।
गुरु गोबिन्द सार मत दीन्हा। भला भया जो आत्म चीन्हा।

श्री गुरु के सुनि वचन जीव आनि हृदयै विस्वास।
पुनि विचार लागो करन कहत मलूका दास।।
आत्म चीन्हा संसै छीना समुझा तत विचार।
कंचन भूषन, भूषन कंचन, कंचन है निरधार।।
प्रान पियारा पाहुना घरि एक विलंबा आई।
करिहों सेवा भली विधि ना जानौ कब जाई।।
ऐसी निहचै आनि जील मन सों कहा विचारि।
सब घट मेरा पिय है करि दासंतन प्यार।।

सब घट मेरा पीउ।। खाली कहूँ न देखिए
बड़ भागी है जीउ।। जेहि घट परगट होई सोई

हैं देखौं तहाँ साहिब मेरा। केहुँ घट ठाकुर केहुँ घट चे
हूँ में राम, केहुँ रहिमाना। केहुँ जैवें केहुँ खाता खा
हुँ फेरै तसबी, केहुँ जपै माला। केहुँ भए अलह मियाँ केहुँ गोपा
हुँ महजिद, केहुँ मन्दिल उठावै। केहुँ उर्स, केहुँ भगति करा
हुँ बाबा आदम केहुँ शिव कै बखानी। केहुँ मामा हवा केहुँ गौरा रा
हुँ घट सूम केहुँ घट त्यागी। केहुँ अबदाल केहुँ बैरा
हुँ घट पुरुष केहुँ घट नारी। केहुँ घट ब्याही केहुँ घरवा
ह मलूक यह अकथ कहानी। केहुँ मूरख केहुँ घट ज्ञा

मन वचन

यह सुनि मन कहो ग्यान सों मोहि न परत संभार।
भयो कौन विधि एक तें जग नाना परकार।।
कोउ उजबक कोउ मिलत चकता मोहि कोई खुरासानी कोई काबिली कहावता।।
कोई काशमीरी कोई बलख बोखारे का कहै कोई ठेठ भखर इराकहूँ तें आवता।।
कोई रूमी शामी कोई हब्शी फिरंगी मध दछ्नी जांगर निराला होई जनावता।।
पूरब बंगाली अरु उत्तर के खसिया है पछिम पछाँही मधि देस मुझहि भावता।।
कहत मलूक सब एक ही कुंभार गढ़े ऐते प्रकार धौं कहाँ तें जनावता।।

आत्मज्ञान वचन

यह सुनि कै मन भूप सों बोले आत्म ज्ञान।
खाँड खिलौना चित्र पट त्यौं जग आत्म जान।।
जग आत्म नहीं प्रथक यौं प्रथक भाव दरसाई।
ज्यौं नाँही द्वै चन्द्रमा दृग भर्म दोई लखाई।।
तब समझों विचार मन ज्यों म्रिदु कुंभन आन।
त्यौं ही या सब जगत में है व्यापक भगवान।।

मन वचन धीरज सों

यौं कहो दिढ़ मन धीरजहि है हरि में संसार।
पै कुशब्द सहो जात नहि कीजै कौन विचार।।
यौं सुनि कै मन भूप सों कहौ धीरज औधार।
छिमा किए सहै पुहुमि सब केतिक शब्द को भार।।
बहुरौं मन दासत्व सों बूझन लगे विचार।
बिनु जाने जो चूक भई मुचै सो कौन प्रकार।।
कहो दास तब दास अपन मन वचन कर्म विचार।
जौ कीजै तौ सजही मूँन्नैं पाछिल हार।।
यह सुनि कहो सखत्व है दासंतन मत सार।
पै कीजै सो प्रीति सों तौ निबहै एकसार।।

तब सुधर्म कहो श्रुति सुम्रित मैं देखौ है विचारी।
और बात सब बात है दया धर्म उर धारी।।
यह सुनि संत विवेक सों बूझो मन ने विचारी।
जो कछु आग्या देहु तुम करौं सो अब निरधारी।।
तब विवेक मन सों कहो है यह श्रुति मत सार।
जो तुम सों कही, धर्म सिख दा सन्तनहि विचार।।
दालि भात की आरती, विंजन विविधि सँवारी।
कीजै हित दासायसों अहनिस बारम्बार।।
यह सुनि मन कहो जीव सो दुतिया भाउ विसारी।
करि हो हित सो दासपन दया धर्म उर धारी।।
यौं जीव मन होंई एकमत दृढ़ करी ब्रह्म विचारि।
बार-बार विनति करत हरि सों या प्रकार।।
मानि लेहु आरती भै मेट तें बड़ी चूक।
एक बार कहो छिमा करि मेरो दास मलूक।।

आरति आत्म राम तुम्हारी। मानहुँ वेगि जाउ बलिहारी।।
रस गोरस और पान मिठाई। यह मेरी मनसा मालिन ल्याई।।
चर चर वन गंगा को पानी। करौं भगति अपने उन मानि।।
तीरथ जाई न पूजौं देवा। सब ऊपर संतन की सेवा।।
दुर्बल दीन मिले जब आई। यह सुख मो पें वरनी न जाई।।
भात को दीपक दाल की बाती। दास मलूक करहि दिन राती।।
निष्ठा ब्रह्म विचार की कहि मलूक विचारी।
हरि मे सब जग जानी कै करि दा संतन प्यार।।
जब सत्वापति मांह जीव यौं दिढ़ करी ब्रह्म विचार।
असंसक्ति कों तब तिसहि सहज होई अधिकार।।

इति सत्वापति पूरन

अथ असंसक्ति भूमिका
ब्रह्म ज्ञान निष्ठा

नमो नमो निरंजन निरंकार ज्योति रूप जगदीस।
निरगुन नियंता गुन रहित गुन विधि हरि त्रिगुनीस।।
सत्वापति मह मन सहित जीव दिढ़ तत विचारि।
तब रुचि ब्रह्म ज्ञान की दीनी आपु मुरारी।।
तन आसक्तिवश काल भै माने सकुच मन होई।
तेहि हित जिज्ञासा करत श्री गुरपद मन पोई।।

सिष वचन

कहौं गुरु क्यों नाषों काया। अति परबल है हरि की माया।।
कैसे कटे काल का फन्दा। कैसे सिद्ध मति पावै बन्दा।।

गुरु वाकि

क्रिपा कै गुरु जुगति बताई। आपा खोजे भरम न साई।।
आपा खोजे त्रिभुव सूझै। गुरु परताप काल सों जूझे।।
शब्द ब्रह्म का करै विचार। सोई चले जिम तहाँ इच्छार।।
मनुवा मारि करे नौ खण्ड। कबहु न सह देह का दण्ड।।
देह दण्ड का भै जब जावै। तब मलूक निज खिजमति पावै।।

सिष वाकि

श्री गुरु मोहि क्रिपा करि दीजे मोहि समुझाई।
कैसे मन के मुए तें आवागमन नसाई।।

गुरु वाकि

मन ही के संकल्प ते उपजत तन अभिमान।
सो संकल्प विसारिए निज सरूप धरि ध्यान।।
ध्यान धरि निजु रूप को काया कीजै भेंट।
छूटि जाई भै काल कों हरि सों बाढे हेत

हरि प्रसाद ते पाइए स्थित पद निर्वाण।
कहै मलूक पुनि मन मुए होई न आवा जान।।
श्री गुरु अपने आपु गुखोजौं कैसो जान।
कोई स्वर मोसों कहहु जाको करिए ध्यान।।
ईश्वर साक्षी सर्वदा न भजें उर है निनार।
जीउ तत्व नीके सुवटा मानै तन अहंकार।।
रूप दोउ को है अगह कहत कहो नहीं जाई।
जग की उत्पत्ति कहि कछु कहि देऊ उनमान बताई।।

ब्रह्म जीव निर्णय जग उत्पति वरनन

आदि पुरुष अविगत अलख सृष्टि साजि वहु भाई।
भवंत निनारो सबन ते सबमें रहो समाई।।

गीत मंगल

आदि पुरुष इच्छनि किए प्रकृत त्रिय गुन विस्तार।
बीज बोयो महत ततु को मन बुद्धि चित्त अहंकार।।
अहंकार अंकुर त्रिगुण होई प्रगट त्रिविधि तेहि डार।
सत ते इन्द्रि देवता राजस इन्द्री विस्तार।।
तम गुण ते पाँचों विषय तिन ते पाँचों भूत।
उर्ध्व मूल शाखा अधो निपजो वृक्ष अनूप।।
वृक्ष रूप यह देह है होई पंछी तन माही।
अति सुन्दर सुकुमार दोउ रूप रंग कछु नाहि।।
तिन में साक्षी आत्मा भवंत रहै सो निनार।
शब्द, रूप, रस, गन्धु पुनि नहि परसत वेवहार।।
तन जम असत अरु बुद्धि पुनि होई सों साक्षी सोई।
नलनी सुक ज्यों आपु को भानै जीव सोई होई।।
जब यह मान विसारि कै धरै रूप निज ध्यान।
तब मलूक हरि कृपा तैं पावै पद निर्वान।।

श्री गुरु हरि साक्षी सदा न भजेउँ रहै निनार।
तेंऊ माया गुन जड़ विधि करै जगत विस्तार।।
कवन इन्द्रीन के देवता कह इन्द्रीन को नाम।
दीजै मोह्री बुझाई अब यह कहि किया प्रनाम।।

गुरु वाकि

आदि निरंजन निरंकार अविगति अलख अपार।
ब्रह्मा खोजत थकि परो लहो न ताकों पार।।
ताके चित्त तब प्रक्रित गुन सत रज तम दरसाई।
जड़ तजि चेतनि भए लोहा चुम्बुक न्याई।।
बहुरौं तिन संसार के कर वे को विस्तार।
प्रक्रित किए महत ततु ते मन बुद्धि चित्त अहंकार।।
अहंकार को त्रिविधि पुनि भयो जगत विस्तार।
साति, राजस, तामसि जैसें तरुवर डार।।
पुनि सातिक ते उपजें इन्द्रि सुर दश भाई।
भए प्रथक तहाँ सबनि के नाम कहौ समुझाई।।
रवि दिस वरूण अरु वाई पुनि जुगुल अश्वनि कुमार।
ग्यान इन्द्रि के देवता पाँचों यौं निरधार।।
अग्नि विस्नु, इन्द्री प्रजापति कहियत मृत्यु बखानि।
कर्म इन्द्रि के देवता लेहु पंचए जानि।।
पुनि राजस अहंकार ते दश इन्द्री दश रूप।
नाम प्रथक गुन है प्रथक ते सब अंग अनूप।।
यछु प्रथक अरु घ्रान पुनि गुदा उपस्थ वेवहार।
कर्म इन्द्री पुनि पाँच की भयो प्रकट विस्तार।।
वाकि पाणि अरु पाद पुनि तु चाप रस वेवहार।
यछु सुत्र अरु घ्रान पुनि सुरसना पर सुसार।।
पाँच इन्द्री अज्ञान की सुंदर बनो बनाऊ।
प्रथक प्रथक गुन विर्तित है प्रथम बनाऊ सुभाऊ।।

तम गुण ते पायौ विषै प्रगट भई पुनि आनि।
शब्द रूप रस गन्ध पुनि परसन पंचम जानि।।
महा भूत एन पाँच ते प्रथम भयो आकास।
वाई तेज पुनि अपु भयो तब पृथ्वी परगास।।
यह समाज सब त्रिगुन मय साजि रयो नर देह।
ब्रह्म अंश जीव निरखि कै मानो तासो नेह।।
नीर–छीर जेऊँ ताहि मिलि आपन पौ विसराई।
मानि लिए दुःख सुख सकल नलनी कसु कन्याई।।
जब मलूक तेहि कृपा करि चितवहि आपु मुरारी।
अनल पछि जेंऊ चेति तब जाई मिलै परिवार।।
प्रकृत पुरुष के जोग ते जग यौं भयो निर्मान।
जो कछु अब संसै करहि सो अब करौ बखान।।
श्री गुरु तुम परमात्मा नभवत कहो बखानि।
ऐसे रूप अपार को कैसे कीजै ध्यान।।
नभहूँ ते परमात्मा आहि अरूप अपार।
पै तासों लौ लाइए यौं घट माह निहारी।।

मंगल

यह घट है घट की शब्द रस दस इन्द्री द्वार दस द्वार।
तेन के भीतर आहि मन चंचल जल की अनुहार।।
सो जल थिर भए आत्मा गगन सदृश्य दरसाई।
तासों दास मलूक कहि राखिए मनहि लगाई।।

औधू गगन सौं मन लाऊ।
बिना जानै तूँ बहुत भ्रमा का देखा वहि पाऊ।।
फिरत जंगल परे छाले तऊ न मिलिया राऊ।
खोजु अपना आपु अवधू सहज के घर आऊ।।
सूनी नगरी करहू आसन भ्रम कर्म बहाऊ।
कहै मलूका गहौ अनहद सुई सुमेर समाऊ

शिष वचन

श्री गुरु जौहरि को हृदयै छाया ही दरसाई।
तौ छाया को निरखि कै कैसें मन पतियाई।।
हरि तोसों तेरे निकट तूँ पुनि फिरत उदास।
ज्यों मृग-मद मृग नाभि में फिरी फिरी ढूँढ़े घास।।
नाभि बसै कस्तूरीया मृग निजु सुधि बिसराई।
भ्रम सों तरु बेली सकल ढूँढ़े बन बन जाई।।
तरु बेली बन ढूँढ़ही सो भ्रम नित अधिकाई।
जब फिरी देखे आपु में तब वह भ्रम नसि जाई।।
जौ तैंहूँ जेंऊ मृग भ्रमहि छाड़ि धरहि हरि ध्यान।
कहै मलूक तौ सहजहि पावहि पद निर्वान।।

सिष वचन

भगवन लघु मति सौं मम रहस लहो नहि जाई।
कहिए मोसो क्रिपा करि जेऊ आत्म दरसाई।।
तन मन बुधि इन्द्री सकल को जो प्रेरनहार।
तिन परमात्मा जानिया ये श्रुति मति निरधार।।

मंगल

तन रथ जीव मन सारथी बुधि रथी अनुहार।
ग्यान कर्म दस इन्द्री जैसे असु कुमार।।
ते तन रथ कों प्रेरही तेहि मन प्रेरनहार।
मन प्रेरिक है बुद्धि, बुद्धि प्रेरिक आत्म सार।।
सब को प्रेरिक परमात्मा पै दिनकर की अनुयाई।
सबहिन को परकास करि रहै सबन तैं अलगाई।।
जोगहि मुद्रा उनमनि लाई रहै तिन्हहि ध्यान।
कहै मलूक सो सहजही पावै पद निर्वाण।।

हरि सौं ध्यान लगाई।
निस वासर रहै एक टक भौ सागर तरि जाई।।
जौ पै लगनि लागि रहै लगनि जौ पै लागियै रहै।
काम क्रोध मद लोभनि विधि तप काहे का देह दहै।।
पाँच पचीस दसौ इन्द्रीन संग कबहूँ नाँहि बहै।
भ्रम क्रम सकल मिटै या मन के कालौ नाँहि गहै।।
बिना जोग जप तप संजम बिनु सुख सागरहि लहै।
पावै पद निर्वाण सहजही दास मलूक लहै।।

चलू तिस तीरथ नहवाऊँ जियारा।
जहाँ सदा सीतल रहै तेरो हियरा।।
देख हिय देख काया माही।
पूजा करु बहुरौं डर नाँहि।।
ब्रह्म नदी का निर्मल पानी।
तहाँ असनान करै कोई ज्ञानी।।
कहै मलूक जाई बुड़की दीजै।
फल तत्काल निरंजन लीजै।।

दोहा

यह विचार ठहराई जीव मन सौं कहो निदान।
गिरधारी सौं प्रीति करि तजि हौं मैं अभिमान।।
प्रीति भली गिरधर लाल की सुनु सुनु मन मेरो।
तेन समान दूजा नहिं गावत सुति जन टेरो।।
घट घट खेलै लाडिला कोई अन्त न पावै।
नवल बिहारी छड़ि कै का सौं लौ लावै।।

मुनि गन्धर्व कोई अमर न देखा। साहिब सब सौं माँगै लेखा।।
इस जियरा के गर्व भुलाना। आवत देखा जात न जाना।।
यह संसार रैन का सपना। श्याम लाल बिनु नहिं कोई अपना।।
बहुत सयाना प्रीतम पाया। आपुन भूला सबन भुलाया।।

चुनि-चुनि कलियाँ सेज बिछाया। रैनि उनीदा कहुँ खबरी न पाया।।
भगतन के धन गिरवर धारी। कहै मलूक भजि सरनि तुम्हारी।।

भजि ले चरन मुरारी के जीती सार न हार।
कहै मलूक हरि चरन बिनु जन्मी मुए कै बार।।

भजि हरि नामहि चेतु सवेरा। यह है राम मिलन की बेरा।।
का माया भजि जन्म गँवावै। यह औसर हाथ बहुरि नहिं आवै।।
जब जब जन्म तब तब मुवा। हरि भगति बिनु कारज नहिं हुवा।।
अब भजु तूं भानु निहोर मेरा। कहत मलूक नहिं भौ जल फेरा।।

मन बोले जेहि विधि भजे आवागवन नसाई।
सो विधि मोकों प्रगटि करि दीजै मोहि समुझाई।।
भजि मुरारी के चरन तजि अहमेव अहंकार।
कहै मलूक याते अधिक नांहि और विचार।।

मन रे तै थकित थकित थकि जाहि।
बिनु थाके तेरा काम न हो इहै फिरी फिरी क्या पछताहि।।
सकल तेज तजि होहु निपुंसक यह सीखी बुद्धि लै मेरी।
जीयत मृतक को दशा विचार पावहि वस्तु घनेरी।।

जब लागि तैं सरजीव रहैगा तब लगि पर्दा भाई।
छुपि जाई ओट तिनुके की ज्यौं पर्वत ढकि जाई।।
याके ऊपर और कछु नहिं यह मत सब तें पूरा।
कहत मलूक मारि मन मंगल होई रही यै जेंउ घूरा।।
तब मन ब्रह्म ज्ञान सों बूझो निकट बुलाई।
काँटा चुभे ते पीर है जियत मारि केंऊ लाई।।
ज्ञान कहो जीवन मरन धर्म देह को आहि।
तैं नलनी के कीर जेऊ ब्रिथा मानि लियों ताहि।।
जब यह मान बिसारी कै धरहि रूप निज ध्यान।
कहै मलूक तौ देह गुन लगै न कबहूँ आन।।

मन वचन असंग प्रति दोहा

यह कहो मन असंग सों मोहि नहि परत संभारि।
संग बसत गुण संग को लगै न कौन प्रकार।।
जेउ रवि को भजै नीर तें नीरज रहै निनार।
कहै असंग यौं हरि भजन लगै न देह विकार।।
यह सुनि मन कहा भगति सौं जब तन संग छुटि जाई।
तब श्रवनादिक हरि भजन कियो सब विधि जाई।।
काय निवेदन भगति कहो अवधि भगति यह आहि।
जेन हरि हित निज तन दियो कह करवें रहि ताहि।।
यह सुनि कहो विचार सो सर्वस देत न वार।
पै तन मोह छूटत नहीं कीजै कौन विचार।।
कहो तब सत विचरन करि नित अनित विचार।
देह खेह होई जायगी दै तजि सकल विचार।।

और विचार बिचा नहीं बिचहि रहिहो कछु ना लभ जी।
जै तौ आई कै द्वार परे सरनागति तेई तरे जेहि है लभ जी।।
छोड़ि देई बार अबार न लाऊ मलूक कहै तन दुर्लभ जी।।
जौं पै चाहते हों सुख अत समे में तौ सबै तजि कै भजु बल्लभ जी।।

यह सुनि सन्त विकसो पूछो मन विचार।
जो कछु आज्ञा देहु तुम करो सो अब निरधार।।
कहो विवेक जग आई कै मरना है निरधार।
पै हरि द्वारे पै मरै मरै न दूजी बार।।

बाबा यह मुरदहु का गाँऊ।
जग में कोई थिर रहन न पाया, जिसका धरिया नाँऊ।।
पीर मुए पैगम्बर मुए, मुए जींद मुए जोगी।
राजा मरि प्रजा भी मुए, मुए वैद्य मुए रोगी।।

नौ भी मरि गये दस भी मरि गये, मरि गए सहस अठासी।
तैतिस कोटि चौधरी मरि गये, परी काल की फाँसी।।
चांद मरे सूरजऊ मरि है, मरि है धरनि अकाशा।
चौदह भवन जलामै होई है, ऐन की झूठी आशा।।
जोति सरूप उहै एक थिर है जेन यह सृष्टि उपाई।
कहत मलूक साधु को सर्ब सत्ता कों काल न खाई।।

मुवा सकल जग देखिया मैं जियत न देखा कोई।
मुवा मुई को ब्याहता मुवा ब्याहि कै देई।।
मुए बरातहि जात हैं एक मुवा बधाई लेई।
मुए मुए सो लरन कों मुए जोरि लै जाई।।
मुरदे मुरदे लरि मरै एक मुरद मन पछताई।
मरने मरने भाँति हैं जौ मरि जानै कोई।।
राम द्वारे जो मरै तो बहुरि न मरना होई।
अन्त एक दिन मुरहुगे गलि गलि जैहै चाम।
ऐसी झूठी देह ते काहे लेहू न साँचा नाम।।
एन की यह गति देखि कै मैं जहँ तहँ फिरौं उदास।
अजर अमर प्रभु पाईया कहत मलूका दास।।

दोहा

मन सुनि वचन विवेक के जीव सों कहो सुनाई।
काम निवेदन भगति दृढ़ भजि हों जादौराई।।

कवित्त

जप मेरे जादौराई तप मेरे बनवारी तीरथ जगत मनि राम ही में नहाई हों।
पुनि मेरे प्राणनाथा दान मेरे दीनानाथ सुमिरन कन्हैया गोपीनाथ फल पाई हों।।
ग्यान मेरे नन्दलाल ध्यान मेरे केशौराई माधौ मधुकर मन मोहन लड़ाई हों।
कहत मलूक मेरे प्रीतम बिहारी लाल मुकुन्द मुरारी घनश्याम उर लाई हों।।

यौं जीव मन एक मत होई दृढ़ करि ब्रह्म ग्यान।
ब्रह्म नदी मिलि न्हाई जल धोयो तन अभिमान।।
तन अभिमान मल जब गयो मन अदर्श ते नास।
तब जीव कहो तामें निरखि निज स्वरूप परगास।।
रे जीव काया खोजी देख मन अदर्श के माह।
तन ही मन अरु आत्मा है जेऊ शशि शशि छाँह।।

आपा खोज रे मन भाई।
आपा खोजे त्रिभुवन सूझे, अंधकार मिटि जाई।।
जोई मन सोई परमेश्वर बिरला औधू जानै।
जब जोगेश्वर सब घट व्यापै सों यह भेद बखानै।।
शब्द अनाहद उठै जहाँ तै तहाँ ब्रह्म का वासा।
गगन मण्डल में करत कलोलै परम ज्योति परगासा।।
कहत मलूका निर्गुण के गुण बड़भागी जन गावै।
क्या गृही क्या वैरागी जिस हरि देई सो पावै।।
जीव यह मत ठहराई धरि मन अदर्श को ध्यान।
श्रीगोपाल गुण गाई पुनि लागो करन बखान।।

मोर झगरा निबेरहु श्री गोपाल।
घड़ी-घड़ी आँखि देखावै काल।।

उठि बिहान मोर गहै फाँडा। देह धरे का माँगै आंडा।।
यह दुःख मोपे सहो न जाई। नाहक मोहि सतावै आई।।
मैं तो यतन कीर कीन्हाँ। अंग तेंहि तोहि जीयर दीन्हाँ।।
आपा मेटे भजेऊँ तोहि। अब कहो को दग्धै मोहि।।
पाप पुनि तजि भया निहकाम। अब मोहि कर्म न लागै राम।।
खीती करै सो देना देई। दुख सुख अपने मूण्ड कै लेई।।
अब मैं आयो सरनि तोरी। यह जिचा ले बात मोरी।।
बिनती करत मलूक दास मोहि तुम्हरे चरण की आस।।

निष्ठा ब्रह्म ग्यान की कही मलूक बखानी।
तन अहंकार नेवारिए निज स्वरूप धरी ध्यान।।
असंसक्ति में जीव जब यों तजै तन अहंकार।
तब पदारथ भाउ को तिस हीं होई अधिकार।।

इति असंसक्ति पूरन

थ पदारथा भाउ षष्टम भूमिका

प्रेम भक्ति का वरनन

नमो निरंजन निरंकार बृज विहरत नट भेष।
तन मन धन नयौछावरी करऊँ सो छवि नैनन देख।।
असंसक्ति में मन सहित जीव तजो अहंकार।
प्रेम भगति की ताहि रुचि तब दई ताहि मुरारी।।
मन भीतर भै काल को कछु एक रहि गयो सेष।
जेऊँ असाढ़ दावरि सुमिरि ब्रिष हरो तजि देत।।
अथवा जेऊ कोई सपन में गज भै चहै पराई।
चौंकि उठें तौ गज नहीं पै गज समुझि डेराई।।
सो भै अनभै भएँ बिनु जाई न आन उपाई।
ते हित जग्यासा करत श्री गुरु कों सिर नाई।।

भँवरा कँवल हि पावै। कैसें जग जंजाल मिटावै।।
गुरु आत्मा जागै। कहत मलूक भ्रम केंऊ भागै।
कँवल सों प्रीति लगावै। तब मधुकर अम्बुज रस पावै।
स सों जब रहै लोभाई। सहजहि जग जंजाल नसाई।
कब ऐसा परगास। तेहि पद नहीं शशि सूरज भास।।
प्रकास भ्रम तम सब भागै। कहै मलूक तब आत्मा जागै।।

षट्दरसन दरवेश पुनि संन्यासी भगवान।
प्रेम बिना पहुँचे नहीं दुर्लभ पद निर्वान।।
प्रेम प्रीति सों आरती कीजै बारम्बार।
आरती आरतीवंत की सहि नहि सकल मुरारी।।

पाल की चित्त धरि कीजिए। जन्म स्वार्थ लाई परम सुख
कलयाण हरि जस गाइए। धूप दीप घृत साजि परम पद

नी शंख मृदंग किनरी बाजहि। कंचन थाल अनूप जाति विरा
भक्ति ततु सार सों अन्तर रखिए। कहत मलूक दास हरि रस च

कहत मलूक सपूत सो जो भगति करै चित्त लाई।
जरा मरन तें बचि परै अजर अमर होई जाई।।

हरि की भगति यौं चित्त लाई। जा ते जनम मरण भ्रम जाई
नाम श्रवण म्रिग जेंऊ चित्त देहू। जीवन जन्म सुफल करि लेहू
कीरतन पातिक जेंऊ करै। नाम छाड़ि चित्त आन न धरै
सुमिर करहु कुंजक भाई। सब दुःख हरि सुमिरन ते जाई
पद सेवन अरचन मन धरौ। चंद चकोर तेवै सु चित करौ
वंदन प्रीति परे बाधार। न जे जेंऊ निज देह संभार
मान अपमान नहीं चित्त धरौ। व्यपिक जानि दासपन करौ।।
सखा भई मीन की न्याई। नीर बिना जेऊ पल न रहाई।।
काय निवेदन सती जेऊ करै। हरि को ध्यान न चित्त ते टरै।।
कीट भ्रिंगी रहै लौ लाई। सोई कीट भ्रिंगी होई जाई।।
प्रेम प्रीति यौं हरि उर धार। कहै मलूक भौ तरिए पार।।

दोहा

प्रीतम राम सँभारिए मन वचन कर्म विचारी।
मीत कन्हाई भगत का भाषत वेद पुकारी।।

भगतन का मीत कन्हाई।
प्राण धनता बिनु कछु न सोहाई।।
जैसा भँवरा सब फूलन में वास न लेत अघाई।
कंवलहि पाई और सब त्यागै आपुहि तहाँ बधाई।।
जल सों कर्मठ अमृत में राखै मीन तलफि मुरझाई।
ऐसे हरि जन हरि सों राते ता बिनु पल न रहाई।।
ऐसी कृपा करै प्रभु जा पर बाँह पकरि अपनाई।
कहै मलूक ता जन के ह्रदये आठों पहर सहाई।।

सुगम भूमिका भगति है नौधा धरिए धीर।
दस ए पूर प्रेम तें प्रगट मिलै जदूबीर।।

भूमिका भक्ति निर्वाण पद साधु बिरला लहै भणमानी।।
अपमान षट ऊर्मा कों तजै आत्मा रंग लै अमानी।।
कीर्तन करै पाप सुमिरन हरै रहै पद सेव नित चित्त लाए।।
वन्दना भाव मन में धनीदास पुनि सखा आपा मिटाए।।
न यौं पीयै त्रिपिति आवै हिए चाखि जेंऊ गुंग रस रहस्य पावै।।
लूका कहै स्वाद अद्भुत लहै चहै बहु भाँति पै कहि न आवै।

श्री गुरु को उपदेश सुनि जेंऊ भागवत पुरान।
प्रेम भगति उर उपजी दृढ़ कीन्हीं मन आनि।।
मन कों निवृत्ति सों दीन्हीं भगति मिलाई।
मिलि निवृत्ति मन को गयो पुरुष पनो विसराई।।
पुरुषपनो बिसारि मन गहो गोपिका भाऊ।
गोपि भाव भए भयो हरि दरसन को चाऊ।।
हरि दरसन के चाव लागी हरि सौं प्रीति।
बिसरी कुल मरजाद सब प्रेम अटपटी रीति।।
प्रेम सुधा रस पीवतें भए रसमसे नैन।
नन्द नन्दन के दरस बिन न एक छिन चैन।।
चैन एक छिन जब ना परै तब मन अति अकुलाई।
लाज साज कुल कानि तजि बाँधी कमर बनाई।।
कमर बाँधी खैंचि कै पनही लई चढ़ाई।
पिऊ प्यारे के देश की कबहि पहुँचिहो जाई।।
कब रे पहुँचिए जाई कै ढूँढ़ौं बनन बनाई।
भूले भटकें मति कहूँ सामसुदर मिलि जाई।।

अब कहूँ रास मिलैं भूले भटके ।
पात पात कै सब जग ढूँढ़ो प्रेम प्रीति कहुँ अटके

जा कारण सब कुटुम्ब संघारे पाँचों लरिका पटके।
कहै मलूक सिर डारि ठगौरी ना जानौ कित सटके।।

दोहा

यह विचार गुर जन सुनत कहो सासु सों जाई।
सासु सुनत तब लाज को दीन्हों सुरित पठाई।।
निपट निलज नहि हुजिए कहौं आई यौं लाज।
लाज तज हरि ना मिलै अति सुसील ब्रिजराज।।
रुक्मिनि कँवल जात जी जाहि ले दिजराज।
लाज रहै अरु हरि मिलै कीजै सोई काज।।
लाज भगति सुनि भगति सो मन बोलो सिरनाई।
बैरि निलाज आड़े भई अब ब्रिज गयो न जाई।।
गयो न जाई ब्रिज लाज तजि हरि बिनु रहो न जाई।
दोऊ भाँति कठिन भई कीजै कौन उपाई।।
प्रेम भगति तब यौं कहो मैं हरि देउ मिलाई।
हरि सों मिलि कै तूँ मुझे जौ न देहि बिसराई।।
प्रेम भगति के वचन सुनि मन को भयो हुलास।
कहो देखाऊ हरि नैन भरि होई हो तेरो दास।।
प्रेम भगति तब यौं कहो तूँ सुनु अब चित्त लाई।
हरि मिलवे की रीति तोहि देंउ सकल समुझाई।।
निलज भये हरि न मिले नहीं लाज सों काज।
भगति भाऊ मानत सदा भगत बछ्ल ब्रिजराज।।
प्रेम भगति उर आनि कै निज सरूप धरि ध्यान।
अपनो विरद संभारि तब मिलि है श्री भगवान।।
मिलि है आई भगवान तब आपन पौ मिटि जाई।
रीझि देहि हरि अपने पौ कीट भ्रिंगी की नाई।।
कीट भ्रिंगी की न्याई होई विरह तपति मिटि जाई।
कहै मलूक यह भेद सब दीन्हो भगति बताई।।
प्रेम भगति के वचन सुनि बाढ़ी प्रेम प्यास।
निसिदिन चैन परै नहीं हरि दरसन की आस।।

जीव वचन प्रेम भगति सों दोहा

मन की यह गति निरखि जीव हरि छवि हृदयै बसाई।
प्रेम भगति सों यौं कहत बार-बार सिर नाई।।
मेरो मन हरि दरसन बिनु रहों बहुत समुझाई।
दासी ताकी होई रहौ जो हरि देई देखाई।।
मुझे क्रिस्न भावै कोई मिलावै ताहि तन मन दीजिए।
हुजीए बिनु मोल वादी उजुर कबहूँ न कीजिए।।
नेह दीन दयाल का मुझ अमल सा लागा रहै।
कँवल नैन किसोर मूरति मधुरि बातैं कहै।।
गोबिन्द गोपीनाथ गिरधर गुवालियहुँ मन भाँवदा।
कहै मलूका दान लैंदा नाना रूप देखाँवदा।।

पीत पीताम्बर राजै।
प्रभु कें मुरली हाथ विराजै।।
मुरली हाथ विराजै लाल राजै देखतें सुखु पाइए।
साँवला सुख दाई सीतल आनि कंठ लगाइए।।
कल्यान राई सुनाई मुरली सखा काम ना मोंहदा।
मोर मुकुट गोपाल जी नूँ बहुत उतिम सोंदहा।।
कान्ह करत कलोल मुधवन संग हैं आहीर की।
कहै मलूका जाँऊ बलि बलि आपने जदुबीर की।।

अद्भुत कुँवर कन्हाई।
लीला वरनि न जाई।।
कुँवर कन्हाई जन सुखदाई राधिका वर गाइए।
नित नौत्तम नाम हरि को अनन्त लोक बखानिए।।
दिन सुदिन मैं तब गनौ जब लाल अपना पाइए।
आदि ब्रह्म अपार लीला कैसें कै उर आनिए।।

भेंटिए जँह लाल अपनो चल सखी तँह जाइए।
कहै मलूका देखि नैनन विरह दाह बुझाइए।।

माई मुझै बिरह सतावै।
अरी छिन नीन्द न आवै।।
नींद न आवै विरह सतावै चैन कबहूँ न पाइए।
बिनु दरस मेरे प्रान जांदे कैसें मन समुझाइए।।
द्वार जात डेराऊँ माई गुन जनै वैरिनि भई।
जबहिं सुनियाँ ब्रिज का सासु सो कहने गई।।
श्याम सुंदर साँवल माई लागदा मुझ सोहना।
कहै मलूका आई मिलिया आपु ते मन मोहना।।

सोने सुमन रैनि दिन फूलो बारह वान।
सोने की टिकुलि पिय पाएऊ सोहाग प्रवान।।
सोनवा अस आजु दिन मोर सोने की रैन मोर वास।
सोने कै टिकुलि पिय पाएँऊ सौति करहि मोरि आस।।
सबै सिंगार सँजोए ऊसै अस्थान समीप।
चहु मुख जोति अखंडित प्रगट भई मनि दीप।।
प्रथम समागम सुख भा पुनि सुख सुख हि समान।
नैहर सासुर दुहुँ कुल दिन दिन बाढ़ो मान।।
लहुरिए जेठि लघु मानिय सबहिन लहो सन्तोष।
कहै मलूक पतिव्रत गहि जायत ही पायो मोक्ष।।
मन माना प्रभु के मिलें प्रभुता देखि अपार।
ऊंच नीच प्रभु ना गनै सबही के करतार।।
मनमाना प्रेम देखि कै जाकी यह प्रभुताई।
पशु पंछी पाहन तनु अहि गज गनिका गति पाई।।
सनक जनक प्रह्लाद ध्रुव नारद समुझाई।
बधिक अजामिल तिन समान वेदहुँ मिलि गाई।।

सुन्दर सुघर पुनीत मीत अति सुहिदै सुभाए।
बाहेर भीतर एकसा रीझै बिन ही रिझाए।।
मात-पिता गुरु साइयाँ सब विधि सुखदाई।
कहै मलूक केऊँ छोड़िए अैसी सरनाई।।
मन मोहन छवि देखि जीऊ बोलो विव कर जोरि।
मन लेहु मेरी आरति माधौ नवल किशोर।।

मानि ले माधौ जी आरति मोरी। भो भाऊ करौ कर जोरि।।
प्रेम प्रीति का थाल बनाया। फूले कपटे आनि चढ़ाया।।
चरन कँवल देखत सुख लागा। सादी भगति किएँ भ्रम भागा।।
हरखि-हरखि हरि के गुन गाऊँ। साधु संगति नेव छावई पाऊँ।।
निरमल जोति आत्मा राचा। कहत मलूक गया मति काचा।।

जीऊ ए विधि करि आरती हरि सों कहौ निदान।
श्री गोपाल मोहि दीजिए भगति अपनी दान।।

गोपाल राई मैं तुम्हारो भिखारी।
जग सों तिनका तोरी अडारा आयो सरनि तुम्हारी।।
कलह कल्पना छूटि गई है सुख उपजौ है भारी।।
अब कछु नजर न आवै मेरी देखें तुम्हहि मुरारी।।
कहै मलूक आनंद भयौ है भजि हरि मंगलकारी।।

दोहा

यौं मन मधुकर थिर भया श्री पद पंकज पाई।
गूँगा जेऊँ रस चाखि कै मनहि मन मुस्काई।।
मन मुस्कायो निरखि जीऊ बोलो लहि आनन्द।
और रंग फीके सकल रातो है हरि रंग।।

सब रंग फीका लाल न हरि रंग राता। प्रेम पियाला पीवत माता।।
हुवा मगन विसरि गै देंही। जब तें मिलिया श्याम सनेही।।
भाऊ भगति मुझे नीकी लागी। उपजा सहज भया वैरागी।।
मारग छोड़ि उवटा को धाया। उवट जाई परम पद पाया।।
अब की बार विवेकनि आई। कहत मलूक मिले सुखदाई।।

पिय हमारा निसप्रिहि नख सिख सहज बनाऊ।
प्रेम लछ गहि सहजहि पायो सहज सुभाऊ।।

सहजी पिय मेरा सहज रहनि। सहज अंग सुभावै सहज गहनि।।
सहजै संजोग वियोगी केलि सहजहि। सहजै अनुरागी त्यागी सहजै रहैजही।।
नख सिख सहज भरोसो पिया। हो आतुर कैसे सुख पावै जीया।।
सहज कैका जलज पति खोई। सहजहि सहजहि सहज मिला पिय सोई।।
सहज क्रिया कै सहज मिलाए। दास मलूक सहज पद पाये।।

जा हरि के दिदारि को भया देवाना जीव।
सतगुरु की दया भई सहज मिला सो पीय।।
जिसकी दीदारि को दिवाना भया मेरा दिल।
बहुत खूब वंशीधर अजब यार पाया है।।
दोस्त को जानता है दुश्मन पहचानता है।
काम भया तिस का नैन उस तें लौ लाया है।।
साहेब है आपे आपु पैदा कै ना पैदा करे।
देखत हौ यारो यह नन्द का कहाया है।।
कहता मलूक फिकिरी में यह है बिहारी लाल।
बन्दे को बाँह पकरि भहिस्त लै देखलाया है।।

महिमा प्रेम भगति की वरनौ कहा विशेष।
सो हरि देखो नैन भरि जाकें रूप न रेख।।

देखो मैं जोगिया रे बेनु बजाँवदा एक भाँति।
निरंजन जोगिया रे सब रस भोगिया सुख सांति।।
पीताम्बर की गुदरी गले लाल लकुट लिए हाथ।
मलयागिर को भसम चढ़ाई राधा जोगिन साथ।।
कानन मंद्रा जरित को माथे मुकुट अनूप।
वा जोगिया की मूरति ऊपर वारौं मैं कोटिक भूष।।
सींग पूरै प्रेम की बाबू चतुर सुजान।
कहै मलूक सोई रावला सब जगतन को प्राण।।

प्रेम भगति की निष्ठा कही मलूक विचारी।
हरि दासन हित दीजिए तन मन सर्वस वारि।।
जब पदार्थी भाऊँ मन यौं जीव धरै प्यार।
तब तुरिया पद विमल को तिसहि होई अधिकार।।

इति पदार्थ भाव पूरन

अथ तुरिया भूमिका सप्तम

बार बार मनन करत जाँचत हो प्रभु दान।
जन्म जन्म दृढ़ भगति दीजै श्री भगवान।।
यह तुरिया है भूमिका जहाँ न द्वितीया भाउ।।
जन मलूक के मन तहाँ प्रेम भक्ति की चाउ।।
प्रेम भक्ति नहीं छाँड़िए जब लग घट में प्राण।।
जासों हित कीन्ह मुझे आई मिले भगवान।।
प्रेम परम पद पाइए, प्रेम उतारै पार।।
प्रेम भक्ति की महिमा, श्रीमुख कही मुरारी।।
प्रेम भक्ति जाके घट, पूरन ज्ञानी सोई।।
कही मलूक जल तरंग जेउ कहन सुनन को दोई।।
प्रथम प्रेम नेष्ठा कहो नन्द नन्दन गुन गाई।।
बहुरो निष्ठा ज्ञान की देहो सबै बताई।।

प्रथम प्रेम भक्ति नेष्ठा वरनन दोहा

प्रेम भक्ति संछेप कही छटी भूमिका में गाई।
बृज की लीला वरनि अब विस्तृत देउ सुनाई।।
मास भाद्रपद अस्टमी कृष्ण पक्ष बुधवार।
वसुदेव ग्रेह हरि अर्ध निशा लयो मथुरा औतार।।

मथुरा औतार लिया मन मोहन जाईसु गोकुल मंगल गायो।।
जानि न जात विसंभर की गति जेऊ वसुदेव पठाइ सिधायो।।
दान दिए नन्द बोलाइ के विप्रन बंधिन को पहिराई बनायो।।
दास मलूक परि कछु बूझि सो आइकै यौ रिषि गर्ग जनायो।।

सुनहु बात चित्त धारो। मोहि अकाशवाणी भइ
नंद यसु तन तुमहार। वसुदेव गृह भयो प्रकट

बाजे है नगारा चहूँ चक मेरे राम जी को।
होई है राम नाम और दोहाइ फिरि जाइगी।।
ढेरिन बिकै है अन्न बरखा भई ब्रिज की।
सी गइयाँ कलोल कै अघाई तृण खाहिंगी।।
पायौ है लखाऊ मैं मोहि भई है आकाशवाणी।
धर्म है अटल पाप रती जरि जाएगी।।
आयौ है चरवाहो चरवाँ की कै चरि हैं।
धेन प्रकट के भये तहाँ सबकी भलाइगी।।

कहत मलूक दास बात मेरी मान लीजै।
ब्रिज में आनन्द भयो, सौ है केशा राई की।।

दोहा

जे जे बृज आनन्द भये, सुनहु कहो अब गाई।
प्रेम प्रीति रीति सब, तिनही में दरसाई।।
प्रथम बाल लीला सुनो, प्रेम भक्ति को प्रिय।
कहि हों बहुरि किशोर छवि, जेहि सुनि हरखै जीय।।

आदि पुरुष भगवान। संत हेत बृज वपु धरी
तिन कों लैं सुत मानि। हित जुत गोद खिलावही

माई इम नाचि मना नंद दा कान्हा खेलदा ग्वाली दी गोद विचे।
तीहूँ महीने दा बोलदा चालदा तदि अहीरनी गल पुछे।।
छोहरा चंचल कुनहरी चाटदा माखन शाम नू बहुत रुचे।
दास मलूक तें गुझराना ही नयन तिंहुनो जानि चुकै।।

दोहा

जो कहौं बाल चरित्र सब कोई बहुत विस्तार।
तातें प्रेम प्रकास हित वरनौ चरित मुरारी।।

मोहैं बृज बाला सकल रूप अनूप देखाई।
ते पुनि सुमिरि सुभाउ गुण कहत बताई।।

कवित्त

जमुना के तीर बधाई उचरावै दिदियारे मैं कन्हवहि दीख
केसरी खबरे पवे री बौढ पोतिया पहिरे लागै नीक।
सधर घोर चोबाव गलन मैं लाए बास मोहि आवै छीक
कहत मलूक सुनो मोरे बँधौ वेणु बजावै गावै नीक।
अपने खेत बागई उनिरावै दादा ने मैं देखेऊँ कान्ह
नील घोर भैं भैं दौरावै मोहर चारि कर कसें पलान।
बहुत नीक मैं देखि भुलानिऊँ, मोर का पखना खोंसे वान
कहत मलूक सुनौ मोरे बन्धो एन्हहि छौंडि केहि पूजिए आन।
सधर पानि पियाएऊ दादा कन्हवै बैठे-बैठे गावा
आनेंउ धान भूजाएऊ भरा कै नीकें मन कै खाए खिलावा।
बहुत नीक मैं देखी भुलानिंऊ पूछेंउ भनु मधुवन हूँ तैं आवा
कहत मलूक सुनौ मोरे बंधों कठिन मीत मैं भल कै पावा।

दान लीला वरनन दोहा

कहो सखिनि सों एक दिन अपने निकट बोलाई।
चलो कलेऊ कीजिए खोरि साकरी जाई।।
सबल सुबाहु आजु लाग है सवारे भूख।
चलो खोरि साँकरी कलेउ जाई कीजिए।।
ग्वालि बरसाये नेकी लै लै आवती हैं दधि।
पात के पत्तौ पाकरी छीनीछोरि पीजिए।।
भली बात एक यादि आई हैगी मोहि आजु।
ग्वाल सब मिलि जुलि नित दान लीजिए।।
कहत मलूक कान्ह कीन्हो है भलो सयान।
लूटि मारि पैए वोन्है कौ हिऔ न दीजिए।।

दोहा

यह मत करि सब ग्वाल मिलि घेरी ग्वालिनि आई।
कहो तिन्है ऐसी विधि समुझाई।।

कवित्त

अहौ ठाढ़ी होहु ग्वालिनी हमारो एक काज है।
आई हौ किते ते लै आई दधि कितहि लै जाहूगी।।
यहाँ लागतु है दान दीए घर पै हो न जान।
अँचरा गहे तें पुनि पाछें पछताहुगी।।
कहत मलूक कान्ह लिए बिनु छाड़ि है नाहि।
सिर धरें बन-बन कौ लौं बगदाहुगी।।

दोहा

ग्वाल वचन सुनि ग्वालिनी, बौलैं तूँ तजि कानि।
कान्ह लाज आवत नहीं, तुमको माँगत दान।।

कवित्त

अहौ दान तौ ले तड़कौ तिया बाभन देत सो जाहि सनीचर लावै।।
कैतौ कहूँ कहूँ पातुर पावत जो हँसि गाई बड़े कों रिझावै।।
नटवा और नटी तुम होहु न मोहन जो कोई आजु बोलाई नचावै।।
दास मलूक कहा करि माँगत कान्ह तुम्है छिपा लाज न आवै।।

दोहा

अब काहे न ऐसी कहो रस सो राखो मान।
जौपें दधि ढरकाई कें लियो न बरबस दान।।

कवित्त

अब काहे न ऐसी कहो तुम ग्वालिन जौ पै तिहारो न दूध लुटायो।।
लगे हुते ग्वाल सब काउ भाउ कै आजु मसा कै मही बख्सायो।।

झकझोरत है अँचरा गहि के बगदाइ दिए कहुँ बुंद न पायो।।
भले की भलाई न मानत कोउ सो दास मलूक कहा जुग आयो।।

खोरी सांकरी दान मिस घेरी परनारी कुठाउँ।
देखे सुने न आजु लगु रहत कौन धौ गाउँ।।
आजु खोरी सॉकरी अनोखे दानी देखउ तू।
अब लौं कहा हे लाल हम तौ न जानिए।।
आजु लौ सुनो न नाऊँ रहत धौ कौने गाउँ।
अनचीन्हे कहौ सखि कहा मन ठानिए।।
तनक से मुख बात कहो बड़ी बड़ी ऐसे।
कर लेवै या धीर हम तौ न मानिए।।
कहत मलूक कहा डांटत हो बार बार।
ऐसे तो जगाती हम लेखे हूं न आनिए।।

दोहा

दान सबै प्रकार के लहि देहि दई जे कोई।
तै पुनि या बृज माह तेहि बहुरि न रोक न होई।।

दान बहु भॉति हो लेवै या सब दानन को देवै या सब विधि फल देई जोई सो लहै।।
नव ग्रह मैं भेद इच्छा कामना को हेत जोग ओ संजोग भोग न्याई नीति जो चहै।।
तुम बृज बसौ जो गोरसनि बेची खाऊ अरु बन बिढ़तो बहुत तो सों के कहै।।
कहत मलूक बृजनाथ बनमाली नाउ न है याहि गाउ बरबस लैहों जो चहै।।

दोहा

यह कहि मृदु मुस्काई हरि मटकी लई छिनाई।
चितवत रहि गई सुन्दरी ठगी मृगी के नाँई।।
यौं ग्वालिनि चित्त चोरि कै हरि चले जो गृह की ओर।
संग लगी ते उठि चली बँधी प्रेम की डोर।।
जसोमति कों तेन्ह निराश कहो, कीजै हमरो न्याई।
बरजोरी दीयो कान्ह सब मेरो दधि ढरकाई।।

यह सुनि कै करि बिनै पुनि बोले नन्द कुमार।
मात मोहि अदोस कों दोस देत बृज नारी।।
मेरी ऐन बंसी लई सो मैं लई छिनाई।
तब खिसियानी होई सबनि दई मटुकी ढरकाई।।
जुगुल वचन पियुष सुनि नन्दनारी मुसुकाई।
कहो या बालक अदोस को दोस देहु केहि भाई।।

अरी आयो अलबेलो मन मोहन बिहारी लाल,
चंचल - चतुर चित्त देखत चोरायो है।।
होई गई बेहाल मोहि तन की सँभाल नाँहि,
बड़ो ठग देखो मूँड चेटक सो नायो है।।
वो रहनो देत मामी पियत यशोदा माई,
कहत मलूक कान्ह भलो तै सिखायो है।।
छीकत न चली माई लहने की गति देखो,
लटपटी पाग में लपेटी मन ल्यायो है।।

दैवो रहनो उठि चलै फिरी आवै बहराई।
रीति-प्रीति की अटपटी कही कछु नहिं जाई।।

ग्वालिनी राँची हरि रंग।
देह सुरति सब बिसरी मध्यान किएँ जेंठ अंग।।
प्रेम मग्न ग्वालिनि भई हरि को रूप निहारि।
इत उत ते फिरी आई कै, फिरी आवै नन्द द्वार।।
निस वासर चितवत चलत टरै न चित्त तै ध्यान।
डोले दधि मटुकी लिए बोलै लै लै कान्ह।।
प्रेम कथा अति अटपटी कैसें कै कहि जाई।
मलूक मिलै रवि किरनि जेऊँ तेऊ रही रूप समाई।।

वरनी यह हरि कृपा तें प्रेम प्रीति की रीति।
अब विवाह वरनन करौं गाऊँ मंगल गीति।।
श्री राधा बृजराज को नित प्रति धरिए ध्यान।
मम सरूप निज संत है श्री मुख कहो बखान।।
द्वै जवाहिर नैन में, एक हीरा एक लाल।
परखत है जन जौहरी श्री राधा नन्द कुमार।।

विवाह

ब्याह रचो श्री वृषभान जी शुभ घरी लगन धराई।
पूरे रे पुनि हुँ पाइया सोहै कँवर कन्हाई।।
नन्द बाबा को लाड़िला तुरी चढ़ी ब्याहन आया।
बक्सैं रे कंचन ढेरियाँ मोहन दान सवाया।।
माथै रे सोहै सेहरा गरे गज मोतियन माला।
अति ही अनूप विराजहीं मोहन नन्द को लाला।।
नाना रे बाजन बाजहि होहि कुतुहल भारी।
गोप वधु नौ जोबना देत जसोदहि गारी।।
सोने रे फूलहुँ फलिया यह रे गाऊ बरसाना।
देखन रे आए देवता चढ़ि चढ़ि पुहुप बेवाना।।
खाहि खवावहि बीरीयाँ मोहन नौ निधि दानी।
मंगल रे गावहि गोपियाँ विहंसै राधे रानी।।
जुवा रे खेलै लाडिली बहुत करे चुराई।
दाऊन रे छोड़े आपना सिखई कीरती माई।।
अर्ब खर्ब दें जाँदी यो औकर जोरी भै ठाढ़े।
पाऊँ गहे बाबा नंद के अपने प्रेम के बाढ़।।
यह जोरी अविचल रहो यह असीस हमारी।
दुल्हा रे श्रीपति साँवरो दुल्हिन राधा प्यारी।।
यह मंगल रे मुझे भाँवदो कहत मलूका दासा।
सुफल भयी मन कामना हरि को देखी तमाशा।।

श्रीपति आए ब्याहि घर करे आरती यशोदा माई।
आनन्द भयो मलूक के फूलो अंग न समाई।।

आरती करत यशोदा माई।
कुण्डल कान नन्द जी के खेय थकित भए हम देखी कन्हाई।।
कंचन थाल अनूप बिराजत बहु विधि सुन्दरी आपु बनाई।
कहत मलूक साँवली मूरती भगत के साँचे सुख दाई।।

दोहा

गायो यह हरि कृपा तें हरि विहार को गीति।
गाऊँ अब कछु मान रस जेहि सों बाढ़े प्रीति।।
मलूक प्रीति भली नन्द लाल की जो रूठेहि लेत मनाई।
मति मैला मन न जन करै ताते अधिक डेराई।।
एक दिन काहू सखिन सुनत कही कछुक जदुनाथ।
राधे रही जो मान करी तासो सुनि सुबात।।

दाख-सी बात बदाम-से मोहन मिस्री-सी राधे सो रखों खोटाई
खाँड-सी गरि दईप सगै वत चीनी-सी काहूँ सखी सुनि पाई।
खोवा-सो जाई कहो दु:ख रोई कै माखन-सी वृषभान दोहाई
साखि भसरै रस सवादि छोहारे-सो ऊख-सी मीठी भई है लडाई।
लड्डु-सो क्रोध कियो छिन एक में कँवल से हाथ लगाया कन्हाई
दास मलूक तमासौ है दूध-सो भारि परि जैसे पान मिठाई।

मान तजै नहि मानिनि, रहे करि बहुत मनुहारि।
तब आए सखि भेष धरि छ्ल हित नंद कुमार।।
अरु पुनि आलिंगन दियो हँसि तब चतुर प्रवीण।
सखी भेष हरि देखि उठि तब श्रीराधे आदर कीन्ह।।
पुनि एक दिन जसोमति गई राधे के ग्रहवत।
बरजो माखन खात तिन हरि को हित कि बित

तेन कों लगत देखाई कै हरि कही ऐसी विधि बात।
मेरो माखन खातहूँ तूरे क्या इतरात।।
तब राधे कहो मैं सकल जानत तुम्हरी टेऊ।
पै पूछें बिनु सासू सों कैसें कहौं यह भेऊ।।
तब हरि कहो तुम तौ सकल जानत हमरी बानि।
पै हमहूँ जानत भले जैसे हैं वृषभान।।
सुनत नाम वृषभान को राधे जी रिसियाई।
ललिता कों ढिग बोलि कै कहो ऐसी विधि समुझाई।।
ललिता साखी हुजियो बहुत सील मैं कीन्ह।
फिरी फिरी गारी देतु मुरली लैहों छीन।।

कीन्हो है मैं शील आजु बोलवे को,
दऊ नाँहि बार-बार कौल नैन गारी दे न पाई है।।
सासु गई सौंपी बिना कहें सखी कैसे दीजे,
माखन न पाओ मोहि लकुट चलाई है।।
मुरली लैहौं छिनाई खाती बृषभान की सों ललिता जी,
साखी हूर्जे का की अधिकाई है।।
कहत मलूक अब छिमा कीजे राधा प्यारी जानत हौ,
नीके यह चंचल कन्हाई है।।

दोहा

यह सुनि के राधे रहिं हरि जी सों मुख मोरी।
ललिता को ढिग बोली तब बोले नन्द किशोर ।।
हम तो हँसी सो कही राधे मानि सुभाई।
रहि हम सों करि मानवै पै हम पे रहो न जाई।।
तातें तूँ समझाउ वोन्है हम को देहु मिलाई।
वोन बिनु और मोही सुख सपनेहूँ नहीं सोहाई।।
यह सुनि ललिता जी कहो राधे जी सों जाई।
त्रिभुवन पति तुम दरशा बिन पंकज जेऊँ कुम्हलाई।।

आजू राज तेरा राधिका का जेन मोहन मोहा।
सब गुण पूरन साँवला सो तेरे दरशन जोहा।।
गोरस बेचन भूलिया बड़ी बातैं मन ठानी।
शाम सुन्दर वर पाइया जब तूँ भई पटरानी।।
वोन पर रे मेहर करी एता जोर न करिए।
देहि दिलासा बुलाई के कछु लोक ते डरिए।।
निसु दिन तलफैं मीन जेंऊ सब बृज की नारी।
जेन का सर्वस तू हैराते केंऊ जियहीं बिचारी।।
नित उठि तूँ नंद लाल सो करती भोग विलास।
काहू हि नजरी न आनती कहत मलूका दास।।
उत्तर देई नहीं मानिनी ललिता रही पचिहारी।
तब तिन कों ढिग बोलि कै यौं बोले नंदकुमार।।
अव अैहे बहु रस भरो ऐन कों तू समुझाई।
आ बोलै बन कुन्ज में हम बैठत तहँ जाई।।

एक सीख बुद्धि मेरी लीजै। राधा एता मान न कीजै।।
चलु कुन्ज बना बड़ भागिनी। रिसि छाड़ि दै सदा सोहागिनी।।
तेरी सुरति हरि सों लागिनी। तैंतौ बहुत बुरी जिय ठानी।।
हठ छाड़ि दैख रिसियानी। तेरे नैनहू निरमल पानी।।
मग जोवत कुंज बिहारी। तुझ कारन सेज सवारी।।
मैं तो विनती कै कै हारी। बहुर लिया मनहू हुलासा।।
उठि चलू री पिय के पासा। तैनूँ कह मलूका दासा।।

ऐहि विधि समुझावत गई सगरी रैनी सिराई।
तब हरि पै वन कुंज गई कहो ललिता एहि भाई।।
आन तजति नहि मानिनी रही हो बहुत मनाई।
आपु नहीं पगु धारिए अब लैयै ताहि मनाई।।

तब हरि आपुहि आई कहो प्यारी सों मुसुकाई।
तुम हम सों रही मान कै पै हम पै रहो न जाई।।
यह सुनि राधे जी कहो चितै सखी की ओर।
देखु सखी कहु निसु जगे मम गृह आय नन्दकिशोर।।

देखि सखी आजु मेरी अँखियाँ चरचि श्याम ,
रजनी गवाई कहूँ ओर उठि आए हैं।।
झांकि रहे हैं नैन बोलत मधुर बैन,
पटऊनी दे मोहि ललितै लखाए है।।
खाति वृषभान की सों टूटी वनमाल गरे,
करि हौं न सील कान्ह कनौड़े करि पाए है।।
सेंदुर लगो है अंग जागे परबेली संग,
पीक भीजो पीत पट भीतर छपाए है।।
कहत मलूका अब छिमा कीजै राधे प्यारी,
मानो गऊ धोखे तेरे मानिक चबाए हैं।।

गया मानिन को मान छुटि हतो दृष्टिक ओट।
तहँ कहु तम कैसे रहै जहँ होई सूर उदोत।।
प्यारी कों लै मग तब आए वन नन्द लाल।
फुलवारी भई राधिका मधुकर मोहन लाल।।

कौल की सी कली सबै फूली रही कुंजन में,
गूँजत फिरत कान रहो प्रीति बाधि कै।।
चंपा और चमेली राई बेली-सी छिटिक रही,
बाँकी बाँकी भौं हैं मानो राखि सर साधि कै।।
अमृत की सींची ब्रिन्दावन वन वौन ही तें,
साँवलो सुवास लेत एक सुर राधिका।।
कहत मलूक मैं मगन भया रूप देखि,
स्याम भये भौंरा फुलवारी भई राधिका।।

दोहा

राधा श्री बृज राज को ध्यान धरै जो कोई।
अर्थ धर्म अरु मुक्ति फल अष्ट महाधि होई।।
प्रेम भगति की नेष्ठा कही मलूक बखानि।
अब कहौ नेष्ठा ग्यान की निज सरूप धरि ध्यान।।
तन, मन, धन, कृष्णार्पन मन वचन कर्म किया।
भला मोल सतगुर किया शब्द अमोल दिया।।

अब मोहिनी का मोल मिला।
सीस उतारि लिया गाहक ने शब्द अमोल हिला।।
अजब मुलूक निमोलिक पाया मिल की बांधि दीया।
अंधरी बहिरी गूँगी महतिनि ताका साथ कीया।।
राह छोड़ि ले चली उबट कों आगे सुतहि चलाया।
महरम होई कै मारग पकरा महल जाई निज काया।।
महल माह एक महरम बैठा ता सों भया मिलाया।
तीहूँ लोक भूला जियरा अमल हजू पाया।।

वा गति की कहौ मलूकी अविगति अतिथि सलूक।
अगम अगोचर पूरन स्वामी परसे पुरुष मलूक।।
सर्व व्यापिक आत्मा सतगुरु दियो बताई।
अब क्यों पाती तोरी कै प्रतिमा पूजौं जाई।।

अब मैं भूला रे भाई।
पाती तोरी न पूजौ देवा सतगुरु जुगुति बताई।।
क्रिया कर्म आचार बिसारा छोड़ा तीरथ नहाना।
जब संसार सयाना देखों यही एक बौराना।।
ना मैं जानौ सेवा पूजा ना मैं घंट बजाऊँ।
ना मैं मूरित धरौं सिघासन ना मैं फूल चढ़ाऊँ।।

जौं वह मूरति बोलै मोसों संजम कै अन्हवाऊँ।
दे पुवा चारिक द्वै उठ ढेरिहि महँ एक लै आऊँ।।
जौं वह मूरति जेवैं जूठे ता तासीरा जानैं।
धोती बचावै जम सों दास मलूका मानैं।।
दया करै धर्म मन राखै गेह में रहै उदासी।
अपना सा दुःख सब का जानै ताहि मिले अविनाशी।।
सहै कुशब्द, वादहु त्यागै छोड़ै गर्व गुमाना।
यहै रीझि है निरंकार की कहत मलूक देवाना।।
राम नाम मेरे पूजा सुमरिन मेरे राम।
तीरथ गंगा आदि सब मेरे हरि को नाम।।

गंगा विस्नु, अंत को एक।। मेरे तो राम नाम की टेक
राम सेवा रामै पूजा।। मरौ अधम जो जानै दूजा
एकै चित्त अरु एकै मना।। दोइ कै जानै दुई का जना
हरि छुटि भजन और का करै।। सो पापी जाई नर्क हि परै
कहत मलूका हरि मेरे प्रान।। हरि तजि भजन करौं नहि आन
मलूका संध्या तर्पन सब तजे तीरथ कबहू न जाहिं।
हरि हीरा हृदये बसै ताहि पैठि अन्हाहिं।।

हमारे तीरथ कौन करै।
हृदये माहि मिले परमानन्द ताहि को ध्यान धरै।।
अैसे अंधन लोगन के संग पचि पचि कौन मरे।
कहत मलूक सोई जन तेरा जो पर पीर हरै।।

दोहा

भय चूकी निर्भय भया आई मन परतीत।
भर्म कर्म सब छूटि गया लागी हरि सों प्रीत।।

श्रीराम जी सहाय

अब मैं अनहद पदहि समाना।
सब देवन को मर्म भूलाना अविगति हाथ बिकाना।।
पहला पद है देई देवा, दूजा नेम अचारा।
तीजे पद में सब जग बाँधा चौथा अपरम्पारा।।
सुन्न महल में महल हमारा निर्गुण सेज बिछाई।
चेले गुरु दोउ सैन करहै बड़ी असाइत पाई।।
एक कहै चलु तीरथ जैयै एक ठाकुर द्वार बातावै।
परम जोति के देखें संतहु अब कछु नजरि न आवै।।
आवागवन का संसै छूटा काटी जम की फाँसी।
कहै मलूक मैं यहै जानि कै मित्र किया अविनासी।।
मन लिए रहत नन्दलाल को मति भौंहे रहै चढ़ाई।
आठ पहर घनश्याम को नैन निहारत जाई।।

गोविन्दा मेरा महबूब। सब गुन पूरन सुरति खूब।।
देखी दिदारि भया गलतान। अब कछु नजरि न आवै आन।।
आध पल हरि कतहूँ न जाई। नैनन भीतर रहा समाई।।
न जाउँ मथुरा ना जाऊँ काशी। घर बैठे पाएउ अविनासी।।
झिलमिल झिलमिल बरसै नूर। सिर पर साहिब सदा हजूर।।
कोई कहै सेवरा कोई कहै मीर। हिन्दू तुरुक का एकै पीर।।
कहै मलूक जब हँसै मुरारी। तन मन धन संतन पर वारि।।

नेष्टा प्रेम ग्यान की कहि हरि के गुन गाई।
अब तिन की महिमा कहौं सोऊ सुनो चित्त लाई।।
नारद जनक विदेह सनकादिक सुकदेव पुनि।
करि हरि चरन स्नेह तरे सिंधु संसार तें।।

जेन जन हरि चरनन चित्त लायो।
तेई तेई संत तरे भौसागर अजर अमर पद पयो।।

कबहूँ न दरसन होत जमन ते सो पथ गुरु बल पायो।।
कहत मलूक परताप भजन के सब जंजाल मिटायो।।

राम भजन ते कुसल परी।
ना तर दूत फारी लै खाते बाँटि लेत जम डरीय हरी।।
लेखा जोखा फारी पड़ीया भला भया हरि भगति करी।
मैं बलि जाऊँ साधु संगति की जहाँ हमारी कुमति जरी।।
अब कैसें हरि नाम बिसारौं जासु मिल मेरी विपत्ति टरी।
कहत मलूक गोबिन्द के गुन रटा करौं मैं घरी घरी।।

घरी घरी हरि गुन रटत गये सब विघ्न बिलाई।।
दास मलूक सुखी भए श्रीगुरु राम सहाई।।

जाके गुरु गोबिन्द सहाई। कोटि विधुन ताके दिए बहाई।।
कबहूँ न जन पर परै गाढ़। आठ पहर हरि रहहि ठाढ़।।
ताती बाऊ नहिं लगन देहिं। जाही कों अपन करि लेहि।।
वोन की पटतर नाहिन कोई। जापर क्रिपा प्रभु की होई।।
थर थर कांपै दानौ देव। राऊ रक सब करहि सेव।।
त्रिपिति भयो मन आयो सन्तोष। भौसागर ते पायो मोक्ष।।
राम मिले मोरि पूजीय आस। कहै मलूक दासन को दास।।

सदा नेवाजै दास कों जाने अपनो रूप।
नीवही जन गाजत रहैं आरति बनी अनूप।।

आरति एक अनूप बनाई। निसु दिन आरती सदा बधाई।।
आठ पहर होइ मंगलचारा। सदा खुशहाल रहै हरि प्यारा।।
दुश्मन दूत न आवै नेरे। झूला करै पातसाह घनेरे।।
यह आरति जौ गावै कोई। ताका आवागवन न होई।।
जाके माथे राम बिराजै। कहत मलूक सदा गन गाजै।।

महिमा ग्यान अरु प्रेम की कहि एहि भाँति बखानि।
अब कहौं ताको लछन सोई है विग्यान।।
सोवत क्रिस्न प्रताप ते अब जागि मरै बलाई।
उपजो ब्रह्मानंद सुख-दुःख सब गए विलाई।।

क्रिस्न प्रताप ते सोवत सुख में जागि मरै अब मेरी बलैया।
काया कलेस करै को अब नाहक छूटि गयो डरपायो कन्हैया।।
चोर मिले बहुरूपि मिले अब काकी करौ रखवारी रे भैया।
दास मलूक पुकारि कहै मोहि कोऊ नहीं जग दुःख देवैया।।

यह नेष्ठा विज्ञान की कही मलूक बखानि।
प्रेम भगति हित कीजिए निज सरूप धरि ध्यान।।
वरनो श्री गुरु क्रिपा ते सप्त भूमिका ग्यान।
आदि अन्त अरु मधि हैं हरि के भक्त हरि ध्यान।।
हरि की भक्ति परधान है करी जो निर्नै जानि।
कहै मलूक सों सहजहिं पावै पद निर्वान।।
तीन लोक में जानियाँ बैठा भला सलूक।
गुर गोविन्द किपा करी भया मलूक मलूक।।
ह्रिदये राम मन हरि बसै रघुपति किन्ह निबाहु।
दास मलूका यौं कहै भए चोर ते साहु।।
मलूका पापी पेटु को गत किए सब काम।
औगुन जे गुन कै लिए भूलि परे धौं राम।।
मलूका पापी चोर को सपनेहू भँजो न तोहि।
भक्ति लिखी थी और कों धोखे दीन्ही मोहि।।

हरि बिनु कौन आदर देइ।
सिंघासन तजी चले मिलन को आगे होई जन लेई।।
मह मलीन कुचील सुदामा ताके चरन पखारे।
लै चरणाव्रित सब घर छिन को गुन औगुन न विचारे।।

राउर कवहूँ तेरे होते कोई नजरि न आया।
जाति को कहिए नाँमा छिपी हठि कै दूध पियाया।।
जाति पाति नहिं कोई पूछैं मन में रखै धीर।
जोतिहि जोति समाई गई है यौं रलि मिले कबीर।।
जा पर क्रिपा करहु रघुवीर धनि है ताके भाग।
सबै तजो जरजोधन के घर खायो विदुर के साग।।

कहै मलूक ऐसा रघुराजा दीनबंधु तेरा बाना।
मोसों पतित कोई संतन पूछै तो भगतन में साना।।
सुनत पतित हरि को विरद अधम उधारनहार।
अब कोऊ नहि अटकि है मो सों उतरो पार।।

अब ही के कहे ते राम होत है स्यानो,
काम पुनि भ्रम जाल परो मीन सो लटकि है।।
चोर बटपार कुछ लंपट उचका ज्वारी,
ताहू की सह लहै जौ पै पुनि ते सटकि है।।
सरनि के गए तें अंत काल कों बेबाक,
होत छौंड़ि विष को अहंकार अमृत गटकि है।।
कहत मलूक दास पाप हदई उलंधि मो से,
सठ तोर अब कोई ना अटकि है।।

इति

श्री ज्ञान बेवहार तृतीय विश्राम वरनन-3

नमो निरंजन निरंकार निर्विकार निरुपाधि।
नरहरि निरसिंघ प्रनत सो सब नास हितहँ व्याधि।।
श्रीगुरु श्री मुख ते सुनो जगत निवारन ज्ञान।
केऊ करि भयो अज्ञान तें जगत सुख विषयान।।
अरु ए दोउ कैसें भए दीजै सोउ समुझाई।
मैं सरनागति रावरी प्रभु सरनाई राई।।

गुरु वाकि

पुरुष प्रक्रिति संजोग तें उतपति दोउ की जानि।
तेन दोउ तें जग भासो वाको कोविद बखानि।।

मूल एक दोई डार सत एक छाया सी दुतियै।
हरि दोउ के कहियत सार जम बाजी अति बुधि रवि।।
पुरुष सच्चिदानन्द तीन प्रक्रित असति चिद भाउ।
भयो दोउ को संजोग तब भयो यह दुइत प्रभाउ।।
दुइत माह दोउँ वस्तु नित पै दोउ निज-निज भाग।
लिए पुनि न्यारे से रहत जेऊ बड़वा आग।।
दोऊ मिली प्रथम अज्ञान भयो बहुरि योनिज ग्यान।
जैसें बालक होत हैं मात पिता उनमान।।
ए दोऊ भयो तब पेषनो सो जग रचो भगवान।
ज्ञान दीप जड़ मूरति सृष्टि अंतरप अज्ञान।।
जड़ मूरति सब जगत है सब है जग आधार।
डोलत इत उत फिरत नित पै गहें ज्ञान अहंकार।।
कोउ जो राउ कहावही कोउ रानी परधान।
कोउ खवास निज मानही कोउ निज दासी मान।।
कोउ यह जंत्र बजावहि कोउ करै सुन्दर गान।
कोउ करि निरति रिझावहि कोउ संगीत बखान।।

कोउ मन्त्री कहावही कोउ कहावहि दरबान।
कोउ बाज गज लिए खरे कोउ लिए खरे निशान।।
कौ ब्राह्मन कोउ छत्री कोऊ कहावत निज जाति।
कोउ सूदर कोउ वैश्य मानि कै बैठत निज निज पाँति।।
काउ दर्प मन पद धरे कोउ ज्ञान अभिमान।
कोउ विद्या को मद करे तो कोई ज्ञान को मान।।
कोउ त्रिय सुत अपने मन करते तिन हित सोच।
कोउ कहै हम सम नहीं पै सब करि निज निज पोच।।
यौ अग्यान संग जीऊ को जगत भाव होई जाई।
जैसे लागै प्रीति गति मतसर मोह लखाई।।
पैसो प्रीति गति तंही लौं जब लौं ताको संग।
संग छूटे तें होत पुनि जैसो जाको ढग।।
तेंउ जीवहि अग्यान संग छुटत ज्ञान संग पाई।
लहै तुरित निज रूप को जेंउ जल जलधि समाई।।
नित जानै बाजी मरम कैते नचैए सोई।
बिन गुरु ग्यान अग्यान को मरम न जानै कोई।।
ग्यान अज्ञान उत्पत्ति बहुरि तेन तें जग लै भास।
वरनों अब यह संछेप तें अब बरनौं विस्तृत वास।।
खेल दोउ को आहि यौं जेउँ खेलत चौगान।
मन धावत संग दोउ के विवसो गेंदु उनमान।।
सातिक कों बल ग्यान को रचि तम अज्ञान।।
कबहूँ यह बलवन्त होत कबहूँ वह बलवान।।
जब बल होई अज्ञान को चलै सो भौजल धाई।
ज्ञान पाई बल आपनो तुरिया पद समुझाई।।
जात पदार्थाभाव लौं अैंचातानी होई।
तुरिया भजैं दोउ को खेल समाप्त होई।।
अथवा जेउ दोउ देस पति अपनी सींव प्रमान।
बाँधि दुर्ग करते रहत निसु दिन जुधि विधान।।

देस उतरा एन ग्यान को दछिना एन अज्ञान।
दुर्ग दोउ की भूमिका पुनि पाप दरबान।।
गढ़ पति अरु औरों सुभट दोउ दिस बलवान।
अपने अपने राउ की जै चाहत जेउ प्रान।।
दोउ को संग्राम अब कहो ज्ञान भूमि विस्तारि।
तैसोइ यह ठौर है जानि है जानिनहार।।
दोउ दिस मधि बेनी इत ज्ञान उत अज्ञान।
नाम नाव कडहार गुरु केवट संत सुजान।।
त्रिवेनी तीनौ नदी अरु पुनि नारी तीन।
ज्ञान बैराग अरु भगति पुनि करि जो हरि पद लीन।।
जेंउ बनिया मन अगुवा पूजी हरि को ध्यान।
कहै मलूक यह लाभ बड़ भेंटो श्री भगवान।।
प्रथम भूमिका दुर्ग अज्ञान को सातौं कहौं बखानि।
जेहि मग होवै जीव कह भौ जल निधि हि प्यान।।

सप्त भूमिका अज्ञान दुर्गेय वरनन

प्रथम मूल अग्यान होई जहाँ जीव अहंकार।
दूजा जाग्रित महा है जँह तन अँस प्यार।।
तीजे जाग्रित नाम कहू वैर अरु हिंस्या देखि।
चौथो जाग्रित सपन अँस तहँ सब छुटै विवेक।।
पचए सपन जाग्रित विषै रति ग्यान होई याद।
छठए सपना नाम जहँ महा मोह को राज।।
सतए नाम सुसप्तमो ग्रह भौ जल है सोई।
कहै मलूक जहँ हरि क्रिपाल तहँ जागै सो सोई।।
सातौं दुर्ग अग्यान एते मैं कहे बखानि।
अब कहौ एन के दुर्ग पति सुनो सो दै कान।।

अज्ञान के दुर्ग पति वरनन कवित्त

प्रथम असद वासना दुतिय रछक अहंकार।
तीजें रछक दंभ अधर्म चौथें रखवार।।
पंचए रछक काम मोह छए में रहई।
सतएँ भौं जल दुर्ग सो तौ ग्रह मोह को अहई।।
ए गढ़-पति अज्ञान के सातों कहे बखानि।
अब कहौ दुर्गेय ग्यान को मारग पद निर्वान।।

ग्यान दुर्गेय वरनन कवित्त छप्पय

प्रथम ज्ञान के दुर्ग जहाँ सुभेच्छा होई।
दूजे जहाँ विचार सत असत विषया खोई।।
तीजे तन मांसा भगति लहि छूटै आसा।
चौथे सत्वापति ब्रह्म सब जगत नेवासा।।
पंचए असंसक्ति छूटै जहँ तन अहंकार।
छठए पदार्था भाउ जीव रहै जाई निनार

सतए तुरिया नाम है भाव दूजा तहँ नाँही।
कहै मलूक जहँ हरि कृपाल सो तहाँ समाही।।
सातौं दुर्गेय ज्ञान के ए मैं कहे बखानि।
जोग शास्त्र के मतें चक्र सातउ जानि।।

सप्त चक्र वरनन कवित्त छप्पय

प्रथम नाम आधार स्वाधिष्ठान है दूजा।
मनि पूरक है त्रितिय अनहात चौथो है पूजा।।
पचम नाम विशुद्ध छठए आज्ञा तैसो कहिए।
सतए है सहस्रार जाहि नारायण लहिए।।
नाम सातउ चक्र के ए मैं कहे बखानि।
अब वरनौ दुर्गेपति सुनौ सोउ दै कान।।

ग्यान दुर्गेयपति वरनन कवित्त छप्पय

सुधा वासना प्रथम दुतिय रछक विचार।
तीजे रछक धर्म सन चौथे रखवार।।
पंचए रछक ग्यान प्रेम छए में अहई।
सप्तम प्रेम असथान निरंजन निज तहँ रहई।।
ए नरपति गढ़ ज्ञान के सातौं कहे बखानि।
अब दोउक जुगुल कहौं सुनौं सोउ दै कान।।

ग्यान अग्यान जुगुल वरनन

सो सुख पति जहँ हरि क्रिपा सपन सुभेच्छा होवै।
सपने जगत विचार जाग्रित सपने तन जौवै।।
जाग्रित सत्वापत्ति असंसक्ति जाग्रित माँही।
मूल ग्यान है जहाँ पदार्था तहाँ कोई नाँही।।
सब उपर है तुरिया तहँ सो वसै निरंकार।
जब जेन्है अग्या होई जो होई तिन्है जग औतार।।

कहै मलूक आवागवन जिय को एहि विधि होई।
तातें सकल त्यागि मन रामहि राखै पोई।।
नाम जहाज बिना कोउ भौ जल अगम अपार।
तरि न सकै नारद सुक निस्चै किया विचार।।

सदा जग जलधि को तरन को नाम ही नाव है गुरु कडहार हरि जन सहाई।।
गाई हरि गुन परम प्रेम सों रैन दिन उधरत दीन जन ध्याई ध्याई।।
नाहि तेहि पार अरु वार भ्रम से भँवर मोह जल थाह कहूँ न पाई।।
त्रिगुण को वाउ आसा प्रबल वेग सो लोभ तहाँ लहरि देहू उठाई।।
काम अरु क्रोध में मत जल जंतु सेर हो सेवार छ्ल तन ढपाई।।
ग्यान अग्यान उपाई इन्हीं जाल हरि जग रचौ सकल सास्त्र सार यह अन भौ भए बिलाई।।

इति श्री ग्यान बोध चतुर्थ विश्राम

जग भास वरनन

नमो हरि सुछ्म काल रूप विघन हरन सब काल।
सकल काल मंगल करन सकल काल के काल।।
श्री गुरु जग को भास लै समुझो भले बनाई।
काल रूप भगवान को दीजै अब समुझाई।।

सदा काल जो काल। सोई रूप भगवान को।।
भुगतै जैसो काल। तैसो नाम बखानिए।।
आदि प्रमान अनु दुनक अरूप। तासु त्रिगुन त्रिस रैन सरूप।।
अनु प्रमान दरसो नहि जाई। देत संध त्रिस रैन देखाई।।
जब त्रिस रैन त्रिगुण होई सोई। तासु नाम त्रोटक कहै सब कोई।।
त्रोट सौ बीते वेध कहावै। वेधवीनि लौ नामहि पावै।।
तीनि लौन को निमिष बखान। निमिषि तीनि को छिन करि जान।।
सो छिन पांच कास्टा सोई। सो पंद्रह मिलि लघुता होई।।
लघुना पंदरह घरी सो कहिए। घरी साठि मिलि अहनिस लहिए।।
अहनिस पंद्रह पछ कहावै।। दोइ पछ मास नाम सो पावै।।
मास दोइ मिलि रितु यौं होई। तीनि रितु मिले अैन सो होई।।
अैन दोइ सों संवत नाम। सो सुर लोक अहो निस जाम।।
ते अहनि तीन सै साठि। सो सवतसर सुर विख्यात।।
द्वापर द्वै सहस सैचारी। त्रेता तीन सहस दोई चारी।।
कलि जुग एक सहस सै दोई। मिलि जुग चारि चौ जुगी होई।।
तेन एकहतरि को मनुवंतर। चौदह मिलि ब्रह्मादिन अंतर।।
मनुवंतर लै संधि जो होई। चारि सहस साठि सै दोई।।
सत संवत ब्रह्मायु कहावै। विस्न निमेष माह सो पावै।।
सुछिम सो सोई महाकल। कहै मलूक सो राम गोपाल।।

श्री गुरु एक काल है।। तुम काहो अनेक प्रकार
केउ करि एक अनेक।। भयो कहिए सोई विचारि

आदि काल हतो एक।। अक्रिय पुरुष सो सुप्त सो
सुपुनि भयो अनेक।। जब जाग्रित इच्छा भई

इच्छा होत प्रमान।। जगऊ भव जो सपन सो
पुनि ताही उनमान।। जागित काल प्रगट भयो

वैराट वरनन सरूप चौपाई

आदि काल तहँ निरंकार। हत न तहाँ त्रिगुन विस्तार।।
हता न पवन हता नहिं पानी। हता न ब्रह्म वेद बखानी।।
हती न धरती हता न आकाश। हते न रवि ससि ज्योति प्रकाश।।
एक काल जब इच्छा भई। इच्छा बहुरि त्रिगुन होई गई।।
पुनि महतत भयो अहकार। अहंकार भयो तीनि प्रकार।।
सत तें सुर मुनि इन्द्री रज तें। शब्दादिक प्रगटे सब तम तें।।
प्रथम महिं के शब्द परगास। लाहि शब्द लें भयो अकाशा।।
शब्द अकाश मिली स्पर्श भयो। स्पर्श मिले वाई निरमयो।।
वाइ मिले तें प्रगटो रूप। रूप मिले भयो तेज अनूप।।
तेज मिलें रस उत्पत्ति भई। रस मिली अपु सृष्टि निर्मइ।।
अपु मिले तब उपजो गंध। गंध मिले भै प्रीथी प्रचंड।।
सब मिली भयो विराट सरीर। तेहि ब्रह्मांड कहत हैं धीर।।
वरष सहस जल कियो नेवास। तब पाछे सब अंग प्रगास।।
सहसै सीस सहस भयो नेत्र। सहस चरन कर अतिहि विचित्र।।
मन तहँ अमल चन्द्रमा भयो। अहंकार रुद्र तहाँ ठयो।।
ब्रह्म सो भयो बुधि अधिकाई। सुर सब इन्द्री भै सो आई।।
अग्नि देवता वस्त्र प्रकाश। वाइ तुचा अरु भयो पुनि स्वास।।
प्रान अपानऊ ध्यान समान। नाम पयउ कह बखान।।
नासा दोउ असुनी कुमार। रवि की जोति यछु उजियार।।
रसना वरुन दिस सब श्रवना। अहनिस खोलब मूँदव नैना।।
अनहद नाद अनी रस बैना। काल गत सत सुन्दर गवना।।

इन्द्रा हाथ नखऊ छवि शेष। सबल आसरा सुन्दर वेष।।
मृत्यु वास किपो गुदा अस्थान। मेढ़ प्रजापति कहत बखान।।
सुरेश अकाश मेघ भै केसा। हसब दामिनी सुन्दर वेसा।।
भयो पताल चरनो तारा। ऊपर चरन रसातल धारा।।
अंगुरी है तल एडी महातल। पिंडूरी जहाँ सो भयो तलातल।।
जानू सुतल चितल भई जंघा। अतल गुहि जई इन्द्री परमंगा।।
बहरौ नाभि लोक भूर्भयो। भूर्लोक वो दसों ठयो।।
उर तहाँ भयो सुरन को लोका। सदा अनन्द नहीं तहँ सोका।।
महर लोक ग्रींव भयो जोई। सजन लोक वद छवि सोई।।
जो तप लोक माथ विस्तारा। सति लोक तहँ दसमा द्वारा।।
उदर समुद्र नदी सब नारी। बडवा अग्नि छुधा परचारी।।
खण्ड प्रलै ब्यारी सो जाको। महा प्रलै भोजन है ताको।।
इंगुला सुरसरि पिंगुला जमुना। गुप्त सुरसरी भई सुषमना।।
गिरवर सकल अस्थ अस्थाना। रोमावलि भै वृक्ष परधाना।।
सूतेऊ सुसुप्त पुरुष की नाई। रहि गै देह न उठै उठाई।।
तब हरि निज प्रकास तहँ कीन्हा। मनु घन में रवि दरसन दीन्हा।।
उठो सो जेंउ कोई सूतो जागै। भाउ अभाऊ न तेहि कछु लागै।।
जैसे जल में रवि प्रकाशा। दरसत है पै सोई अकाशा।।
तैंऊ हरि जग में जग ते न्यारा। एक सूत पोहो जग सारा।।
ऐहि हेरंनिगर्भ तम कहिए। परमात्मा दसहुँ दसि लहिए।।
दसमाँ द्वार परम अस्थान। तहँ चतुरभुज श्री भगवान।।
सदा किशोर स्याम बपु धारी। सोभा सिधु अगाधि मुरारी।।
बूडि जाई ता में मन जाको। बहुरि न निसन होवे ताको।।
नैन सरोज भरे करुणा रस। जो निरखें होई जाई सोई वसि।।
करि कटाक्ष जेहिं की दिस दैखे। बड़ो भाग अपना सो लेखें।।
अंग अंग छवि वरनी न जाई। वानी वरनत रही अरगाई।।
रुद्रादिक को मोह उपजावै। सो वरनन में कैसे आवै।।
सीश मुकुट झलकति मनि नाना। कुण्डल जुगुल उएउ जनु भाना।।

कुमकुम तिलक ललाट सोहावा। म्रिग मद बूँद अधिक छवि पावा।।
जग्यपवीत मुक्ता लर ग्रींवा। मानो शोभा की दोउ सींवा।।
हृदय चिन्ह भृगु लता विशाला। कौस्तुभ मणि सोहै वनमाला।।
वैजंती उर मधि विराजै। उपमा देत अधिक मन लाजै।।
आयुध चारि चहुँ कर भाजत। संख चक्र गदा पदम विराजत।।
बहु नग मणि मय पहुँची सोहे। निरखत का कोटि मन मोहै।।
पीत वसन कटि किंकिन राजै। मानहु हंस मानसर गाजै।।
चरण कमल मधि चिन्ह विशेषा। अंकुश कुलिस पदम धुज रेखा।।
नेपुर रुनझुन मोहनि मन मोहै। कमला सो पद सेवत सोहे।।
मधुकर सेस सनकादिक नारद। हरि गुण गान करत नित सारद।।
गुरु इन्द्रि सहित सिर नावैं। भगत हेतु हरि जेहि चढ़ि धावैं।।
अस्ट सिधि नौ निधि कर जोरें। चितवत रहत सकल दृग कोरें।।
मुक्ति चतुर विधि आज्ञाकारी। जेहि चाहैं तेहि देत मुरारी।।
बैकुण्ठ महिमा कह लगु कहिए। कहत कहत कहूँ नहिं लहिए।।
वरनो यह कछु हरि को धाम। अब विराट पुनि करौ बखान।।
मुख ब्राह्मन छत्री निजु बाहू।। उर में वैश्य पग शुद्र कहि ताहू।।
धरम सबनी को वेद प्रमाण। भयो अधर्म पीठि अस्थान।।
नख सिख आपु न दूजा कोई। दूजा भ्रम दर्पण जेंउ होई।।
जग हरि में हरि है जग माँही। कहन सुनन को बहुत विधि आहीं।।
कंचन आदि अंतहू कंचन। भूखन भ्रम मधिहूँ कंचन।।
जब लगि कंचन को नहि ग्याना। तब लगि दरसत भूषण नाना।।
कंचन ग्यान जाहि जब होई। तब जो कंचन भूषण सोई।।
समुद लहरी दोइ कही न जाई। उपजि समुद सो समुद समाई।।
अपना आपु क्रिया विस्तार। कौन सकै कहि ताको पार।।
नाम सो पतित उधार स्वाँमी। भगत वछल व्रिद अन्तरजाँमी।।
भगति हेत हरि गोकुल आए। भगति हेतु प्रभु आप बँधाए।।
भगति हेतु हरि कुंज बिहारी। भगति हेतु वशि भए ब्रिजनारी।।
भगति हेतु हरिनाकुश मारे। भगति हेतु प्रह्लाद उधारे।।

भगति हेतु जूठे फल खाए। भगति हेतु सारथी कहाए।।
भगति हेतु जुग जुग औतार। वरनत शेष न पावै पार।।
जो ब्रह्मांड पिंड है सोई। पै यह मर्म लखै नहिं कोई।।
जीउ जीउ को मन है मन को। बुद्धि बुद्धि की चित है चित को।।
रसना मतें रस वै न लखानै। अंग स्पर्श सकल सुख जानै।।
श्रवनन मधि सुनै सब बैना। निरखै रूप कटाछन नैना।।
नासा रुँध गंध जो बूझै। अंतर बाहेर जेहि सब सूझै।।
जाग्रित स्वपन सुखोपजि विलासी। तुरिया सरूप पुरुष अविनाशी।।
तीनहुँ काल एक रस रहैं। इन्द्री रस बिनु इन्द्री गहै।।
अचरज रूप कहिए तोहि कैसो। नाम फेर जैसे को तैसो।।
सबको संगी सब ते न्यारा। सब काहू को प्रान प्यारा।।
बाहेर भीतर जेंउ आकासा। रवि जेंउ दसहूँ दिसा परगासा।।
जो अदृश्य दृष्टा होई। लखै सो आपु लखावै सोई।।
सोई जगपति पालन हारा। सोई उत्पत्ति करत संघारा।।
ताहि के भौ अग्निय तेजा। रवि छिन सोई सकह नहि सेजा।।
वोइ वेग सों नहि अति बहई। समुद सदा मरजाद रहई।।
मृत्यु डरै ताके डर भारी। धरती भार सकत नहिं टारी।।
चाँद नछत्र डरत आकासा । असु पताल कियो डरि वासा।।
इन्द्रादिक सब डर में रहै। सीत घाम पर्व द्रुम सहै।।
कमला वपुरी अति भै मानै। भै करि ब्रह्म वेद बखानै।।
लछि चौरासी भै मरि जन्मै। भै ताको है सबके मन में।।
बिनु भै जग दीखै नहि कोई। निर्भय निरकार प्रभु सोई।।
आठों पहर सोइ उर ध्यान। आठौं पहर सोई मन ग्यान।।
अैसें जो कोई लौ लावै। कहत मलूक परम पद पावै।।

सब आचार को सार यह जंत्र सकल संसार।
नारायण निज आपु है जंत्र बजावनहार।।

एक सो भयो अनेक पै एहि भाँति अनेक भयो।
जैसें लिखिए एक अनेक होत बुदा दीए।।
जगत भयो तिन वासतव पै ऐहि भाँति लखाए।
जेंउ सीपी में रजत भास रजु में अहि दरसाई।।
रजु में अहि नहि तीहूँ काल रजत न सीपी माह।
तैसें सुध सरूप में जगत लेस कछु नाहि।।
जग दरसत अज्ञान दृष्टि ज्ञान दृष्टि हरि डोर।
जेउ दर्पन दरसै जगत सिला मुदाज में मोर।।
अस्थित उत्पत्ति प्रलै यौं नारायण में होई।
जैसे उर्म नाभितन्त्र उगलै निगलै सोई।।
नारायन भजि आदि ही नारायन मधि आहि।
नारायन हि हैं सदा नमो मलूका ताहि।।
श्री गुरु अंम्रित बचन सुनि भयो सिष मन चैन।
हृदय ग्रंथि गई छूटी कै बोलै गद गद बैन।।
महाराज तुव क्रिपा हो ते विगत भयो संदेह।
निज पर भै उदभै भयो जानो देह अदेह।।
यह कहि पुनि तुष्टि भयो अटको परम विचार।
श्री गुरुह तुष्टि भए सिख संदेह नेवारि।।
कहै मलूक को थाह लहै हरि गुन जलधि अगाधि।
कहो यथा मति ग्यान बोध गुरु गोबिन्द प्रसाद।।

इति श्री ग्यान बोध वैराग वरनन पंचम विश्राम सम्पूर्ण शुभमस्तु सम्वत् सत्रह सौ चौरासी (1784) असुनिसु दुतीका आरंभ कीया वार मंगलवार बदि मास असुनि दिन नौमी वार मंगल का लिखि सिधि भई।

जै मलूक।

ज्ञान परोछि

प्रथम दोहा

उपदेस्टा ईस्वर प्रभु श्री हरि परमानन्द।
व्यापकरन सब जगत के तं नमामि पद वंद।।

सुनिए प्रथ ग्यान कहि भाखौं।। सोई नाम ग्रन्थ को राखौं
तामें मोछ तन सिद्ध सार।। साधु विचारै बारंवार

वर्नाश्रम के धर्म जेते हित पहरि सन्तुष्ट।
वैराग्य आदि सहजैं भये साधन कहे चतुप्ट।।

चतुर्थ साधन

ब्रह्मादि विभौ सब जेती। और सकल लोक नमें तेती।।
काक विस्टा सम लखि करै त्याग। सो कहिए निर्मल वैराग।।
प्रभु को रूप सति विवेक कै जानै। जग परपंच नास सो मानै।।
ऐहि प्रकार की जाकें टेक। ताको नाम जो कहियत विवेक।।

षट संपति

त्याग वासनन को करै, सोई सम परवान।
इन्द्री कों निग्रह करै सो हम निश्चै जान।।

विषयन सों चित्त फेरे जो सोई उप आरति आहि।
सुनहु सील उतिम मतो कहत तत इच्छा ताहि।।
गुरु गोविंद के वचन जो तासों होइ निज प्रीति।
तातें सब संतन कहो यह सर्धा की नीति।।

चित की अस्थित रूप में समाधान परमान।
ऐ बट सपति कही है जानै सत सुजान

मोछार्थी

वधो मोह संसार में छूटौं कौन उपाई।
मोछार्थी अैसें कह सतगुरु देहु बताई।।

साधन कहे जो चारि। होई जुगुति लेहु विचारि।।
तब ग्यान प्राप्ति होई। पुनि सुख लहै सब सोई।।
विचार बिनु नहि ग्यान। चहि एन साधन आन।।
नहि गुरु बिन होई प्रकास। सब वस्तु जदपि पास।।

विचारन

को हौं में कहते संसार।। कहिए का को सिरजनाहार
ऐसी विधि कीन्हों निरधार।। याको नाम कहिए जो विचार

दोहा

न मैं भूतगन देह हौं नहिं इंद्री विस्तार।
रज को मैं साछी भै सदा याको नाम विचार।।
अज्ञान ते है जगत यह ग्यान माह सब छार।
करता ताको कल्पना याको नाम विचार।।
या को कारन प्रभु अति सुछिम तन जान।
अविनासी सब होइ रहो म्रिदु घट जेउ न हिय आन।।
अहं एक सुछि सदा ग्याता जग आधार।
साछी संत अद्वै अचल याको नाम विचार।।

आत्मदेहनिनै

निसक एक आत्म अहै देह बहुत मिलि जानि।
एक कहै जो दुहुन कों तेन ते को अग्यान।।
आत्म प्रभु या देह कों सो घट भीतर जानि।
देह आत्मा एक कहै तातें कौन अग्यान।।

देह मास मैं असुर प्रगट हैं। आत्म ज्ञानसरूप पुनि मैं।।
जेन दोउ एक कै जानी। तितें परे कौन अज्ञानी।।
आत्म सदा प्रकासक निर्मल। देह प्रकास जानिए सामल।।
जेन दोऊ सकै कै जानी। तेन ते परे कौन अग्यानी।।
नित आत्मा सति सरूप। देह असति अन्नमै रूप।।
जेन दोऊ एक कै जानी। तेन ते परे कौन अज्ञानी।।

आत्म स्वयं प्रकासी देख रावै विस्तार।
अग्नि की अैसी दीपति नहिं करै निसा उजियार।।
जो कहे मेरी देह है जानो न्यारो सोई।
जोइ घट को द्रिष्टा कबहूँ द्रिष्टा नहिं होई।।

ज्ञान वरनन

अहं ब्रह्म हम सांति है सत चिद आनन्द जान।
देह झूठ मैं हों नहीं याको नाम जो ग्यान।।

निरवेकार आकार न मेरे। अपर दोष कोई नहिं नेरे।।
मिथ्या देह आपु मति जान। याको नाम कहो है ग्यान।।
निरगुन मुझ करना कछु नाहीं। मुक्ति सरूप और सब माहीं।।
मिथ्या देह आपु मति जान। याको नाम कहो है ग्यान।।
रहत उपद्रौ और आवास। नहीं कलपना घट घट वास।।
देह अनित्य आपु मति ज्ञान। याको नाम कहो है ग्यान।।

सिष वचन दोहा

सुन्दर सोभावन्त वपु पुरुष नाम संजुगत।
त्याग कहो प्रभु ताहि को यह तो बात अजुगत।।
त्याग बतावहु देह को कहो अदिस्ट आत्मग्यान।
कहा सुख है सुनि में कहिए करि निष्यान।।

गुरु वाकि दोहा

सुनु अब आत्म ग्यान कों जुगुति वेद परवान।
परे देह के सरूप सत दुर्लभ दरसन जान।।
अहँ सत्व करि कै कहौं सो आत्म एक जान।
देह अनेक प्रकार है सो केउ होई प्रमान।।

मैं द्रिष्टा निस्चै कै जानहु। देह आदि असत कै मानहु।।
मेरी देह कहे जो कोई। सो देही कैसें कै होई।।
मैं विकार रहित सदा ही। बहुविकार देह के माँही।।
यह परतछि सत करि जान। देह कहो केंउ प्रमान।।
परे परे के वेद बतावै। ग्यान विचार सत ठहरावै।।
देह आत्मा कैसे होई। यह तो पगट लखै सब कोई।।
सर्व पुरुष कहिए करि जुगुति। ताही भाँति कही वेदोक्ति।।
करि विचार दीजै भ्रम खोई । देह आत्मा कबहुँ न होई।।
कहो पुरुष असंग सदा ही। व्रिहदारन्नि उपनिषद् मॉही।।
अचल अमल अलिप्त है सोई। सो आत्मा देह कैंउ होई।।
यही माँह किया विषप्रान। जोति सरूप पुरुष कों जान।।
जड़ और परम प्रकासक जोई। तौन देह केंउ आत्मा होई।।
कहो कर्म कांड के माँही। देह आत्मा भिन्न सदा ही।।
जो कछु कर्म कीयो पुनि होई। न्यारो होई कै भुगुतै सोई।।
देह बहुत चिन्हन मिलि जानहु। चंचल द्रिस्ट विकारी मानहु।।
अव्यापिक झूठ है सोई। देह पुरुष कहुकैसे होई।।
दोउ देह तें न्यारो जान। आत्म पुरुष ईस परमान।।
सर्व रूप सब आत्मा जान। सर्व अतीत नास नहि मान।।

पूर्वे पछ

एक आत्मा एक देह ।। है परपंच कि सति ता
न्याइ सास्त्र एह।। कहो पुरुषारथ तुव कहा

उत्तरयौ पछ

देह आत्म भेद कहो जो। अब ता को वेवहार कहो सो।।
देह आत्मा जेन न जाना। कहि वेवहार ताका भ्रम माना।।
सो अब सुनुहु जौन कछु गाऊँ। देह भेद करि झूठ देखाऊँ।।
भेद जुगुति कैसें कै होई। चेतनि एक रूप है सोई।।
चेतनि माह जीउ भासों यौं। लेजुरी माह सर्प भासी त्यौं।।
लेजुरी को जो ग्यान एक दिन। सर्प रूप मानि लीन्हों तिन्ह।।
त्यौं चेतनि सरूप की भूल। भ्रम तें भासो जग असथूल।।

कारन जग को ब्रह्म है और न कोई आहि।
यह प्रपंच सब ब्रह्म है जानहु निस्चै ताहि।।

जग औ॰ व्यापिक झूठे दोऊ। ॰ात्मसति कहै सुति सोऊ।।
एहि विधि परम तत्व जब जाना। तब दूजे को कहा ठिकाना।।
भिन्न भिन्न श्रुति किय निर्वारा। अब सुनिए ताहि परकारा।।
दूजी प्रतीत कैसे संभवै। अद्वैत आत्म निर्मल हवै।।
श्रुति करि देखि कहौ है वाके। ब्रह्म माहन अर्जन ताके।।
माया चरित ठगे है जौन। जनम मरन को प्राप्त तौन।।
प्रभु ते भयो सकल संसारा। सो सब प्रभु का रूप निहारा।।
नाम रूप सब हरि के जानहु। कर्मे तेन तें श्रुति परमानहु।।
सोने के जे गहना आही। ते सोने तें न्यारे नाँही।।
अैसें जगत भयो है जातें। सो कबहूँ न्यारों नहिं तातें।।

जीव आत्म परमात्मा सुलयो करै जो बीच।
ते मति मंद विमोह ते होहि काल बस नीच।।

ज्यों अग्यान तें दूजा होई। एक एक को देखै सोई।।
आत्म रूप लखा सब माँही। तब कोईहु जातंह नाँहि।।
सर्वभूत जेन आत्म जाना। सोक मोह आदि भ्रम माना।।

आगे आत्म ब्रह्म बतावै। ब्रिहदारन्नि उपनिषद गावै।।
सर्वरूप वाही को जानहु। और कछु हृदए मति आनहु।।

जदिप लोक प्रतछि यह वैवहारो सिध होई।
असत सबै सपना जथा छिन मह नस्वर होई।।
जाग्रित में सपनो नहीं सपन में जाग्रित नाँहि।
दोउ सुख पति में नहिं सुख पति नहि एन माँहि।।
ए तीनों झूठो सदा ही तीनौ गुण ते जान।
एन को द्रिस्टा एक नित गुन अतीत चिद मान।।
म्रित्तिका में जेंउ घट भयो रूपा सीपी माह।
तेऊ प्रभु में जीव तहै किएँ विचार पुनि नाह।।
जेउ सोनेंही गहना कहै म्रित्तिका में घट मान।
सीपी में रूपा तेंउ जीऊ ब्रह्म में मान।।

जेऊ नीलतम माह अकास। म्रिग त्रिसना में जल की आस।।
जैसे पुरुष द्वंद्व के माँही। तेंऊ चेतनि में जगत कहाँही।।
सूने घर जेंऊ भूत बतावै। और गन्धर्व गाई देख रावै।।
दुई ससि जेंऊ अकास में कहै। तैसें जग की असथित अहै।।
जेंऊ कँवल कलोल तरंग जल माँही। जल सों सो न्यारो पुनि नाँहि।।
पात्र सकल तावे मे जानहु। तेंऊ ब्रह्माण्ड आत्मा मानहु।।

घट प्रिथिमी को जेंऊ कहै सूत माह पटजान।
तेहि विधि जग कहै ब्रह्म को श्रुति औ जुगुति प्रमान।।

सब वेवहार ब्रह्म ते होई। भ्रम सेती जानै नहीं कोई।।
म्रित्तिका में जेंऊ घट आकार। तैसें प्रभु में सब संसार।।
कारज में कारन नित जान। घट में म्रित्तिका नहिं कछु आन।।
श्रुति अरु जुगुति देई परवान। सब प्रपंच ब्रह्म को जान।।
जैसें घट में हाथ चलावै। कर माँही म्रित्तिका पुनि आवै।।
तैसें जग को किया विचार। ब्रह्म ईस सब जगत पसार

ग्यानी को आत्म सो निर्मल। अग्यान को सोई सामल।।
जेंऊ लेजुरी में जानै साँपा। जानै ताही कों नहि भाँपा।।
गगरी जेंऊ म्रित्तिका में जानहुँ। तैसें देह ब्रह्म में मानहुँ।।
आत्म अनात्म में भेद सुनाऊँ। सों ग्यानी मुगुध नहिं गाऊँ।।

जेंऊ लंजुरी में साँप है रूपा सीपी महि।
तेंऊ मूढ़न निर्नय कियो देह आत्मा आह।।
जेंऊ ठूठेहि मानुश कहै म्रिग त्रिसना जल जान।
तेंऊ मूढ़न निरनै कियो देह आत्मा मान।।
काठ माँह जेंऊ घर कहै लोहें में तरवार।
तैसें देह जो आत्मा मूढ़न कियो विचार।।

जेंऊ निरमल जल माह।। उल्टे द्रुम दीसै खरे
तेनहि ग्यान कछु नाह।। कहै देह को आत्मा

नाऊ माह जेंऊ चढ़ि चलै दीसै चलत किनार।
तेंऊ देहें आत्मा कहै मूढ़न किया विचार।।

नैनन माह दोष जेंऊ होई। कहै श्वेत को पीरो सोई।।
तेंऊ अग्यान जोग यह जानी। निस्चै देह आत्मा मानी।।
जेंऊ लुवारि करै सिसु कोई। चक्र समान देखियै सोई।।
तेंऊ अग्यान जोग यह जानी। निस्चै देह आत्मा मानी।।
काँच भूमि में जल जिमि देखै। पुनि जल माह काँच को पेखै।।
तेंऊ अग्यान जोग यह जानी। निस्चै देह आत्मा मानी।।
जैसें अग्नि माह मनि मानी। मनि में बहुरि अग्नि उनमानी।।
तेंऊ अज्ञान जोग यह जानी। निस्चै देह आत्मा मानी।।
जैसे भ्रम दिसा को हाई। पूरब कों पछिम कहै सोई।।
तेंऊ अग्यान जोग यह जानी। निस्चै देह आत्मा मानी।।
बादर में धावन की रीती। सो ससि माह करे परतीती।।

तेंऊ अग्यान जोग यह जानी। निस्चै देह आत्मा मानी।।
जेंऊ ससि को प्रतिबिंबु परे जल। डोलत जल लागत सो चंचल।।
तेंऊ अग्यान जोग यह जानी। निस्चै देह आत्मा मानी।।

एहि विधि बिनु आत्म लखे भयो देह अध्यास।
ता आत्मा के ग्यान तें भयो ब्रह्म परगास।।

जब सब आत्म रूप विचारै। थावर जगम सब संसारै।।
सब भावन को कीयो अभावै। देह आत्मा कहा कहावै।।
जबहि निरंतर रूप विचारै। काल वितीत करै संसारै।।
परालब्ध सो जो कछु आवै। सो भोगै चित्त नहीं डोलावै।।
आत्म ग्यान प्रगट जब भयो। परालबधि तब नाँही भयो।।
एहि विधि सास्त्र में लहियतु है। ताको निरंकार कहियतु है।।
तत ग्यान ऊदै जब होई। परालब्ध तब नहिं कोई।।
सर्व जनम को किया अभावै। परालब्ध तब कहा कहावै।।
देह असन की झूठी जानहुँ। ताहि विधि याहू को मानहुँ।।
जो कछु झूठ जन्म कह ताको। जन्म नहीं कहौं अस्थित काकौ।।

छंद

यह विस्वास प्रभु में जान। जेऊ कुंभ म्रिदु परमान।।
वेद न कहो निरवान। कहो नेति नेति पुकार।।
अग्यान को लयो नास। कह विस्व को परगास।।
जेंऊ लेजुरी की भूल। लियो मानि सर्प अस्थूल।।
तेंऊ ब्रह्म को अग्यान। मूढ़न लियो जग मान।।

जब पहिचानी लेजुरी भवो सर्प को नास।
जानो अपने रूप को कहा जगत आभास।।

जब सरीर झूठी कै जाना। परालबधि को कहा ठेकाना।।
अग्यानिन को सोच मिटावै। परालबधि कहि वेद बतावै।।
पर ते परे ब्रह्म जेन जाना। कर्म छीन तेन के भै नाना।।
वहुत भाँति करि कियो निषेध। गावैं संत उपनिषद् वेद।।
मूढ़ भेद बरबस ठहरावै। माने ते दोई अनरथ आवै।।
वेदान्त मत की होवै हानि। प्रापति होई ताहि अग्यान।।

पन्द्रह अग जोग के ते उलटे कहि देत।
पाछे कहौं सरूप जो ताकी प्राप्त हेत।।
पंद्रह अंग जोग कहें है करन नित आभास।
अभ्यास बिना पावै नहीं सत चित ब्रह्म विलास।।
ताते ब्रह्म अध्यास तें ब्रह्म भाऊ होई जाई।
जिग्यासी सुख को लहै संसै सोक विहाई।।

यम और नेम त्याग को जानहु। मौन देस काल पुनि मानहु।।
आसन बंद मूल जो आही। देह समाद्रिग अस्थित काही।।
संजम प्रान और प्रतिहार। औ धारन को करै विचार।।
आत्म ध्यान सिधिहि जान। सुनिए भिन्न भिन्न विषयान।।
सर्व ब्रह्म रूप कै जानै। और इन्द्रिन को संजम ठानै।।
यह जम कहो मानु विस्वास। बार बार करहु अभ्यास।।
ब्रह्म रूप में मिलै अभंग। जग प्रपंच को त्यागै संग।।
अैसो नेम साधु जन कहै। परमानन्द रूप को लहै।।
त्याग प्रपंच सकल को कीजै। सत चिद सरूप विवेक करीजै।।
त्याग महातम भाषौ है जो। तुरित मोछ को दातो है सो।।
वचन ते कछु कहो न जाई। मन की तहाँ न प्राप्ति भाई।।
या मन ही ग्यानी सब जानै। बुध जन हृदय में यह आनै।।
बचनन तेजो कहो न जाई। ताकों कोई कहा कहाई।।
जो कोई या जगहि बतावै। सोऊ कहवे में नहिं आवै।।
सहज सान्ति की बातै जौन। ईह इहै ग्यानिन को मौन।।

वचन मेरे न अग्यानिन लहो। या विधि आतम ग्यानिन कहो।।
आदि अन्त मधि नाँही जा में। सो चेतनि व्यापि रहो ता में।।
अैसे देस रहै जो जाई। ताको काल न कबहूँ खाई।।
जाके एक निमिखि के माँही। ब्रह्मा आदि विलै होई जाँही।।
सुख संजुगत ब्रह्म जानै जो। दुख नासन आसन कहिए सो।।

दुतिय आसन वरनन

सर्व भूतन की आदि जौन है। जग को अधिष्ठान तौन है।।
जो अैसे सरूप में रहना। सीध आसन ताही सों कहना।।
सब को मूल अहै जो कोई। ताँही मे चित्त बाँधै सोई।।
अैसे मूल बंद करिए नित। ग्यानिन कहो जोग धरिए चित।।
सम जो ब्रह्म ताहि मे रहिए। यह अगन की समिता कहिए।।
यह समिता ज्ञान नहिं कहै। सूखे द्रुम की नाँई रहै।।
ग्यान द्रिस्टि करि अैसे जानै। सब संसार ब्रह्म में मानै।।
यह औलोकन उत्तिम करिए। नासा अग्र दिस नहि धरिए।।
द्रिस्टा दरसन द्रिस्य बतावै। जहाँ लीन तीनो होई जावै।।
ताही भाँति द्रिस को तूँ धरि। नासा द्रिस्ट औलोकनि जिनि करी।।
चित्त दै आदि पदारथ जेते। ब्रह्म भाव करि देखै तेते।।
सकली विरत्ति निरोध करै जो। प्राणायाम कहावत है सो।।
त्याग प्रपचन को जो करई। यह रेचक चित्त माही धरई।।
अहं ब्रह्म अैसी विर्त्ति लहई। ताको पूरक वाई जो कहई।।
यह सविर्त्ति जबै थिर होई। सजम प्रान कुंभ तब होई।।
प्राणायाम संत यह धरै। अग नास प्रीड़ा नहिं करैं।।
मन को सुध करै भ्रम मानै। सगरी विषै आत्मा मानै।।
त्याग अहार कहत है याको। मोछार्थी करत हैं ताको।।

जित जित को मन जाई।। तित तित दरसन ब्रह्म को
यह धारन चित्त लाई।। सब सो ऊँचा परम पद

अहं ब्रह्म सद विर्त्ति यह औलंबन नाहिं।
ध्यान सब्द दया कों कहै वह अनन्द ता माहिं।।

निरविकार चित्त जान। ब्रह्माकार समेति जान।।
ध्यान समाधि प्रमानो। विर्त्तिन को विसरावनो।।

जब लग आनन्द न लहै करै नित अभ्यास।
स्वयं आत्मा होई रहै छिनौ सरूप में वास।।

तां उपर साधन न त्याजै। होई अधीस सब उपर राजै।।
ता सरूप कों पावै सोई। मन जब क्रम विषै किन होई।।
जब समाधि माही चित्त लावै। वरियाई विघन तहँ आवै।।
एकाग्रता विसरै सोई। आलस भोग लालसा होई।।
भूल तमोगुन, निन्दा आवै। तेज सून्नता स्वेद ढरावै।।
ऐसी विघनन की अधिकाई। तजै ब्रह्म चित्त सनै सनाई।।
सति विर्त्ति तन कों सब सति। सुन्न विर्त्ति जो तिन्है अनित।।
ब्रह्म वेता को पूरन होई। नित अभ्यास करै पुनि सोई।।
ब्रह्म विर्त्ति पूरन है जोई। पुनि ताकों त्यागै जौं कोई।।
ताको जीवन व्रिथा जो होई। पशु समान जानिए सोई।।
जो या विर्त्ति हि जानि बढ़ावै। पुरुष धनि तिहुपुर जस पावै।।
अैसी विर्त्ति बढ़ावै कोई। औ नीकी प्रकार दृढ़ होई।।
ब्रह्म रूप तेहि प्राप्त होई। बात कहे नहिं पावै कोई।।

ब्रह्म वेत्ता में चतुर जे और विर्त्तिन ते हीन।
अग्यान आवागवन माह परे ते दीन।।

ब्रह्मादि सुख मूल।। सनकादि सों सुख अहै
निमिषि आदि नहिं भूल।। ग्यान व्रिर्त्ति माँही लहै

कारन में कारज नहीं, कारन कार्ज माह।
अस्थित घट में म्रित्तिका म्रित्तिका में घट नाह।।

जब अभाऊ कारज कों भयो। कारन तत सहत मिटि गयो।।
जो है पुत्र पिता तौ कहिए। पुत्र नहीं तो पितु कह लहिए।।
यों उपरात सुध जो रहा। सो वचन ते जाई न कहा।।
म्रिदु घट को द्रिस्टान्त बतायो। सो पुनि बारम्बार सुनायो।।
एहि विधि ग्यान विर्त्ति तेहि होई। निर्मल सुध सुध जो कोई।।
कारज कारन भिनै जानै। पुनि कारन कारज में मानै।।
कारन को कारज में जानो। बहुरि त्याग कारन कारज को ठानो।।
कारन बहु कौन सो कहैं। जो कछु रहा सोई प्रभ अहैं।।

ब्रह्म भाऊ करि तुरत निस्चै कै मन माहि।
ब्रह्म रूप होई जाई सो कीट भ्रिंगी की न्याई।।

द्रिस्य अद्रिस्य जहाँ लगु कहिए। चेतनि रूप सकुल सो लहिए।।
सावधान होई अैसें जानै। ब्रह्म रूप आपु को मानै।।
द्रिस्य अद्रिस्य ब्रह्म बन जानै। और कछु ह्रिदै नहिं आनै।।
ग्यान नित ब्रह्म सुख लहै। चेतनि रस में पूरन रहै।।
या विधि एन अंग में रहिए। राज जोग याहि को कहिए।।
जब लगि ह्रदै सुध नहिं होई। कर्म जोग पुनि साधै सोई।।
जाका मन परपकु है ग्यान जोग के माह।
सो दाता है सिध को या में भ्रम कछु नाह।।
गुरु देवन के भगत जे सुलभ ताहि को होई।
कहै मलूक याको लहै संसै रहे न कोई।।

इति श्री ग्यान परोछि संपूर्ण सुभमसु

सुख सागर

नाम मलूक सहाय लिखन

आदि परम गुरु सति सरूप। सेवा भगति दीप नहिं धूप।।
विधि निषेध को नाँही मान। अपना आपुहि करै बखान।।

निरगुन गुन तहँ तीन।। भाऊ परम गुर गुन कहै
महा विस्व जहँ लीन।। महा ब्रह्म अरु महा सिवे

कारन परम कहे गुर भले। परम तत परम गुन मिले।।
परम तत निषेध न कीजै। कारन परम गहे विधि लीजै।।
परम अस्टांग गुन भेद बने जेंऊ। अनादि भेद वेदान्त कहे तेऊ।।
परम तत परम गुन मेल। परम गुरु अपरंपर खेल।।
परम तत के नाम कहे गुर। कारन परम जानि राखे उर।।
अपरंपर कछु जानि न जाई। गति अविगति कहा समाई।।
धीर विग्यान अंड जहँ धरनि। व्यापिक निरंजनि बेहद ढरनि।।
समीप जोति निर्वानि रहै। अधर अगह अनहद तह बहै।।

दोहा

अखंड मंडल जंह घोर अछर की माडि परम गुर पूरि।
परम अनुग्रह पाए परम हंस बड़ि दूरि।।
अनुग्रह तें कछु कहै अलख लखै नहि कोई।
परम ततु सम वाहिरो तातें अविगति होई।।
निरंतर होई जो रमै अविगति व्यापै जाहि।
परम हंस गति सों मिलै परम पदार्थ ताहि।।
परम अनुग्रह परम गति परम हंस को भाऊ।
अपरंपर को अपरै को कहि सकै प्रभाऊ।।

परम आस्टांग गुन भेद सुनाए। परम हंस नाम कहि गाए।।
सति पुरुष सति गुरु सति नाम। सति भाऊ सति गति सति धाम।।
कहै ते सति परवान। सति साखि सति पद निर्वान।।

कवित्त

कर्त अंडान रहे बेहद निर्वान नाम अनहद माह मौंडै हित।
विज्ञान निरंजन प्रबल जोति गह अगह अछर थित।।
धीर व्यापिक सदा समीप अधर घोर असथित।
एहि तत रमिता राम अजोनी सिंभु नाहिं मित।।
एहि विधि सतगुरु की सरनि सुमिरै सति सरूप निजु।
परम हंस मिलि सोहैं दास मलूक अनूप भजु।।

बड़ा साहिब बड़ी बड़ाई। नाम धरे में कहा समाई।।
महल असूझ अगोचर थान। वेद सुनि कहि करै बखान।।
नासित होई तो कहिए सुंनि। अस्ति न व्यापै होत असुंनि।।
सुंनि असुंनि विषयादि खेल। अचरज प्रवेस अचानक मेल।।
डार पात फल नाँहि फूल। उत्तिम सुछिम नहि असथूल।।
प्रभ का लोक अलोक अतौल। कछु न रहै वह सदा अडोल।।
दिस विदिस कछु नाँहि दीसै। सब्द सरूपी विस्वा बीसै।।
बेपरवान अमित दरबार। दुसर होई करै विचार।।
दुसर होई तो दुसर रहै। शब्द सरूपी एकै कहै।।
परम हंस तहँ सोहँ सोम। मैं तैं तैं मैं दुसर कौम।।
हरि अनादि क्या वरनै कोई। कहे मलूक जोई है सोई।।
वो ही दरबार वो ही अस्थान। वो ही पातसाह वो ही परधान।।
उनमान ध्यान मत नहिं इन्द्रजित। बेमरजाद तहँ नहिं परखित।।
तेहि घर नाँहि दूजा वासी। तेहि घर लगि शंकर अविनासी।।
तत गुन नाँहि वरन विभाग। सनकादिक तेहि घर वैराग।।
ग्यान नहीं कछु नहीं विवेक। तेहि पद हरि प्रभु आसन सेष।।

भूमि तेज वाई नहिं पानी। तेहि लगि ब्रह्मादिक रजधानी।।
जेहि तें भरै विस्न भंडार। प्राप्ति हानि नहिं होई पुकार।।
जा घर चान्द सूर नहिं गमै। तेहि लगि नारद त्रिभुवन नमै।।
जप तप संजम निर्ति न सुरति। सिध वचन तातें असफूर्ति।।
तीन पाँच नौ पंद्रह नाँहि । कुछ नाहिं सब कुछ तेहि माँहि।।
जेहि विस्वास सिध अरु साधिक। तेहि विस्वास काल नहिं बाधिक।।
जेहि सनेह नास्ति सब आस्ति। तेहि स्नेह आस्ति नहि नास्ति।।
आदि मधि तह नहिं अंत। आपु आपु बिहंसे भगवन्त।।
खोजै आपु तो आपु नसाई। स्वय ब्रह्म सब भ्रम बिलाई।।

हरि निर्गुण केउ बर्निए एक अनेक प्रकार।
साई सब कछु सब कुछ सोई रहत सदा संसार।।
घट धरि दुज भर्म है आपु वरे जु गहु नाम।
लै लागी पुनी विलेगै परहंस मरनाम।।
चौबिस दस सिध साधिक रिषि मुनि जन अरु साधु।
पर कारन आपु परषो आपे आपु अगाधु।।
पद निर्वानहि को गहै को कह सकै विशेष।
रमित रूप नहि लसि परै ताते नाम अलेख।।
ठाकुर जन दोई अछर यह सोभा संसार।
कहै मलूक सति प्रभ भेद अभेद अपार।।
जनम मरन आवागमन पाप पुनि सदेह।
जन मलूक के धनि प्रभु भ्रम काटो कार नेह।।
स्वेताबर धरे विस्नु सोम वरन भुज चारि।
वदन प्रसंनि जाहि ध्याते सर्व निघन निवारि।।

नाम कवित्त छप्पय

परं ब्रह्म परमार्थ परागतिः परोदयः।
परातपरं निर्गुणो पदो व्याक्रात अवयवः।।

परं जोति परं शिवः परम धाम परो ध्येयः।
पर तत्त्वं परं पदं परं ज्ञान परं श्रेयः।।
तुरिय सनातन अच्युतः अनइशो अति इन्द्रियः।
अपरं व्योम निर विग्रहः परमेसरः निराश्रयः।।
पुरुष लीला प्रथम पुरुष विस्तार सुनीजै।
हृदयै राखी निसु देव सगुनीजै।।

सुन्नि असुन्नि हतो निरवर्त। अपनी आपु करि परवर्त।।
सुन्नि असुन्नि मथन विधि कीन्हा। परम पुरुष परमारथ चीन्हा।।
जेहि संजोग पुरुष उपचार। सो सभिक कै सुनहू विचार।।
अपना आपु कीया परगास। विधि निषेध तह दोऊ निरास।।
पुरुष प्रकृति संजोग एक वपु। जैसे रंग तरंग और अपु।।
सुन्नि सरूपी माया कहिए। रूप असुन्नि निरंजन गहिए।।
अंस निरंजन मन परगासा। तेंऊ माया ते मनसा आसा।।
परी सहज की गाँठि अनादी। तेहि संजोग बिंदु अरु नाद।।
नाद विंदु मिलि भई सरीरा। ता में परम हंस हरि हीरा।।

सोरठा

नारद सुक मुनि व्यास।। हरि सरूप जेहि विधि कहों
कथि कथि भए उदास ।। सुनि सुनि वरनत संत जन

पुरुष विस्तार विराट लीला

पुरुष उनमान कहा कै धरै। अपना चरित आपुहिं करै।।
आदि मधि तब नाहिं अंत। अक्षर एक वेद के अंत।।
कोई न लखै न छपै छपाये। सदा प्रकास वषानत आए।।
सति असति करि सति समाने। जेउ जानै हरिहू तेउ जानै।।
निरखि आपु तन लई उसास। अखड मंडल कीन्हों प्रगास।।
एक अस्थूल नाम वैराट। कारन बीज रूप को ठाट।।
बहुरि सुनहुँ ताको वेवहार। पाँच तत को मूल सचार।।
कीन्हा आप आपु में रूप। तत भाग ब्रह्माण्ड गुन वरन अनूप।।
प्रथम आदि कूर्म जगदीस। खंड ब्रह्माण्ड अंड के ईश।।

प्रान सरुसी जित कित आप। घट घट प्रान पुरुष की थाप।।
प्रीथिवी बीज सो महा बना है। महा मछ गंभीर अया है।।
केहि मति हरि का रूप बखानै। परम तेज अनन्त भवानै।।
हरि असतु कहा को जानै। को माया विस्तार हि जानै।।
को वरन काके उनमान। कोटि अंड एक रोम समान।।

जेंऊ भया तेंऊही किया करन हार समरथ।
कोई वाकि मन तें परें कहो न जाई अकथ।।
ब्रह्मा विष्णु शंकर नहीं तत गुन नहीं विभाग।
सनक सनन्दन तप करै पार ब्रह्म की आस।।
वरनन महा वैराट को को करि सकै बखान।
कहि सुनि काज सँवारिए हरि मलूक निर्वाण।।

कवित्त वैराटक

सूर्य कोटि प्रकासो जम कोटि दुरासद को कहि जानै।
ब्रह्म कोटि जगत श्रिस्टा हरि वादु कोटि महा बलसानै।।
कोटि इन्द्र जगदानंदी प्रभु कोटि कुबेर लछिमीवानै।
कोटिक सक्र विलासवान कंदर्प कोटि लवन्य बखानै।।
दुर्गे कोटि अरिमर्द कहिए शंभू कोटि महेस्वर एको।
तीर्थ कोटि समाझ यह समुद्र कोटि गंभीर विशेषो।।
कोटि अस्वमेध पाप घनो हरि जग्य कोटि समर्चिनः देखो।
सोधा कोटि स्वारथ हेतुः कामधुक कोटि कामदः गनैको।।

कोटि ब्रह्मांड विग्रहः हेमवंत कोटि निष्कंप।
ब्रह्म विद्या कोटि रूपः हरि निरंकार निस्संक।।

प्रथम पुरुष अस्थूलहि गायो। पाँच ततु का मूल सुनायो।।
गुन अनादि जे कहे बखानी। सोई प्रकास लिजियहु मानी।।
भूत भविष्य वर्तमान नाम। कहियत तीन गुनन के धाम।।

तत गुन मेल पुरुष घट ठाट। दुतिय नाम कहो वैराट।।
सुन्नि सरुप बहुत जुग गये। पाँच तत्व गुन प्रगट भये।।
जैसे कृषी करै किसान। वह जानै वाको उनमान।।
बावै बीज सारे फल लागै। तैंठ ही पंच ततु गुन जागै।।
कूरम खंड अंड वाराह। प्रकृति पुरुष को प्रानउ माह।।
मीन जलादिक सगरी सृस्टि। तेज अनन्त सबनिके इस्ट।।
ब्रह्मांड अंड खंड कछु नाँहि। जल सरूपी जित कित हरि आही।।

नारायन लीला

त्रितिय सुनहुँ उपचार नरायन।। जा सुमिरे जन होत परायन
पाप नेवारन दस्तर तारन।। अधम उधारन जन हितकारन

तीन लोक चौदह भुवन चारौ जुग आकार।
चारेषानि चौरासी तीनौ काल विचार।।
हरि विचार को वरनैं मन की लखन जाहि।
सर्व तत हरि आपु ही सैन रची जल माहि।।

शेष नाग की सेज बनाई। सहज सरूपी निन्द्रा आई।।
जौ पूँछहु ता घट के तत। को वरनै काके यह मत।।
सकल जला में नहि कछु साखि। वेद बखानै श्रीमुख वाकि।।
लखि लखि साधु कहत परमारथ। सुने गुने जीवन को स्वारथ।।
कलपंतर की कथा सुनावहु। या मन को संदेह मिटावहु।।
हरि चरित्र को वरनै कैसा। कहै मलूक जैसे का तैसा।।

तत नाम कवित्त

मह तत धरा अनील जल नल बीज रूप सो तेज बल।
जड़वत सुभाव अकास हद पंचादि वाई प्राण कल।।
गुन तीनि भूत भवषि गुप्त वर्तमान अभेद छल।
निज ब्रह्म सीव सजीव सक्ति आदि ब्रह्म संजोग भल।।

मन सशि अखंड प्रचंड आत्म वास सेष सुगुप्त है।
तह सूत्र श्रवन सुवाकि ले ताहि लगि सब लुप्त है।।
त्रिगुनी सृष्टि जो बीज निर्गुण एक रूप सो मुक्ति है।
तेहि रूप तें आकार ब्रह्म दरस कारन क्षुभित है।।

नारायण नाम कवित्त छप्पय

सर्वज्ञः सर्वतो मुखः श्री दो सवादिः सर्वे स्वरेस्वरं।
सर्व शक्ति सर्वात्म सर्व दुखहा शंभु प्राणीस्वरं।।
सर्वोवशः सर्वसार मर्वतो भद्र सवार्थ सवः।
सर्व भावनः सर्वरूप सवधिक्षः पूर्णः सर्वज्ञः।।
मूल प्रकृत सर्व कारण कारणं खंड वीश को नित्योदितः ।
परसक्तिः सुखैक भूः सर्वकाम्य ब्रह्मापितः।।
नित्यानंद आत्म भूः विश्व बिजं श्रीपति सर्व गतिः।
अनंत लीलः महा हविः नित्य जुक्ति पिता महो योग पतिः।।
महा गुहिय सर्वा मोधो उद्यमोब्रह्म श्रीनिधि मायापति।
क्षीराधी मंदिर निर्ममो महत ब्रह्मा कैवल्प पति।।
जगद एक स्फुंद बीजा नारायण सर्व लोक जेठरः जरः।।

पद्मनाभ माया महो ब्रह्मन्यादिनि योजिकः।।
जगस्रिस्टा निजनामः सर्व भूत वसंकरः।।
सेष साई विश्राम नित्य श्री श्री निकेतनः।।

ब्रह्मा औतार वरनन चौपाई

अछर अतर्क अपरमपार। को वरनै हरि को विस्तार।।
चौथे ब्रह्मा को औतार। खानी वानी सब उपचार।।
सदा निरवर्त सबतें संजोग। करनहार प्रभु करने जोग।।
रूप अनन्त धरैं पल माँही। हरि की लीला लखी न जाँही।।
आदि ब्रह्म नारायण स्वामी। छीर समुद्र सेष विश्रामी।।
ताके नाम कँवल ते ब्रह्मा। भूत काल वरनाश्रम धर्मा।।

सोई आदि ब्रह्म विचारी। आपा आपु तें लीला ठई।।
कारन करन के कारने। रापौ सकल करि जल भई।।
तेहि मधि आसन सेष। अविगति सहज की निंद्रा लई।।
तेहि नाभि नाल कॅवल। उपानो कहन को केही मति दई।।

नर ब्रह्म तहँ उपजे सकल विस्व के धाम।
तातें साधु बखानत नर नारायन नाम।।

तहँ उपनि ब्रह्मा विसम आयो द्रिस्टि कछू न सूझई।
यह हों कहा को कहा भयो सील मनन अलुझई।।
अहँ सो कछु लखि परै नहि बहु विचारन बूझई।
कमल ही भयो कमल ही यो प्रभु प्रकट कैसें गुझई।।
बहुत काल भरमत गये खोजत ब्रह्म भुलान।
आदि ब्रह्म हरि जागे सूत्र सूत्र परवान।।

आदि ब्रह्म दरबार।। सैंक भई चतुराननहि
कोटिक तेज अपार।। तेज न तूलहिं ताहि के
महा ब्रह्म मरजाद।। रजधानी कछु पार नहि
पेखतं ही बिसमाद।। प्रणै करत कर जोरि कै

संख चक्र गद पदुम धुजा राजित पद दछिन।
उर्ध रेख स्वस्तक कलसा अंकुस निर्जल छन।।
नंद सुनंद सुभद्र भद्र जै विजै गति ह्रिय।
सुरसति गरुड गणेश निधि नौ सिधि रति श्रिय।।
नवल छन तेह पारषिद आसन सेष प्रजंक तह।
सदा नेवास मलूक को जहँ नारायन ऐहि संग मह।।

गुप्त तत जे आदि के वरने ब्रह्म हुलास।
आज्ञाकारी तेहि विधि भयो ब्रह्म परगास

ओंकार सब्दहि दियो श्रीस्टि करन की नीति।
कहो जाई करू जगत कों सब्द महा सब रीति।।
लीला कला सबै विधि ब्रह्मा पाइ जानि।
नाभि कमलागर्भासन असथिति कीन्हीं आनि।।
चिमितिकार कछु औरी जल मैं मारुत पौन।
मंडल अदित सोम को ससि औकासे गवन।।
घट विस्वास समानो पायो अपनी आदि।
अग्या भई सो कीजिए और सोच सब बादि।।

ब्रह्म नाम कवित्त छप्पय

तीर्थ पादः आदि देव अनंत महात्म नित्य त्रिपित गति।
निसंको नर्कातुकः सूर्ज सोमे क्षणो धर्म सेत मति।।
दीनाथै कि सरणं जोगेस्वर पुनि श्रवन कीर्तन।
सदो दीर्णो वर्ध्व क्षय वीर्जतः विस्व मयो मुरोत्मः।।
महा जोगेस्वर उतसवः कृपाल सज्जनाश्रयः नित।
अद्भुत भोगवान निःसगो ऊर्ध धाम गह जगत हित।।
विस्वकसेन विस्व वस्यो सर्वस्य पारगः जगत सेत महि।
जगत कृपा विस्वैक विस्वना पहा क्षमो नित्यं केशौ लहि।।
विस्व भोग्ता शंभू ब्रह्मा सक ब्रह्मार्चित पादः गहि।
कालनेम हाल सद्भाव अधो ज्यों नाम जज्ञ फल दोपहि।।

सर्व सज्जनानं न्यपालकः विप्र कुल देव जगनमयः।
विस्व देताः अखिलोकेशो प्रजापतिः जगत जयः।।

बैठे नाभि कमल आसन करि। पितु आग्या सो माँथे धरि।।
सूरति सरूप अग्याकारी। श्रिस्टकर की सुरति विचारि।।
जैसें नवल धर्म नहि जानै। तेंऊ ब्रह्मा मन में विलखानै।।
तप आसन करि बैंठे ब्रह्मा। कारन श्रिस्टि करन के कर्मा।।
सुरति समानी आदि ब्रह्मा की। लीला अपने जन्म कर्म की।।

सब्द आदि महाब्रह्म जो हीना मोई सुमिरि हृदए भयो लीना।।
मन मनसा में सुरति समाना। आदि ब्रह्म को शब्द परवाना।।
लगी समाधि आदि विस्वसा। मानसिक भये पुत्र प्रगासा।।

चतुर्मूरति हरि आपुही सनकादिक औतार।
शब्द सरूपी सनातन संनन्दन संत कुमार।।
धर्म ततु परमात्मा कीन्हों ब्रह्म विचार।
महानेष्ठक सिशु समान अविनास मह व्रतधार।।
तन अविकारी पाँच बरस के सदा एक समभाऊ।
परमहंस केंऊ ठहरै परम तत लखि नाऊ।।
परम तत को निर्नो ब्रह्मचर्य विचार।
पर कहँ उर्ध गवन किय अविनासी औतार।।
एहि विधि श्रिस्ट मानसिक भए रिषि साथ अनेक।
आत्म रूप कला सब को करि सकै विवेक।।
कहै मलूक परमातमा दूजा और न कोई।
नित्य निमित्य कला करि अंस औतारी सोई।।

हरि धर्म नंदनो सर्व सत्यः सनकादिक ब्रह्म जेस्ठः।
विराट भक्त सनंदन समस्त भैभिर्नां मा सर्वश्रेस्ठः।।
सनातन तपोनिधिः सिशुसुराट सदा भद्रः सदा नवः।
सदा सांतः सदाप्रिय· सत्यत्यः सर्व सार सदा शिवः।।
पुराण अखनिष्ठः वरप्रदः धर्म जीवनः सर्वजः।
महापुरुष सहश्रनामा कर्तावक्ता परवर्तकः।।
सर्व देव सिरोमनी सुगतिप्रदः हृद सदा तुष्टः।
मुनि प्राष्य पराधीनः पराधोनः ब्रह्म शंभू सुपुस्टः।।
साध्यः कल्याण गुण भाजनं श्री भगवान कहु।
प्रभु सदा पूतः चतुरमर्ति सांति पारायनः गहु।।
वरनाश्रमादि धर्मानां संत कुमार बैकुंठो हरी।
भगवद भक्तवर्धनः कहत मलूक श्रुति मति संचरी।।

नारद औतार

हरि नारद की लीला को करि सकै बखान।
मन वच कर्म अगोचर श्रीमुख वाकि प्रवान।।

मानसिक जो श्रीम्टिी सवारी। मावतीक परलोक सिधारी।।
लीन भए आत्मा बनाई। सोचि रहे सो कहा समाई।।
तब ब्रह्मा मन माया व्यापी। आदि ब्रह्म जो घट में थापी।।
सक्ति जानी आपा धरि लीन्हां। प्रकृत रजोगुन ते भै लीना।।

यह सरूप ब्रह्मा किया आदि ब्रह्म को ध्यान।
अग्या कारी तेही विधि भए पुत्र परवान।।

तेन के नाम कहा लौं वरनो। साधु पारव्रित एकै निरनो।।
नन्द सुनन्द सुभद्र भद्र जैं। कहत नाम गनेश गरुड़ विजैं।।
कुमदी छन बल कुमद प्रचंड। भए पारखिद महा बलवंड।।
भए पारखित माया अस। दैत आदि जेन के सब वंम।।
एन्हहि आदि दै राजा और। महाबली जेहि बल नहि ठौर।।
कश्यप आदित्य रिषै अनेक। समरथ संजम ज्ञान विवेक।।
उसक्त अधरन ही ठहराई।। नामधरा ईत ही फिरि जाई।।
तब ब्रह्मा जिय भयो अनुग्रह। अनभै पायो छूटो विग्रह।।
सबही में मन ब्रह्म ममाना। निर्गुन गुन को आगम जाना।।

ब्रह्म लखो घट माह।। चित वित सब ता मे दीयो
नारद भए तहाह ।। अविनासी मन रूप धरि
जेहि पथ सनक सनंद।। तेहि पथ नारद चलि भए
मन मलूक आनन्द।। पावन करत जगत फिरत

नाम कवित्त

भगत वछल भागवत भक्त पति गंधर्वादि लोक त्रैगवनं।।
अविनासी हरि रुद्रदेव रिषि आदि हरिष्ट अखिल घट रवनं।।
ब्रह्मात्मज सरूप नारद आदि भगत संत सनेही।।
पंच रात्रि करन भक्ति गति भक्ति उपावन त्रिगुण विदेही।।
ग्रिन्द्रियाधिस्वर: नाम हरि चरनक गति रीति रस।।
सुमिरन करत रहत सदा भक्त मलूका प्रीति बस।।

मनुवंतर लीला

मनुवंतर की लीला गाऊँ। सब साधन कों शीस नवाऊँ।।
सनकादिक पथ नारद गए। बहुरि सोच ब्रह्मा के भए।।
भए उदास सोच मन माँहि। आदि ब्रह्म चित्त दै बिलखांही।।
करुना करि मोह वसि ब्रह्मा। निपट सकाम श्रिस्ट के धर्मा।।
सदा सकामी तम गुन अंग। रुद्र भए तेहि समै प्रसंग।।
महा जोगेस्वर दरसन दीन्हा। लखि ब्रह्मा मन विसमै कीन्हा।।
शिव अरु सक्ति अंग अर्धंग। निरखि आपु तन बढ़ो अनंग।।
पुनि अन्तरगति लजित भए। आदि ब्रह्म को सरनि गये।।
सब्द रूप नारायण भाषा। छोड़हु दुख सुख अभिलाषा।।
सब कछु हमरी आग्या जानहु। हर्ष सोके मति मन मे आनहु।।
मम सरूप तजि और न ध्यावहु। होई सकाम सब्र श्रिस्टि बनावहु।।
जो हरि करहि सो होई। हर्ष सोक मति मन में आनहु।।

जो हरि करहि सो होई। कोटि जतन कोई करै।।
ग्यानी पंडित सोई। हर्ष तजि आपा नहीं धरै।।
श्रिस्टी अनेक प्रकार। ब्रह्मा तें त्रिगुनी भई।।
पुनि हरि अपरपार। मनवंतर औतार किय।।

जा महँ श्रिस्टि सकल भई गणित चिर विवेक।
बहु प्रकार एक प्रभु एक अपार अनेक।।

प्रथ श्रेस्ट औतार मनवंतर शंभु मनुहि श्रेस्ठ कै जानहुँ।
दुतिय मनुवंत सारो चख उत्तम तामसरे पतहि बखानहुँ।।

पृथिवी लीला चौपाई

त्रिगुण श्रिस्टी किन्हीं परमित। अधर रहै सबको जिय भरमति।।
कियो विचार धरा करवै को। कछु उपचार बनै नहि एको।।
फिरी फिरी अपनी आदि विचारै। नारायण को रूप निहारै।।
सत रज तम मिली ब्रह्मा विलखो। कलल भई मन माँहि विलयो।।
जौन सुरति हरि संतहि देई। जानै आपु सति करि लेई।।
आत्म पुरुष सकल घट गायो। तिन अपनो उपचार बनायो।।

प्रथम पुरुष सोई प्राण पवन गति सब घट कहियत।
पुनि हरि दुतिय भाऊ नारायण जल रंग लहियत।।

परम तेज भगवान आपु नल रूप सेष को।
वर्तमान कारन विवेक परपंच एक को।।
पानी पवन अग्नि मथी उद्‌बुत फेन भयो सही।
सेष नाग रज बीज वधि पृथिवी नाम परो मही।।

वर्तमान की अस्थित ब्रह्मा करी बनाई।
मनुवन्तर पारखित आदि दै ठाहर कीन्हीं आई।।

वराह लीला चौपाई

ऐहि विधि बीते बहुतक काला। पुनि एक चरित कीन्हा गोपाला।।
जै हरन्याछ दैत एक भएऊ। सो पृथिवी को हरि लै गएऊ।।
तब ब्रह्मा मन में बिलखाना। अस्थित सृष्टि होत न जाना।।
अस्थित रहनि न कैसेहु बूझै। सकल जलामै नहि कछु सूझै।।
दूसर होई तौ सुनै सुनावै। एक पुरुष बहु भाव जनावै।।
सति पुरुष को शब्द परवान। सति भयो जब सति समान।।

तप आसन ब्रह्मा भए कीयो सति पुरवास।
प्रगटे आदि बराह तब जहँ दछिन पटनास।।

प्रथम भए अंगुस्ट प्रवान। पुनि तन कीन्हो सैल समान।।
जग्य वराह वेदमै कर्मा। कला रूप वसुधा के धर्मा।।
खुर अघात पैठे भीतर जल। सूँघत घुरघुरात असुरथल।।
नील सिखिर सम तन सुसोहा। देखत दाढ़ काल मह मोहा।।

जेंऊ गज मत्त महाबली जल क्रिडहि पैठाए।
वसुधा पानी में लखी जहाँ दैत बैठाए।।
हाक मारि वसुधा लई दंत अग्रति लभीस।
आहट पाई दैत ठठो महा बली असदीस।।
दैत देखि यह अचरज कला काल विपरीति।
अन्त गहैं सनमुख भयो जोंऊ सूरंतन रीति।।

मम मनमुख दूसर को आबा। सक्ति अभिमान जानि गोहरावा।।
सरन्या ध्यान तबै हरि कीन्हा। सक्ति जहाँ की तहँ भैलीना।।
असुर मारि पृथिवी अधारि। एहि विधि भूप वराह मुरारि।।
ब्रह्म को दुख हरि सुखदाई। जल पर पृथिवी अस्थित कराई।।

सोरठा

जन्म कर्म गुण नाम, कहि मलूक भगवान के।
अन्तरजामी राम जब, जानैं तबहीं सुफल।।

नाम कवित्त

धरणीधरः धरा धारो जज्ञां गोश्रिणीकृत जग्द भरः।
पयुषोत पति कारण समस्त पित्र जीवनः हरिन्याक्ष हरः।।
हव्यकव्यैक भुग जज्ञ घ्नौ प्रिथिवीपति सरा ध्ययादि कल्पकः।
हव्य कव्यैक फलदाएक छोभिता सेष सागर सत्ताधिपः।।

महावराह आत्माधारो अमीकृत देवौधः।
सेमांतर लीन जलधि हरि ध्वंसिनो जज्ञ का श्रयः जः।।

साछी सब्द सरूप आदि अन्तस जल मई।
नारायन जल रूप जातें यह उपत्ति सकल।।

जल उपर कूरम असथान। सेषनाग ता पर विश्राम।।
गऊ रूप वसुधा जेंउ राई। सेषनाग माथें ठहराई।।
पृथ्वी देखि ब्रह्मा मन मानो। डगमग जानि कियो उनमानो।।
सो कछु होई जोउ लान परे। असुरादिक कोई नाहिं हरै।।

ब्रह्मादिक पालन कों आग्या दई बनाई।
चारों दिस गहि बैठहु जाते उलटि नहिं जाई।।

जब दिग पालन अग्या पाई। चारों दिसा बैठीगै धाई।।
पूरब उदयाचल विंध्याचल। दक्षिन अचलाचल रतनाचल।।
पछिम अस्थाचल मलयाचल। उत्तर श्रिखंड दौनागिराचल।।
बहुरतना वसुंधरा सू भर। जहाँ तहाँ बहु भूधर।।
पृथवी मधि सुमेरहि धारा। ता पर चारि पुरी विस्तारा।।
ताहि पुरी को सुनहु विचार। जेहि विसुमेर का विस्तार।।
ईसा नेवस्ती नहि होई। ताको कहा बखानै कोई।।
तामस मनु ब्रह्मा के पूत। ताके अर्जुन महा सपूत।।
तेन जाए विभु इन्द्र समान। स्वर्ग नम अर्जुन पित्र परवान।।
देव ब्राह्मन और रिषेस्वर। पुनीत चारि वरन के ईस्वर।।

तैंतिस कोटि देवता तामें इन्द्र सनमान।
पूरब दीसा सुमेर पर कियो अमर पुरथान।।

अग्नि कौन को कहा बखानौ। बम्ती नहीं सुनि कै जानौ।।
बहुरि कथा एक और सुनीजै। ब्रह्मा सुत चित्रगुप्त कहीजै।।
तेन के संग चौदह जम और। दछिन दिसा बनाई ठौर।।
नाम जमपुरी जम अस्थान। जमराजा तेहि ठौर परवान।।
वा इव कोने विर्छि जमायो। जंबूनाम विर्छि तिन पायो।।
फूले फलै होई सब पानी। सो जल मानसरोवर जानी।।

जलचर के रा वरून पछिम दिस अस्थान।
बरूनावती पुरी तहं वरुन लोक परवान।।

बैकुंठनाथ लीला

और कथा एक सुनहु पुनीत। बैकुंठनाथ जस नौतम नीत।।
मनुवन्तार सुमत्र मनु नामा। बैकुंठा तेहि पतिनि वामा।।
तहां बैकुण्ठनाथ औतार। बैकुंठ लोक कारन उपचार।।
सुमेर भूमि नै रितु तेहि ठाउँ। तहँ का विलास वसाएऊ गाऊं।।
ता में एक अस्थान बनाए। ताहि नाम बैकुंठ धराए।।
बैकुंठ नाथ तहाँ विश्राम। मलूके प्रभु आत्माराम।।
उत्तर दिसा कुबेर बसायो। अलकापुर तहँ गाऊँ बनाया।।
गरुरादि दैव मुनि संचारी। जहाँ कुबेर किए भंडारी।।

सर्वमई जगदीश देवचराचर पित्र जस।
मृतु लोक के ईस जो जस करै सो भोगई।।

नाम कवित्त छप्पय

पद्म पाणि संखभिर्नन्द की पूज्य सारंग धनुषल धारकं।
ब्रह्म तेजमयस्य त्रुयीमयरूमापति नाएकं।।
गरूड़ वाहनं हिषीकेश वन माली सर्व देवैक सरणं।
अचिंत अदभुत विस्तारो परांगक्षंद दहन जरा मरणं।।
शिवाचार्ज्य जसप्प्रद: शिवखिल ग्यान कोशो सर सत्यति:।
द्रिज पति कमलापति सर्वेरत कहै मलूक मम गति पति:।।

जग्य पुरुष लीला

बहुरि सुनहु जग्य औतार। खंडन पाप धर्म विस्तार।।
शंभु मनु एक हरि को दास। आकूती कन्या तेहि पाप।।
रेंषैस्वर रुचि नाम जो आही। सो कन्या मनु ताहि विवाही।।
तेन ते जग्य पुरुष औतार। तहँ सुरसुरि दछिना वेवहार।।
कीन्हीं जग्य की धर्म की थाप। जग्य पुरुष हरि आपे आप।।

दीन्हो भाग सबनि को मर्जुन गन इन्द्रादि।
संभु मनु तहं राखिया असुर किए सब वादि।।

नाम कवित्त

सर्वे देव विप्र नंदो अच्युतः सर्व देवैक दैवतं।
हरि हरि विद्या अग्रः प्रणवः मंजुकेशः नाम अद्वैतं।।
अक्षरोत्मः गुरुः विग्यः जज्ञ भुग नित प्रति वेद सारमया।
जा मख पावन त्रिपित होत नित जज्ञ सार जय।।
श्री वत्सवत्सा मंगल निधनाम बखान अनेक विधि।
कहै मलूक व्यापिक हरि अन्त निअंत अनेक सिधि।।

कपिल लीला

कपिल औतार अलेख सरूप। एक अरूप कीए बहु रूप।।
ता सुरूप को सुनहु बखान। भगत भागव करत प्रवान।।
कर्दम रिषि काहौं तें भए। तत छिन करन तपस्या गए।।
भयो प्रगास कमल विगसानो। हरि अन्तर गति आई समानो।।
लागी प्रीति सुरति ठहरानी। हरि अकास ते बोले बानी।।
करू विवाह को अंगीकारा। हमरी अग्या तें निस्तारा।।
मेरे तौ इच्छा कछु नाँही। अन्तर जामी तुम सब माँही।।
को करिहै मोहि अंगीकारा। तुम अविनासी अपरंपारा।।
तब हरि कहा सोच मति मानहुँ। विधि संजोग हमरो इमानहुँ।।
संभु मनु एक हमरो जन है। सो कन्या तुम पें लै अैहै।।

मानि लेहु तुम वाकी रीती। हम औतरहि तुम्हारी प्रीती।।
एतनी कहि हरि हृदै समाने। स्वांभू मनु तहँ आई तुलाने।।
चरन टेकि कै विनती कीन्ही। बाँह पकरि कन्या सोई दीन्ही।।
देवहुती रिषि पतिनी नाम। टहल करै रिषि ग्रेह विश्राम।।
बहुतक अवधि बीति तब गई। प्रथम एक कन्या तब भई।।
एहि विधि नौ कन्या उपजाई। तेन ते स्रिस्टि अनेक बनाई।।
चितवनि करी हरि जी को ध्याए। करि बहु प्रीति चरन चित लाए।।

रिषि दुख जानि दया करी बोले वचन दयाल।
अब तुम्हरे औतार लै करौ भाउ प्रति पाल।।

मनसा करी रिषै संजोगी। उतिम भाऊ पुनीतम जोगी।।
देवहुती नलनी ग्रह वास्पा। रिषि कर्म की पूजी आसा।।
द्वादस मास गर्भ में भएऊ। रूप चतुर्भुज दरस दएऊ।।
दरसन देखि रिषै सुखपावा। वन्दन कै चरनन सिर नावा।।
विनती करी रिषै मनुहारी। कछुक अनुग्रह करहु मुरारी।।
चित वित सब तुम माह समाई। हौमै तैं दूजी मिटि जाई।।
दरसन को फल दीजै स्वामी। त्रिविधि ताप मेटहु निहकामी।।
आग्या दई जाहु तुम बन को। सकल अनुग्रह कीन्हो जन को।।
ता पाछे मानहि उपदेसों। हरि बिन देखो सकल अनैसो।।
हरि बिनु नर्क परत है प्रानी। हरि बिनु भर्मै चारौ खानी।।
जनम मरन तें कोई न छूटै। हरि बिन बार बार जम लूटै।।
मलहि मूत्र ते जिउ उपायो। मातु उदर में आनि समायो।।
यह उतपति को सुनहु विवेक। रुधिर नीर मिलि भयो जो एक।।
मास दिवस औटो जेऊ सोना। कर्म कहा ऐसो फिरि हौंना।।
दूजे मास भयो बद्री सम। नर्क गर्भ अघोर अंधतम।।
तीजे मास मासु को अंडा। चौथें कटि भई औ ब्रह्मंडा।।
पंचम मेरु दंड उदर उर। यह कामिक गतिदेव असुर सुर।।
छठए मास कर पद परवान। मास सातए जीव समान।।

मास आठएँ पूरन जोग। जनम जनम के समुझै भोग।।
चौरासी जोइनि भरमाई। नवए मास सुरति सब आई।।
दसए मास जनम भयो आई। थापि देव औषधी पिवाई।।
औरै दुख औरै उपचारा। महा दुःखी बालक विकरारा।।
बालापन खेलत गयो बीती। भए कुमार जोवन की रीती।।
तरुना पें बहु कर्म कमायो। ता पाछें विरधापन आयो।।
गये ग्यान सिर धुनि पछताना। मरन काल पुनि आई तुलाना।।
जो करी आए सो करि गये। अैसेहि जनम मिथ्या भये।।
भगति बिना नाँही निस्तार। हरि बिनु कोई न उतरै पार।।
तीनि भाँति की भगति कहीजै। सो माता मो पह सुनि लीजै।।
मन कामि सुमिर भगवान। ताकों भगति तामसी जान।।
क्रिया आचार करै बहु पूजा। भगति राजसी कहिए दूजा।।
सातिक जन कें यह विश्राम। सब घट देखैं एकै राम।।
परमात्म को रूप निहारै। आपहु तरहि औरन को तारै।।
दोऊ कर जोरे प्रनवै माता। तुमहीं भगति मुक्ति के दाता।।
तुम ही माता पिता हौ बालक। अखिल लोक के तुम प्रतिपालक।।
अग्या देहु करौ तुव सेवा। तोहिं निरंतर ध्यावौं देवा।।

होई प्रसंनि आग्या दई गए पताल क्रिपाल।
ध्यान कीयो सागर तट आपुहि आपु दयाल।।
साठि सहस सगर सुत भए जस में जेहि द्रिस्ट।
जग पावन गंगा करी परम पुनीतम ईस्ट।।
कारन करि कपिल औतार को साँखि जोग परबान।
विश्नुपादोदक गंगा करी कपिल मुनि भगवान।।

नाम कवित्त छप्पय

पूर्व सिद्धः कपिलः हरिवेद धर्मपारायण सुरभी पति।।
सिंधूः सगरात्मज भस्म कृत ध्यान भंग स्वेत दीप पतिः।।

कपिल वाजपेयादि नाम अग्नि ज्ञान जोगो जगस्वामी।।
सांखि प्रणेता कर्दमात्मज विश्व प्रकाशित मति निःकामी।।
देवभूत्यात्मज धर्म मोह तमिश्रिहा विषेंद्र मुनि।।
कहै मलूक औतार अंस सर्व सिद्धराटः हृदै गुनि।।

दत्तात्रेय औतार चरित

महा मुनीस अत्रै रिषि नाम।। चित्रकूट पर्वत विश्राम
अनसुया तार्के अर्धांगी।। सेवा करै एक सतसंगी
पतिव्रता तिय अग्याकारी।। मन वच कर्म एक व्रतधारी
पतिनी सहित तपस्या करंही।। जोग धारना नित प्रति धरंही

पूरन जानि तपस्या ब्रह्मा बिसन महेस।
वर कारन रिषि आश्रम गये त्रिगुण धरि भेष।।

चरन धोई चरनाव्रित लीन्हा। पाक दिव्यता पाछे कीन्हा।।
करि प्रसाद सेष तब दीन्हाँ। रिषि पतनी माथें धरि लीन्हा।।
कछु एक काल बीति तहँ गए। हरि दत्तात्रेय तब प्रगट भये।।
निर्गुण रूप हरि आत्म देवा। स्वयं ब्रह्म नाहिं कछु भेवा।।
तेन के सिष भूप जदु राजा। हाथ माथ दै ताहि नेवाजा।।
उभै लोक की दीन्हीं सीधी। जाते जोग भोग नौ निधि।।

कहै मलूक एहि विधि भयो दत्तात्रेय औतार।
दोऊ पद जातें सुफल जोग भाग निसतार।।

पापत्रस्तः गुप्तात्मा भक्ति चिंतामणि सदा मुनेस्वर।
सदा पुनि स्वमाया नित्य मिताचारो दत्रात्रैई स्वर।।
विश्व श्लाध्यो यो आनन्दः सदोन्मदः परमाश्रित पद्मपः मुनी।
हरिः पूरीताखिल देवेसो अनसुया रतन गर्भ गुनी।।
विस्वार्थैक औतार कृत श्री राज्य राजः प्रदोनद्यः।
पर सक्ति सदा स्लस्टोवरदः भोग मोक्ष सुखप्प्रदः।।

नरनारायन औतार

नरनारायन पुर बेअंत। कर्म जोग गुन नाम अनंत।।
धर्म पिता मूरति महतारी। तहाँ औतारे प्रभु सुखकारी।।
बद्रिक आश्रम तहाँ नेवासा। बद्रीनाथ नाम परगासा।।
जगत जीव को जानहि मर्मू। काटहि सकल विस्व के कर्मू।।

सहस वरष व्रत धारि कै एकल करहि माहार।
आदि प्रजंत विराजहिं विस्व उतारन भार।।
देखि इन्द्र डरपाना मति इन्द्रासन जाई।
करि विचार तहं पठयो कामादि कहि सिखाई।।

काम अपछरो और बसंतू। इन्द्र वचन ते गए तुरंतु।।
तहँ नारायण तहँ चलि आए। अपनो आपनो अंग जनाए।।
एक अंग मह नाना भाऊ। तामें बहुत अनंत प्रभाउ।।
तन कौ अंग भंग नहि भयो। तब सबहिन के मन डर गयो।।

मोहन कारन बुधि बल कीन्हों बहुत उपाई।
कामदेव कंपित भयो लखि नारायन भाई।।

संकित भयो काम अति डरई। तेज तपस्या को मति करई।।
कर पर कर धरि विनई सेवा। मोहि सरनागति दीजै देवा।।
अग्या भई संक मति मानहु। हमरे काम क्रोध मति जानहु।।
हरि बोले कछु पूजा लीजै। आसन सुफल हमारो कीजै।।

कामदेव तब जाना यह न तपस्वा अंग।
नारायन औतरे आदि पुर्ष सर्बग।।

संत सिरोमनि है सुखदायक। अचरज नहीं सबै गुन लायक।।
प्रभु तब ही माया उपजाई। सहसन अपछरा तह देखाई।।
एक ही स्वर्ग भूषना नामा। ताहि देखि लज्जित भयो कामा।।

स्वर्ग भूषना नारी है अति चंचल सुकुमार।
देवलोक अैसी नहीं इन्द्रहि दई विचारी।।
देखि इन्द्र सकुचानो लखि लीला औतार।
कहि मलूक इन्द्रहि दीयो अभै राज निस्तारि।।

नारायन नर रूप सुचित हरि एक अग्रचित।
बद्रीनाथ त्रिविधि तपमोचन जगत जीव हित।।
महा तपीस्वर मह व्रतधारी कलिमल भंजन।
अंजन ज्ञान ध्यान मति मंजन जन मन रंजन।।
धर्मात्मिज धर्मधजा मूरति आप परमात्मा।
कहै मलूक सर्वोमई आपा तजि गहु आत्मा।।

ध्रुव वरदेव कला औतार। ध्रुव कारन कीन्हों उपचार।।
श्री नम्र एक उत्तम गारा। उत्तानपाद राजा को नाऊ।।
ताके रानी सुरुचि सुनीती। राजा वाते सुरुचि की प्रीति।।
उत्तम कुँवर सुरुचि जननी को। ध्रुव कुमार जेठी पतिनी को।।
एक सध्रुव उत्तिम कुमारा। दोउ खेलै राजहु वारा।।
चले चले राजा पें आए। राजैं उत्तिम गोद बैठाए।।

ध्रुव चाहै गोदी चढ़ो सुरुचि लियो झिझिकारी।
अति दुर्वचन सुनाई कै ततछन दियो उतारि।।

ध्रुव रोवत आए जहाँ माता। गद गद कंठ न आवै बाता।।
आँसू पौंछि लियो उर लाई। बड़े जतन के बात कहाई।।
सुनु सुत काहु दोस न दीजै। पूर्व जन्म की सुधरी लीजै।।
पूर्व जन्म भगति नहीं कीन्हीं। भगत वछल प्रभु लिये न चीन्हीं।।
अजहूँ राम भगति जो होई। जो चाहो प्रभु दैहों सोई।।
करहु तपस्या मनचित लाई। प्रभु को दियो निघट नहीं जाई।।
यह सुनि ध्रुव मथुरा को आए। पाछे राजे दूत पठाए।।

राज आपनो आधो लीजै। हे सुत हमही दोष न दीजै।।
तव मेरो कीन्हो अपमाना। को माने झूठो सनमाना।।
अब तो पाछे पाऊ न देऊँ। राज दीयो ठाकुर को लेऊँ।।
यह कहि ध्रुव आगे को चले। मारग आवत नारद मिले।।
पीत वसन वैजंति माला। वीना हाथ गावत गोपाला।।
दौरि ध्रुव चरनन लपटाई। होई दयाल लीन्ह उर लाई।।
देखि दीनता रहन चलन की। जुगुति बताई राम मिलन की।।
ध्यान बतायो नारद अपनो। संजम सील नाम को जपनो।।

ध्रुव इच्छा ते नारद माथे दीन्हीं हाथ।
करह तपस्या मथुरा तत छन मिलिहै नाथ।।

कालींद्री तट आसन बाधा। मन राखो त्रिकुटी की साधा।।
अग्नि तुषार वासना सही। गुप्त प्रगट इन्द्री सब गही।।
ध्रुव वरन देव रूप तब कीन्हा। छटए मास प्रभु दरसन दीन्हा।।
मागु मागु ध्रुव जो मन भायो। जा कारन तू गृह तजि आयो।।
तुम तजि चहौ न अन्तरजामी। जीव बुधि हम सदा सकामी।।
दरसन की अभिलाषा मेरे। रहिए सदा सरन गति तेरे।।
राज हमारो दीन्हो लीजै। जब लगि लोक तुम्हारा कीजै।।
ब्रह्म लोक उपअस्थान। रवि गन रिषि करते सनमान।।

कह लगु कहिए साज सकल सामिग्री साज की।
बड़े गरीब नेवाज कहै मलूक दाता अभै।।
पीतांबरो जग त्राता नहि बादी सक्रादि अधीस्वर।
जज्ञा पुमान सर्वजीवो रुद्राद्रित कृष्ट चेतनः ईस्वर।।
सर्व देव मूरति अनुत्मः परमात्मा सर्व देव प्रियः।
सर्व मंगलः जग निधिः जगधाता विस्वंभर द्विजप्रियः।।
नाम जगत बंधू मलूक कहि जज्ञ त्राता ध्रुवपतिः।
सर्व सिध्वार्थजज्ञ भावनः वासुदे सर्वे गतिः।।

प्रिथुवी लीला प्रिथु सरूप की सुनि लीजै गति।।
रतन प्रिथी के भई जातें जग उतपति।।

राजा वेनु प्रिथी पर भएऊ। बुधि हीन ग्यान सब गएऊ।।
निंद्या करै अधम पतिताई। लोक वेद की रीति मिटाई।।
रिष मुनि जन मिलि कीन्ह विचारा। देई सराप वेनु कह मारा।।
ता पाछें एक रची उपाई। बंस रहे अरु नर्क न जाई।।
सबै रिषेस्वर तहँ चलि आए।। वेद मन्त्र पढ़ि जग्य कराए।।
प्रमि बिप्र मिलि जाँघ मथाई। कोल मील होई वन को जाई।।
बेनु बाहु मथि प्रिथउपराजा। हरि औतार प्रिथी पति राजा।।
जेन प्रिथवी की रीति सवारी। हाट बाट संग्या फुलवारी।।
बाग वापी मठ कूप बनाए। क्रिषी किसान अन्न निरमाए।।
प्रथम रथ चढ़ि पुरुषारथ कीन्हा। दहिनावर्त सुमेरहि दीन्हा।।
सात बार रथ फेरेउ राजा। सात समुद्र दीप प्रतिसाजा।।
पुनि प्रिथिमी कर मूल विचारा। तामे तें बहु रतन निकारा।।
धान पान नैवेद लै आए। रस गोरस मधु माखन पाए।
सात द्वीप समुंद्र के नाम । नटवत हरि को यह विश्राम।
प्रथमहिं जम्बू दीप विचारी।। एक समुद्र नाम तेहि चारि।
पूर्व नाम महोदधि लीजै। दछिन रतनागरहि सुनीजै।
पछिम खार समुद्र बखान। उत्तर मानसरोवर जान।
दूजे सिंघल द्वीप कहावै। सागर स्वेद नामु तेहि पावै।
तीजें मधु सागर को नाम। तहा पलछ दीप को धाम।
चौथे दीप सिलमिला जहाँ। अति गंभीर महासागर जहाँ।
पंचम सुनिए नाम अनूप। गुरिच दीप मथि सागर रूप।
छठएं दीप पुहकरहै गाँऊ। सागर छीर अहै तेहि ठाँऊ।

सतएँ दीप महर्ष है सागर महा प्रवाह।
एतनी प्रिथु औतार की लीला भई निबाह।।

आदि राज क्षित पिताजीः श्री कीर्ति सर्व रत्नै कदा दोह क्रित।
जगद विर्ति प्रदस्चक्रवर्ती जगद् वसी हरि सर्व स्वयं त्रित।।
चिन्तामणि गुरु श्रेष्ठो अक्ष रवि प्रराज्यदः नाम महा निध।
राज्य श्रेष्ठो द्विजा अस्त्रध्रिक सर्व श्रेष्टाश्रयः अष्ट सिध।।

प्रिधुर्जन्माद्रेक दिक्षो हरि बखान करै कौन।
कहै मलूक वाकि सुभ अक्षर महादेव भाखो जौन।।

लीला सुनिए रिषव देव औतार। ताको कारन सब उपचार।।
नाम तनै भै रिषव कुमार। गर्भ में रहै के औतार।।
परम हंस को ज्ञान सुनायो। माता कों अनुराग उठायो।।
रिषव देह प्रगटे हरि रूप। भै ताके सौ पुत्र अनूप।।
महा पुनीत परम बड़भागी। हरि सों प्रीति नाम अनुरागी।।
रिषव देह को ग्यान दियो। राज रहित पद माह समायो।।
सौ पुत्रन में नौ जागेस्वर। जैन उपदेसे जनक रजेश्वर।।
नौ भै नौ खण्ड के राजा। सुनिए नौ खण्ड प्रति साजा।।

दोहा

जंबू करन भरत खंड माल खण्डे पुनि गाँऊ।
त्रितेर विहान खंड कहियत किरिनी को नाँऊ।।

एक कासी रिषी धर्महि चले। एक गृहस्त सुफल फल फले।।
एऊ प्रकार रिषव औतार। सगी आत्मा अपार।।

रिषदेव की गाथा गाई कथा पुनीत।
रमिता राम सकल घट बरनि सकै को रीत।।
नाभि तनै रिषि कुमार जड़ अवधुत रिषव देवादि पवित्रः।
परमरिपेस्वर जोझेश्वर खंडेस्वर हरि ब्रह्म ईस्ट मित्रः।।
देवी मेरात्माज मातु परमोंघ नवोधन पितु समोधन।
ग्रह साधन पद और राधन साधन नाग गुन ज्ञान निरोधन।।
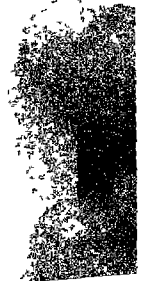
पावन नाम सदा सुफल कह लगु कहिए गुण वरनि।
कहै मलूक अद्वैत पद रहौ सदा ताकी सरनि।।

हयग्रिव लीला

हयग्रिव औतार राम गति। लीला रूप नाम विंध्यापति।।
ब्रह्मा के मनु भयो उछाहा। जग्य करन को कीयो उपाहा।।
सनकादिक बैठे जनकादिक। रुद्र विस्न रिषि और सुरादिक।।
चतुरानन तब मन्त्र उचारा। महिमा महा पुनीत अपारा।।
जग्य कुंड ते हरि औतारा। अस्व वदन नर को आकारा।।
असुरहि मारि वेद उधारथि। चतुरानन कीयो जै जैकार।।
कारज को कारन हरि स्वामी। सकल घटादिक अन्तरजामी।।

विद्यापति औतार।। अस्व वदन हय गीव जेहि
प्रगट भए संसार।। कहै मलूक स्वाम निगम

नाम कवित्त

विद्या राजो आदिः कविः आदि विद्यान मलू विद्या विनायकः।
स्वार्थ कृत्यं त्रिकाल जित हयग्रीव सर्व दैर्बतः नायकः।।
अनंत विद्या प्रभयो श्री कण्ठैक सब्द ब्रह्मैक पारगः।
हरि अस्त्रोता अर्थ साधिकः सदोज्जि विष्टरसवा।।
मधुसूदनः वद कर्ता वदात्म चतुर्वेद परवर्तकः।
अनेक मन्त्र कोटीशः सिधि सिपि विष्टः नाम सुचिः श्रवा।।

मछ औतार

और कथा को सुनहु परकास। उपनिषद तत मूल विस्वास।।
जो व्यापिक घट घट बनवारी। मछ रुपहि धरो' मुरारी।।
जुग को अन्त भयो सब जबहीं। समै निशा की आयाी तबहीं।।
चारि सहस्र गये जुग बीती। कर्म काण्ड की नाँही रीती।।
चौदह मनुवन्तर होई गएऊ। ब्रह्मा को दिन सगरो भएऊ।।

समै सैन करन की आई। भगत वच्छल एक बुद्धि उपाई।।
जनसतवर्त नाम रिषि राजा। गये सरोवर तर्पन काजा।।
तर्पन कीयो राज रिषिः जबहीं। सौरी नारायन भै तबहीं।।
डारि दियो जल जब भूई मौंहो। देखो सौरी जीव तहौंही।।
जीव जानि दया रिष करी। कमंडल में सौरी लै धरी।।
बाढ़ै तीन हाथ तत छिनही। भयो सोच राजे रिषि मनही।।
मच्छ राज रिषि लियो उठाई। अस्थल बड़ो दीजिए जाई।।
बड़े ताल यह लौ मख राखा। तबहीं मछ वचन एक भाखा।।
अस्थल बड़ो देहु हम कों रिष। तुम रिषि सुनहु हमरी सिख।।
प्रिथिवी प्रलै सतए दिन होइहि। जोग के अन्तर ब्रह्म सोइहि।।
नाउ रूप प्रिथिवी सब होइहि। बीज रूप सब सृष्टि चढ़ैहहि।।
तुमहूं चढ़हु सब मुनि जन साथा। राखि लेंऊ ताहि जानि अनाथा।।
राखो मछ महा सागर महँ। पुहकर दीप क्षीर सागर जहँ।।
राजा चढ़ो मुनि जन साथा। जानि वचन जो भाखो नाथा।।
को कहि सकै मच्छ परवान। लछि जोजन लगु शृंग परमान।।
तासो प्रिथिवी नाऊ लैवाधी। बीज रूप सब की सिध साधी।।
चारि सहस्त्र जुग फिरतहि गयो। फिरी उनमान देव संको भयो।।
ब्रह्मा जागे निस औसाना। वो ही सरूप वोही व्रतमाना।।
तब सत वर्तसोई से जागे। देखि चरित भर्म सब भागे।।

राजा सत वर्तहि दीयो पूरन पद विस्वास।
नित्य प्रलै ते राखिया भयो ज्ञान परगास।।
लीला वरनी मूल की महा मत्स औतार।
कहै मलूक अगाधि गति अति अपार विस्तार।।

मछ नाम कवित्त छप्पय

ब्रह्मार्थ वेदाहरणं विज्ञान जन्म भू शृंग मुनेस्वर।
महाशृंग अंबोधिः श्रुति सागरः सर्व वागीस्वर ईश्वर।।

जग जाहि द्यं नाश को सर्वदेवम् यो मत्सय देवचतुर्भुजः।
सर्व देवतं जीवेशो वेद गुह्यि ज्ञानं सिधू चतुर्जुगः।।
ब्रह्म गुरु वागेस्वरी पतिः ज्ञान मूर्ति सदा अचिंतः।
पराध्र्यायुः परार्धकर्ता सर्वे जोग विनिः श्रितः।।
अजित औतार देवसमयो ब्रह्मा निसवीती।।

ब्रह्मा के दिन सृष्टि होत सब। निस के सोवत प्रलै होत तब।।
ना कोई जन्मै ना कोई मरे। बाजीगर माया विस्तरे।।
आपु प्रलै आपु परकास। परचै नाम सति विस्वास।।
ब्रह्मा तेजो स्रिष्टि कराई। तेहि भाँति वह रौ परगटाई।।

मनुवन्तर रिषि देवगन इन्द्र ब्रह्मा औतार।
वर्तमान जेंऊ पाछिला संपूरन उपचार।।

एक काल पुनि अैसा आयो। देवन असुर विरोध करायो।।
दैतन और राधेऊ दुर्वासा। भए प्रसंनि वचन परगासा।।
माँगहु जो कछु इच्छा तुम्हारी। काहे से कीन्ही हमारी।।
स्वामी हमरो कार्ज सारो। रिषि स्वर्गन देवन को मारो।।
क्रोधवत मुने कीन्हीं आपा। रिषि स्वर्गन को दई श्रापा।।

परा सराप रिषिन पर इन्द्र आदिक अकुलान।
स्वर्गन लै सुरपति चलें गै ब्रह्मा अस्थान।।

स्वर्गन इन्द्र दीनता भाषी। अहो जगपति लीजै राषी।।
ब्रह्मा कहै सतो एक साधैं। तप लोकहि चलि हरि औराधैं।।
जोजन लक्ष सुमेर के ऊपर। लछि जोजनु पुनि सूर्ज के तर।।
तहँ तब लोक ठौर अति नीकी। चारि पुरी तहँ है तपसी की।।

जौजन चालिस सहस लगु अंबला पुर है गाँऊ।
सात सहस बत्तीस जोजन तहँ रिशि लोमस की ठाँऊ।।

जोजन अठतिस सहस सोमपुर। पचास जोजन सहस धर्म गुरु।।
ब्रह्मा तहाँ तपेसी कीन्ही। विस्न देयो करि वाचा दीन्ही।।
करी तपेसा कौन सो इच्छा। कहु क्रिपा करि देऊ परिच्छा।।
कहा कहैं तुम पाह गोसाई। सृष्टि मरत है देऊ जीवाई।।
विस्न कहा मानहु हमरी सिख। अमर करौ मैं स्वर्गन देव रिषि।।
समुद्र मथि अंम्रित उपराजौ। देह धरौं सब कारज साजौं।।
जो हम कहैं सो सब मिलि मानहु। कपट रूप मति हमको जानहु।।

ब्रह्मा को सन्देह मिटायो। हरि अजीत औतार बनायो।।
मनुवन्तर बैराजन मजहि। संभूति इस्त्री वाम तेहि।।
ताके गर्भ अजित औतार। कहे मलूक किस्न उपचार।।

अजित नाम कवित्त छप्पय

अजितो जितो दैत्यो सत्यं भक्त शंभु अनंत अविकृयं।।
महाप्रलै विस्वैक समस्त पाम्रित वापी वचसा छनक्कियां।।
आदि गुहा क्षेत्र अर्पतर्क्य स्वध्वात्म भावित परप्रपंनं।।
नमामि हय देव: निकल हरि प्रणव दाश मलूक अनंन्यं।।
प्रजा महीति पुरारि दाहैकत्रि जगेशं भ्रमनुकृयं।।
द्वितीयोखिल: नाग राट इस्थैर्ज्य्य विस्वरथोद्य: ।।

कूर्म औतार की लीला

धरो अजीत सरुप मुरारी। देव असुर सुर सब आज्ञाकारी।।
अक्षर कियो मते बैठाए। देव असुर सुर सब बोलाए।।
मतो कियो अजीत भगवान। हमरो वचन कहु परवान।।
उदधि माह बहु रतन सुनीजै। सब मिलि मथहु काढ़ि सो लीजै।।
भाग आपनी सब मिलि लेहू। सेष बचै सो हमहैं देहू।।
सब मिलि विनै कहो सुनु स्वामी। तुम व्यापक सब अन्तरजामी।।
उदधि मंथन कैसें करि करिए। कौन सु रीति जुगुति संचकिए।।
देव असुर सुर एक मत ठानहु। मन्दागिरी पर्वत कह आनहु।।

अठारह भार बनासपति जहँ। लै लै सब डारहु समुद महँ।
नाग वासुकी को गुन करहू। उदधि महा मन्दराचल धरहू।
देव असुर सुर मंथन करहु जब। निकसै अंबरित बांटि लेहु तब।
भाग आपनो सब मिलि पीवहु। अमर होहु सब जुग जुग जीवहु।।
अजित कही सो सबही मानी। भली बात यह मन ठहरानी।।
प्रभु की अग्या सब्रहिन करी। वनस्पति समुद्रन मह धरी।।
मन्दराचल पर्वत कह धाए। देव असुर सुर ताहि उठाए।।
प्रिथिवी ते काढो बाहेर करी। बलकरि सब ही लीयो शीशधरी।।

सब मिलि परवत लै चले जिय बाढ़ो अभिमान।
मन्दराचल तर बहुतक असुर भए मरिमान।।

तबहीं पुरुष अजीत मनाओ। गरुड़ चढ़े प्रभु तत छिन आयो।।
सब हिन मिली के शीश नवाए। यह अपराध जानि नहिं पाए।।
परवत उठै जय हम पाँही। थाको पुरुषारथ बल नाँही।।
तब अजीत परवतहि उठाँवा। गरुड़ पीठ पर आनि चढाँवा।।
आनि उतार मधि समुद्र। चकित भए ब्रह्मा और रुद्र।।
कहो मथहु समुद्र कह जाई। सुर असुरादिक दुनौ भाई।।
नाग बसुकी को गुन कीन्ही। केरा चारि परवत मह दीन्ही।।
सीश गहा सब असुरन जाई। स्वर्गन देवन पूछि गवाई।।
सब मिलि फेरन लागे बलकरि। मन्दाचल धँसि गयो धरनि तली।।
फिरै नहीं धरनी धँसि गयो। देवन असुर अचंभा भयो।।
सुर अरु असुर करहि मनुहारी। तब अजीत कूरम वपुधारी।।
निज पीठ पर लिय परबत भारी। प्रगट जगत लीला विस्तारी।।

कच्छप को औतार।। धरी अजीत तुरन्तही
पीठि आपने भार।। मंदराचल परवत धरो
कीन्ही मंथन उपाई।। कहै मलूक अचरज कथा
अविगत गति जानि न जाई।। जो चाहे सोई करै

नाम कवित्त छप्पय

लीला ब्याप्ताखि: आदि कूर्मो हरि: समस्त देव सर्व स्वयं।
अखंडधी: खिलाधारं भूत भव्यसर्व देवता कवचं।।
शिव त्रिसूल विधूंसी भवनार्थो धरो विस्व पर पूरक।
कहै मलूक पवनाग्रो सर्व स्थित कला सबनि के धीरक।।
दिव्यालोध्वर्ग भूषण: पाप नासन पिंजर:।
ब्रह्मांडी सत्रपादि कर्ता जगद बीजन धुरंधर:।।

धनवंतरि औतार

कला रूप कूरम बपु धारी। परतछि रूप अजित बनवारी।।
ता पर मंदाचल धरि फेरो। व्याकुल उदधि चहु दिस हेरो।।
खलभल भयो जीव अकुलाने। करम कला उदधि तब जाने।।
मंथन भयो परवत के फेरत। निकसे रतन उदधि के हेरत।।
प्रथम उदधि लछमी लै आए। शंख धनुक मनि भेंट चढ़ाए।।
विनति मानी पुरुष अजीत । पुनि विवाह की ठानी रीत।।
मनि ग्रिव डारि धनुक कर लीन्हा। संख वाद ता पाछें कीन्हा।।

राजा जलचर के वरून तिन पहराई माल।
ब्रह्मा करी वेद विधि लछमी महित गोपाल।।

बहुरि फेरायो मंदाचल कहँ। ऐरावत हाथी निकसा तहँ।।
काम धेनु अरु अश्व सप्तमुख। पारजात कनक सें दाता सुख।।
लै अजीत के आगे धरे। पुरुष अजीत भाग तब करे।।
ऐरापति सुरपति तहँ पावा। अश्व गाऊ बैकुंठ पठावा।।
पारजात सुर लोक जमायो। बहुरि उदधि को मन्थन करायो।।
मदिरा लीन्हे निकसी रंभा। सुर असुर को भयो अचंभा।।
सुर इन्द्रादिक रहे लजाई। असुरादिक सो लीन्ह जाई।।
मदिरा पान करै सुख मानै। पुनि समुद्र को मथिवो ठानै।।

शब्द घोर समुद्रहि होई। निकसे जहर हलाहल सोई।।
विष की झार सबै मुरझाने। छाड़ि वासुकी नाग पराने।।
पुरुष अजीत कहो तब सब सो। जाई लै आवहु गौरापति कों।।
वै करि है विष अगीकारा। जोगी महाकाम जेन जारा।।
सुर असुर महादेव मनाए। जतन जतन कै तहँ लै आए।।
प्रभु अजीत तब विनती कीन्ही। बहुत बड़ाई रुद्रहि दीन्ही।।
तुम असुरादिक पशुपति राजा। ब्रह्म सिद्ध को सारहू काजा।।
आज्ञा देहु मो कीजै स्वामी। आदि मधि अन्त तुम हौ नामी।।
करहू हलाहल अंगीकारा। तुम बिन नहीं बनत उपचारा।।
महादेव अंजुरी भरि लीन्हा। हरि के कहे पान तिन कीन्हा।।
पान करत भू माह गिरो जो। पीछी सर्पादिक पायो सो।।
तब लगि लागे मंथन समुद्रहि। लहरि मूर्छा आई तहँ रुद्रहि।।
सुधि बुधि बिसरी अग्नि उठी जब। निकसो चाँद सीश दीन्हो तब।।
सशि विष लए रुद्र दुख नासन। गए कैलास जहाँ हर आसन।।
पुनि अजीत प्रभु मंथन करायो। धनिवंतर अमृत ले आयो।।

तीजे अंस कला भयो धनिवंतर अवतार।
वैद राज औषधि पति खण्डन मृत्यु विकार।।
सतो पुरुष हरि व्यापिक घट औ अघट समान।
लीला हरि औतार की कही मलूक बखानि।।

नाम कवित्त छप्पय

धनवतर आयुर्वेद गर्भ वैदराज औषधि पति निधि।
द्विजप्रिय: जग्योनित्यामृत करो सूर्जारिध्वनः तत सिधि।।
सुरा जीव दक्षिणेशो गुणि: छिण मूर्ध्वापद शार्क विधि।
अकाल मिर्तु निवर्तक कला अंस औतार स्फुर्दजुक्ति विधि।।
विस्वार्था सेष रुद्रार्थ श्रीहरि उदध्यायत्मज जगद्वर:।
कहै मलूक नाम भगवत सेषांग रुधा पिताम्बर मोहनी कला।।

कला रूप मोहिनी को हरि कीन्हो औतार।
सो चरित्र अब वरनउ सुनो सामिक परकार।।

धनवंतर अमृत ले आए। अमृत देखी असुर सब धाए।।
कर तें भाजन लियो छिनाई। सबै दैत मिलि चले पराई।।
सुर मुनि उठि सब पाछे धाये। तब अजीत सुरपति समुझाए।।
अब मैं काज तुम्हारो सारौ। अमृत ले तुम्हारे मुख डारो।।
धरो अजीत मोहिनी रूपा। को वरनि हरि अंग अनूपा।।
एक काम की उपमाँ नाहि। कोटि काम तेहि देखीं लजाहीं।।
देव दैत सब मोहित भए। कामिक रूप ज्ञान सब गए।।
तेंऊ तेंऊ अंग सुभाउ दिखावे। इन्द्र असुर कों काम डोलावे।।
इन्द्र कहैं हमरे संग आवहु। इन्द्र लोक की सब सुख पावहु।।
रूखी बात कह सुरपति सों। करि कटाक्ष हरि लेई देत को।।
दैत कहें हम तें मति डरपो। हम तन मन धन तुमको अरपो।।
हमरी दिग आवहु क्रिया करी। मानहि तुमरो कहा जन्म भरी।।

हंसि बोली तब मोहनी जानत हैं हम तोहि।
माया रूप कपट करि कहत सबै मिलि मोहि।।
जौं पै साँची कहत हौं अमृत हमकों देहि।
जो हम कहे सो मानिए संग हमारो लेहि।।
दैत्य राज मोहिनी के अमृत दीन्हो हाथ।
जेहि तुम देहु सो पावही करहु हमारो साथ।।
अमृत लियो मोहनी सब सों कही सुनाई।
भाग आपनो लेहु सब सुर असुरादिक आई।।
दैत्य राज वैलोचन सुरपति इन्द्र बोलाई।
सर्प वासुकी सुर असुर बैठे पाँति बनाई।।

अमृत हाथ मोहनी सौहे। दैत्य राज असुरन को मोहै।।
अजित मोहनी असुर हरो जब। कपट रूप भाजन कीन्हो तब।।

कला रूप देवन तब देखा। सुर सो मगन चले विशेषा।।
चले नछत्र जानि अमृत कहँ। केतु कपट करि आयो तन महँ।।
देव रूप करि आए सोई। केतु दैत्य लखै नहीं कोई।।
अजित मोहनी बांटै अंब्रित। कोई न लखै माया नटवर क्रित।।

रूप मोहनी करि लीला ठानी जानि।
देवन मुख अंब्रित परै करै असुर मद पानि।।

बांटत अंब्रित तहँ चलि जाई। केतु दैत जहँ बैठो आई।।
चक्र सुदरसों प्रभु कहई। दुइ टुका होई धरती रहई।।
सब अंब्रित देवन कह दीन्हा। अंब्रित भन रीतो कीन्हा।।
तनक निचोइ केतु मुख डारा। समुद्र माह भाजन हि पवारा।।
अंब्रित दै दुई देह जीवाई। राहु केतु दैत दुई भाई।।
भई मोहनी अन्तरध्याना। माया रूप असर तब जाना।।

सभा उठि अजित की स्वर्गन मंगलचार।
असुरादिक पसुपति सों कीन्हीं जाई पुकार।।

अहो रुद्र अजित छल कीन्हाँ। अंब्रित सब देवन कहँ दीन्हाँ।।
माया रूप असुर सब मोहा। दैत जानि हरि कीन्हो द्रोहा।।
तब रुद्रहि बाढ़ो अभिमाना। कपट रूप अजित कहं जाना।।
महादेव चलि आए तहाँ। सभा अजित की बैठी जहाँ।।
उठि अजित प्रभु आदर कीन्हाँ। टारि सिंहासन बैठक दीन्हाँ।।
सिव तमोगुन बैठै नाँही। इन्द्रीजित आया मन माँही।।
सुनहु अजित पुरुष परधाना। काहे झूठ करहू सनमाना।।
कौन सरूप मोहनी कीन्हा। जाते असुरन कों हरि लीन्हा।।
रूप मोहनी को तुम करहू। हम देखैं कैसें मन हरहू।।
कहै अजीत हम आज्ञाकारी। तुम सिव सुर असुर मैं हारी।।
हम सदा रहै आसरे तुम्हारे। भगतिन छांडि न ठौर हमारे।।

विनति करि शिव को भरमायो। रूप मोहनी अजित बनायो।।
अजित सरूप रुद्र के सन्मुख। दुतीय देह माया करी पुरुष।।
बाँई दिस सिव हेराँ जबहिं। त्रिया मोहनी देखि तबहि।।
देखत पाँच काम सर लागे। जेउ दामिनी धरनी लगी जागे।।
मोहित होई ता पाछे चले। ब्रह्मा कहो भले जी भले।।

महादेव लज्या तजि हरो मोहनी प्रान।
का जानै कामिक गति ऊँच नीच भगवान।।

सकुच मिटी पुनि गयो ज्ञान बल। पाछे चले रुद्र मन अकल विकल।।
खिन सुभा तें निकटही आवै। चंचल होई सिव ते छुटुकावै।।
तेंऊ तेंऊ विकल होई जाँही। पुनि अजित प्रदेहि धराँई।।
महादेव पकरै त छल कै। छूटि जाहि सुभाव ते बल कै।।
डोलो अनंग रुद्र भै बौरे। उठि माया के पाछें दौरे।।
जेहि जेहि ओर मोहनी जाई। तहाँ तहाँ महादेव भरमाई।।
गिरेउ अनंग चारिहूँ ओरा। सुनहु अग नाम के ठौरा।।
उत्तर गिरो सो पारा ब्रह्मन। दछिन पारा छत्री कर्मन।।
पूर्व वैस्य पछिम दिस सुद्र। परा नाम बीजे है रुद्र।।
लजित भए काम जब गएउ। पुरुष अजित चतुर्भुज भएउ।।
महादेव तब विनति कीन्हीं। तब ही सिव परकर्मा दीन्ही।।
मैं अजान प्रभु मर्म न जाना। तुम्हिन चीन्हेउ श्री भगवाना।।
पुरुष अजीत वहि समुझावा। ग्यान द्रिष्टी हरि सिवहि बुझावा।।
हमै ब्रह्म हम माया आहिं। भगतन को कछु लागै नाहिं।।
दीयो सन्तोष रुद्र कों जबहिं। अन्तरध्यान भए हरि तबहिं।।

हरि की माया जग ठगै ब्रह्मा विस्न महेश।
सो अजीत प्रभु आपुही धरो मोहनी भेस।।
प्रक्रित पुरुष त्रिगुनात्म एकै अक्षर माहिं।
कहै मलक अपरंपार आपुहि करहि कराहिं।।

नाम कवित्त छप्पय

सर्व श्रेयः पतिर्दर्व्यदर्को सर्व श्री रतन दर्पहा।
माया भया पह श्री हरि उर्वसी सर्व दैत्यं दर्पहा।।
कृर्त्यज्ञः जोगिनी ग्रसित गिरजा जोगिनी चक्र गुहिजेसः।
सर्व देवता दुर्गे माया निधि निर्ध्यभूषण भूषितः।।
गौरी सो भाज्ञ दो रुद्र चंडी हंतारीः कंदर्पः।
सक्र दिव्य मोह रुपदः सर्व लक्षण लक्षजः।।

नरसिंघ औतार

सनकादिक ब्रह्मा के पूत। भगत आदि जोगी अवधूत।।
हरि दरसन को मनसा धारी। विस्न धाम आए तपचारी।।
भीतर पवरि चरण जब दीन्हा। जै अरु विजै रोकि तब लीन्हा।।
होहु असुर तुम श्राप दीन्हा मुनि। क्रिपा सिंधु उठि आए तेहि सुनि।।
देखत ही मुनि लजित भए। जानि अवज्ञा बिस्मै गए।।
होनी भई सोच मति मानहूँ। यह सब हमरी अग्या जानहूँ।।
केंऊ अपमान भगत का कीन्हा। होई प्रतिहार सन्तनहि चीन्हा।।
देत्य राज दुई जनम भये सो। तीजै जन्म हरिनकसप सो।।
होई है मुक्ति न फिर संसारा। संत वचन श्रुति नित संसारा।।

विजै पारखित विस्न को धरि आयो सो देह।
सुर असुरादिक वसि कीए बंधु विरोध सनेह।।

करी तपेसा वर्ष सहस दस। ब्रह्मा ताके भए प्रीति वसि।।
दीन्हो छोड़ि अन्न अरु पानी। रुधिर मास अरु तुचा सुखानी।।
रहो प्रान हाड़ में आई। ब्रह्मा तहाँ वेगि चलि जाई।।
मागु मागु कही ब्रह्मा तब। बोलै नहीं म्रितुक इन्द्री सब।।

सीचरे जल रक्षा करी उठौ दैत अकुलाई।
इच्छा अपनी माँगिए तैसी होई सहाई

हे पितु मोहि दिजिए सोई। मोहि समान कोई बलि न होई।।
तीन लोक मो तें भै करई। सृष्टि तुम्हारी मो तें डरई।।
अंत्र मंत्र कछु लागै नाँही। सबै तेज आवै मो माँही।।
अग्नि पवन जल थल वसि करौं। रैन दिवस कबहूँ नहिं मरौं।।
होउ होउ अस आसि देई। ब्रह्मा कहिए तत छिन भई।।
हरिनकसि तप तेज बढ़ावा। गाई ब्राह्मण बहुत सतावा।।
तीन लोक कीन्हे अपने बस। तेज पाई बाढ़ो हरिनाकस।।
बन्धु विरोध समुझि पछतावा। राम क्रिस्न भै कहूँ न पावा।।
होई बराह मारे मम भाई। करि विरोध बैकुण्ठहि जाई।।
भगत बछल प्रभु तहाँ न पाए। मन पछतात तहाँ ते आए।।

बैर भाऊ की प्रीति।। सोय पाइ पलँगा परो
जेंउ जोगिहि हठि प्रीति।। प्राण तजै कै देखइ

चारि जाम निस जगत गएउ। तब मन में विचार एक भएउ।।
सब घट व्यापिक जेहि सब कहई। ब्रह्मा कीन्हों ताकर अहई।।
ताको होंउ जाई दु:खदायी। सो मम वैरी देइ देखाई।।
ततछिन उठि ब्रह्मा पे आवा। तन गर्वित नहिं शीश नवावा।।
उठि ब्रह्मा तब आदर करई। हरिनाकसिप अस वचन उचरई।।
जा कारण तुम सों वर माँगा। सो उपचार न एको जागा।।
जगत पिता तुम तुव पितु जोई। तुम जानत मम बैरी सोई।।
खण्ड ब्रह्माण्ड ढूँढ़ी सब आयो। बंधु विरोधि कहूँ न पायो।।
तुव नासा तें भयो बराहा। हरिनाछहि मारो ओगाहा।।
मेरे सनमुख ताहि बोलावहुँ। मम इच्छा ते युद्धि करावहु।।

कै मेरे सनमुख करहु कै छाड़हु ब्रह्मंड।
जा कारण मैं ढूँढ़िया भवन चतुर्दश खंड।।

तब ब्रह्मा मन में बिलखाई। दियो सबहि बल कछु न बसाई।।
अहो देव राखो मोहि लेहु। दैत कुमति कह दर्शन देहु।।
बानी लै ब्रह्म तब बोले। तम गुण होई अंतर पट खोले।।
करहु अखेटक निति प्रति जाई। श्री गोपाल तोहि मिलिहै आई।।
मानि वचन घर अपने आयो। जागत सोवत सोच बढ़ायो।।
नित उठि जाई अख ककरई। हृदय तें मन ध्यान न टरई।।
कबहि मिलै मारौं कै मरौं। करि विरोध कारज सब करौं।।
बैर भाउ बाढ़ी परतीती। विलवै को हरि कीन्हीं रीती।।
करत अखेटक महाऊ ध्याना। दरसन दीन्हों श्री भगवाना।।
देखि चतुर्भुज पाछे धाँयो। सूर सुभट सब संग लगायो।।

सांति गति तजाँहि।। खोजत मुनि नहि पाँवहीं
कैसें भेंटै ताहि।। जौ छल करि भाजै हरि

दैत जानि कीन्हों माया रस। पाछें लाई लीयो हरिनाकस।।
सूर सुभट सब पाछें रहे। हरिनाकस संग हरि गहै।।
थाको असुर कहो तब क्रिसनुहि। भाजौ जात लाज नहि विसनुहि।।
हरि बोले तूं छत्री नाँही। मैं अकेल घेर तब माँहि।।
बाधें अत्र तूरी चढ़ि धावत। हम शिशु पाई पियादे जावत।।
हरि के कहै लाज जिय आई। अत्र तूरी तजि पाछें जाई।।
छल करि भाजै पुनहि मुरारी। पाछें असुर चलो प्रचारी।।
योजन एक भगि हरि गए। असुरहि बहुत परीश्रम भए।।
मन पछताइ असुर अस कहो। विस्नु तुमहि लज्या नहिं अहई।।
छोडो अश्व अत्र बिसराने। तऊ विस्नु तुम जात पराने।।
वचन आपने का पति धरहु। सनमुख होई कस जुधि न करहु।।
तब सनमुख होई भिरे मुरारी। माल जुधि कीन्हो परचारी।।
बल कै गिरै भिरै भूँइ परई। भुजा ठोकि पुनि पुनि हरि लरई।।
करत जुधि सत बरख सिरानौ। हरि बल ते बल असुर बधानौ।।
मल्ल कला करि भजै मुरारी। गहो असुर तब भरि अकवारी।।

बल करि हरि लै चलै असुर कहँ। छल कै जाइ परे समुदहं महँ।।
अब कह जाहु असुर अस भाखा। तीन लोक मैं बसि करि राखा।।

माया रूप कियो हरि असुर विसम होई जाई।
कामिक रूप दैत कै घट में गए समाई।।

अंतरध्यान भए हरि जबहिं। कामिक रूप असुर भए तबहिं।।
सुरति भुलानी बाढ़ो कामा। चला असुर फिरि अपने धामा।।
रैन समै क्रिड़ा उपजाई। रानी सो रति रहस बढ़ाई।।
करि संजोग बहुत सुख माना। राज काजउ करेऊ विहाना।।

गर्भ रहो रानी के भयो मनहि अहलाद।
तैत संघारन करने भगवत गति प्रहलाद।।

असुर प्रात उठि रहो विचारी। मो तें छूटि गयो बनवारी।।
ब्रह्मा के वचनन तें पायो। अपने वसि करि ताहि गँवायो।।
बहुरि गयो ब्रह्मा के आसन। तम गुन देत दिखावत त्रासन।।
एक बार तेहि फरि मिलावहु। वाचा की परतीती बढ़ावहु।।
ब्रह्मा ध्यान ब्रह्म को कीन्हो। श्री गोपाल तब सबदहि दीन्हो।।
छठए वर्ष आई तन धरौं। असुरहि मारि भगत हित करौं।।
जब ब्रह्मा हरि बानी पाई। हरिनाकसिप सों कहा बुझाई।।
छाडहु छोभ जाहु घर अपने। करहु सोचव जिनि जागत सपने।।
छठए वर्ष तोहि सो लरिहै। इच्छा तेरी पूरन करिहै।।
वचन पाई अपने घर आयो। राजनीत मंगलहि करायो।।
सुनहु कथा हरिनाकुशवंश। नारी गर्भ भागवत अंश।।
पूजो पचवाँसा सतवाँसा। पूरन भयो आई दसमासा।।
भगत वछल एक बुद्धि उपाई। नारद मुनि को दीयो पठाई।।
जन प्रहलाद मोर जन आही। गर्भ माह उपदेसहु ताही।।
ताके हेत देह धरि अैहों। मारि असुर मैं जसहि बढ़ैहों।।

अग्या लै नारद तहँ जाँही। औंधे मुख प्रहलाद जहाँही।।
गर्भ घोर बालक तहँ रहई। राम नाम निस वासन कहई।।
नारद हाथ माथ पर दीना। ब्रह्मनि रूप सिसु-सा कीन्हा।।
एक पुरुष सब घट ही समाना। हे सुत जानि भजहु भगवाना।।
पाँच ततु गुण तीनि उपावा। जीव अंस तेहि माँह समावा।।
पुरुष शब्द तें कीन्ह पसारा। सब के माँह सबन तें न्यारा।।
जीव सनेह रहत घट घट हरि। ऐसो जानि भजौ हृदये धरि।।
एक पुरुष की आसा करहु। जातें भवसागर कह तरहूँ।।

वेद पुरान शास्त्र पूजा क्रिय आचार।
एक पुरुष के आसरे तजिए सब वेवहार।।

एक बिना परपंच सब जानहुँ। मन बुधि चित माया छल जानहुँ।।
मन वचन कर्म हमरी गति लेहू। तन मन अर्पित किश्न कह देहू।।
इतनी कहि नारद गै जबहिं। अस भागवत जनमेऊँ तबहिं।।
वरनि सकै को कला ब्रह्म की। भगवत लीला जन्म कर्म की।।
देस काल कुल को जस पारा। दैत करावै कौतुक हारा।।
खेलत खात बहुत दिन गए। पाँच बरिस प्रहलादहि भए।।
एक दिन गए पिता के गोदा। राजै जानि कियो परमोदा।।
खेलत खात गई लरिकाई। अस्त्र शस्त्र कछु सीखई जाई।।
पंडा पर कहँ लियो बोलाई। राजनीति कछु सिखवहु जाई।।
लै पांडे चटसारहि आयो। वोनमें सिधिम ताहि पढ़ायो।।
वचन मानि माथ धरि लीन्हौ। चित वित राम नाम कह दीन्हा।।
आपु जपैं चटियन सों कहै। पांडे सुनि चकित होई रहै।।
अंस कहाँ को कहाँ सो आयो। बहुरि फेरि प्रह्लाद सिखायो।।
कुल वैवहार मति कछु धरह। अस्त्र शस्त्र विद्या पढ़ि करहू।।
तुम विद्या गुर हमरे अहहू। सार पढ़ाई कहा अब कहहू।।
यातें ततु और कछु होई । सुक्रित जानि पढ़ावहु सोई।।
यह सुनि पांडे रहे लजाई। गति विपरीति लखी नहिं जाई।।

संग लिए प्रह्लाद को गयो राज दरबार।
हमरी सिखए ना करै युक्ति राम आधार।।

प्रह्लादहि पूछै तब राजा। कहा पढ़े तुम कुलके काजा।।
कुल वैवहार लोक की रीति। सबहिं तजै राम की प्रीति।।
इतनी सुनि राजा पर जरई। मम बैरी का नाम उचरई।।
प्रगटो आई दूत यह कोई। सुत में वंस अग्नि समुद मह डारहू।।
अनल चहुँ दिस ते पर जारो। विष हलाहल दैके मारो।।
कौन शक्ति मो सों सुत कहहू। प्रलै अग्नि ते कैसें रहहू।।
कहै प्रह्लाद सुनो हरिनाकुस। देव असुर गावत जाको जस।।
जीव अधम कैसें कै जानै। माया गर्वित नहीं पहिचानै।।
जोन शक्ति तें ब्रह्मा राजा। जा ते सिव जोगी के साजा।।
जा तें पोषन मरन विस्न को। सो मम हृदय नाम क्रिसन को।।
कहै दैत सुनु वचन हमारो। मम बैरी है हिदै तुम्हारो।।
सकल जतन करि करि सब हारे। राम नाम प्रह्लाद उबारे।।
अपनो इस्ट देखावहु मोको। ना तरु आज हनहों तोको।।

बांधों खंभलाइग कै लीन्हों खड्ग निकारि।
सनमुख भयो दैत तब प्रह्लादहि झिझिकारि।।
फटो खंभ अरराइकै भए नरसिंह मुरारि।
कोटि वज्र सम बलहियो हनो असुर परिचारि।।
ब्रह्म रुद्र अरू लछमी जिय बाढ़ो विषमाद।
दैत भयो पुनि पारखित इन्द्र भये प्रह्लाद।।
मूल असथान देस जहँ कीन्हों नर हरि रूप।
दास मलूका वरनै भगवत कला अनूप।।

हंस औतार लीला

बहुरि कथा अनूप एक भई।। हंस रूप होई सिछा दई
तप आसन ब्रह्म बैठे जहँ।। सनक सनंदन चलि आये तहँ

पूछों बात विधाताहि एक। ब्रह्म चित में कह विवेक।।
अक्षर तर्क वेद कहि भाखो। इन्द्री मनहि भेद कहा राखो।।
पुरुष प्रक्रिति भेद कहि वरने। कहौ जगत पति याके निरनै।।
पूछो सनकादिक उपदेसा। ब्रह्मा चित्त मह बड़ो अंदेसा।।
ब्रह्मा हरि पे बिनती लाई। हे गोपाल मोहि देई बड़ाई।।
एहि औसर अब राखु बड़ाई। तत विभागहि देहू बताई।।
भयो सोच ब्रह्मा के जबहि। हंस रूप हरि आए तबहि।।
उठि ब्रह्मा तब अह सिख दीन्हा। सनक सनन्दन दण्डवत कीन्हा।।
परमहंस दया करि बोले। कहि उपदेश धर्म सब खोले।।
विधि निषेद हमरे कछु नाँहि। हमरी सत्यांत सब आँहि।।
हमहीं पुरुष शक्ति मम इच्छा। ब्रह्मा चित्त परगास परीछा।।
मन गुन इन्द्री बीज हमारा। हम तें होत सकल संसारा।।
महा जोगेश्वर तुम कछु कहहू। हे मुनि तुम कौने आस में रहहू।।
परम हंस यह कही समुझाई। सनक सनन्द रहे सिर नाई।।
ब्रह्मा मगन भए मन माँही। जाके हरि ताकै भै नाँही।।

विषम भए सनकादिक अन्तरगतिहि लजाई।
कहै मलूक हंस हरि भेद कहो समुझाई।।
एकहि अछर तें सकल प्रक्रित पुरुष विस्तार।
कहि मलूक बहु विधि जगत नामहिनि निस्तार।।

गज मोचन लीला

कर्ता औतार कोई जन हित देह धरि।।
क्रिस्न अनादि पुरुष सुमिरन वन्दन हृदयै धरि।।
गुरु गोबिन्द के चरन कमल ध्यायो मन वचन करि।।

सब साधन की क्रिया तें भगवत भाउ उपाई।
लीला हरि गज मोचन की कछु भाषा वरनो गाई।।

इंद्र दवन राजा पुनीत कहियत बड़भागी।
धर्म नीति रीति देवादै देइ त्यागी।।

राजा प्रात समय की पूजा कीन्ही विविध बनाई।
तेहि औसर नारद रिषि आए नहि आदरेउ बोलाई।।
तबही मुनि हंसि कही राज अभिमान बढ़ायो।
गुरमुख भगति कमाई माधु संग मन नहि लायो।।
ताते तुम काया गईद की धरहु वेगि वन जाई।
संकट मोचन धरि सरूप हरि दरस दै है आई।।
हे मुनि सेवा करत कहा अपना छल गए भुलायो।
अवि गति चरित तुम्हारि देव कछु जानि न पायो।।
अजहूँ क्रिपा किजिए मेटहु भरम संदेह।
जनम मरन जाते छुटै सो कहिए राम स्नेह।।
सुनु न्रिप हरि की नीति आत्म अर्पन करिए।
कृत्रिम पूजा छोड़ि साधु संगति मन धरिए।।
साधु अनुग्रह पाइकै भजिए हरिहि अनन्य।
सब देवन के देवन दयानिध तबहि होहि प्रसन्न।।
यह कहि नारद देव सरोवर तट चलि आए।
संध्या साधन निमित पैठि जल माह अन्हाए।।
मानसिक पूजा करि मुनि रहे जो ध्यान लगाई।
जल क्रीड़ा गंधर्व हतो वोन गहो हासि मिस पायी।।
ग्राह ग्राह मुनि कहो बहुत मन तें पछताए।
छूटो चित्त ते ध्यान ग्राह धोखे तट आए।।
तब गन्धर्व विनती करी छमहुँ हमारे दोष।
चरण तुम्हारे गहे हास मिसु करहु क्रिपा कै मोष।।
गुरु गोविन्द ते हे अग्यान यह रीति अनैमी।
पूजा करवै जोग ताही सो हासी कैसी।।
ता तें अपनी चूक तें धरहू ग्राह को देह।
समै पाई गति होई तुम्हारी गज मोचन के नेह।।

करि चरित्र ऋषि देव तुरित बैकुंठहि गएउ।
गंधर्व सरोवर माह ग्राह पुनि तबहीं भएउ।।
सागर तट त्रिकूट परवत पर तहाँ गजइन्द्र को धाम।
दस सहस्त्र गज जूथ संग ता बनहि करत विश्राम।।
अैरापति तैं बली गज इन्द्र बनहि बन चरई।
ग्राह सरोवर मधि जीव गहि भोजन करई।।
घाम तपत व्याकुल भयो गयो सरोवर माह।
पायो नृप विश्राम तहाँ गुल्म लता की छाँह।।
सब परिवार सहित सीतल जल क्रीड़ा कीन्हीं।
पर्वत नाम त्रिकूट धाम की सुधि तब लीन्हीं।।
तेहि छिन ग्राह गजइन्द्र को गहो आई कै पाई।
हाथिन की सैना डरि भाजी सुत कलत्र गहो आई।।
बहुतक दिन गजराज जुधि अति करि महा बल।
कबहूँ ग्राह गज थलहि कबहूँ गज ग्राह मधि जल।।
जुधि होत गजराज कों बीते वर्ष हजार।
पुत्र कलत्र सबै तजि भाजे तब नृप मानी हारि।।
भयो छीन गज दीन तबै सुधि हरि की आई।
क्रिस्न कहन की प्रीति सुंड जल माह उठाई।।
नाम कह न पायो नहीं हरि सुंड हरि चले गुरुर बिसराई।
मानौ गज की श्वाँस ते प्रगट भए जदुराई।।
रूप चतुर्भुज कला धारि गज मोचन कीन्हों।
फारी ग्राह मुख मारी ताहि गंधर्व पद दीन्हों।।
हरि के जनम कर्म गुन गावत होत ब्रह्म परगास।
संकट निकट न आवई कहत मलूका दास।।

नाम कवित्त छप्पय

कला रूप औतार अंस निमित्त कारण नित घट गज मोचन।
मनसा अग्र चक्र धारी भै हारी हरि कमल पत्र लोचन।।
करुणा कर कारण कर स्वस्तक धर अंकुस धर ब्रिंचिज रक्षा कर।
गुप्त प्रगट इन्द्रीधर श्रीधर हरव इन्द्री एक नवोतत धर।।

मनधर चित्त धर बुद्धि धर कहै मलूक धारें धरा।
प्रकृत धर पंचादश तत पर अविनासी अपरंपरा।।

बावन औतार

बहुरि सुनहुँ बावन औतार। बलि के छलवे को उपचार।।
कश्यप पतिनी नाम अदिति। बर्त बतायो ताहि पुत्रहिति।।
पति के कहे वर्त तिन कीन्हा। ताहि गर्भ तन बावन लीन्हा।।
रूप अनूप वरनि नहि जाई। जाहि देखि कामादि लजाई।।

बावन कर पल्लव सम काया तातें बावन नाम।
जेहि सुमिरें पावन जगत सो कश्यप के धाम।।
कारन बावन रूप को सुनहूँ सम्यक परकार।
पठयो बलि पाताल छलि आपु भए प्रतिहार।।

बैलो वैलोचन प्रह्लाद तनै जो। ताको पुत्र कहावत बलि सो।।
धर्म नीति बलि अति अधिकारी। जाके जाचक भए मुरारी।।
बलि राजा को सब कोई जानै। इन्द्रादिक जाको भै मानै।।
पृथ्वी सकल जीति कै लई। इन्द्र लोक की इच्छा भई।।
भृगु सों बैठि मतो तब कीन्हाँ। करहू जग्य भृगु यह मत दीन्हाँ।।
एक घाटि सो जग्य कराए। पुनि भृगु जग्य अरम्भ रचाए।।
पूरन होई जग्य सौ जबहि। इन्द्रासन हिलेई सो तबहि।।
यह सुनि जाचक माँगन जाँहि। जो मांगै पावै बलि पाँहि।।
कसिप ग्रेह बावन औतारी। जाचक भिसु होई चले मुरारी।।

जग्य पुरुष असरनि सरनि कीन्हो बावन रूप।
ब्रह्मचर्ज बलि ग्रेह गए बोलत वचन अनूप।।

मृग छाला कटि काँध जनेउ। चले छलन देवन के देऊ।।
कुस मुंदरी अरु हाथ कमडल। जाके चलत हलै महि मंडल ।।

सब विद्या धुनि मुख उचारा। वेद पढ़त आए बलि द्वारा।।
वदन प्रसंनि देखि मन माना। स्त्री सहित चरन लपटाना।।
सुफल भयो यह जगय हमारा। करि कृपा मम ग्रह पगु धारा।।
हरि कीन्हो माया उपचारा। राजहि बढ़यो धर्म अहंकारा।।
तब बलि कहै मागु मो पाँही। दया तुम्हारी सब ग्रह माँही।।
हे राजा एतना जस लेहू। साढ़े तीन पग भुई देहू।।
अति सुन्दर विद्‌या अधिकारी। एतने कों कहा भए भिखारी।।
तब बावन बलि सों हंसिस कहई। बिनु सन्तोष दुखी जग अहई।।
जौ सन्तोष हृदये जों आवै। तौ थौरे ही में संच पावै।।
संतोष बिना भटके बहु राजा। अत सरे नहि एको काजा।।

प्रिथिवी साढ़े तीनि पग याही में सब काम।
करि संकल्प देहु त्रिप जहाँ करौं विश्राम।।

तब नृप हँसि कै वदन निहारा। सुक्र विप्र सुनि मनहि विचारा।।
राजा हमारो वचन सुनीजै। पाछें हमहि दोष नहि दीजै।।
एन की गति कोई नहिं जानै। ब्राह्म रुद्र सिव एन को मानै।।
तुम कों छलि पाताल पठैहैं। निर्भय राज इन्द्र को दैहैं।।
यह सुनि कै बलि वचन उचारा। जौ ए हरि है तौ भाग हमारा।।
ऐसों समै बहुरि कब पैहों। सर्व दै प्रण आन न दैहों।।
देन लगे संकल्पि पृथ्वी जब। सुक्र परोहित छल कीन्हो तब।।
शुक्र दैत गुरु माया धारी। पैठा जाई अग्रमुख द्वारी।।
बलि लागे संकल्प करावन। जल नहि गिरै लखो तब बावन।।
शुक्र विप्र दाया कीन्ही। बुधिहीन मम गति नहीं चीन्ही।।
मारेऊ दाभि चछु गया फूटी। जल धार टोटीं तें छूटी।।
लै पानी संकल्प करायो। बावन तन वैराट बढ़ायो।।
देह बढ़ई हरि बावन जबहि। एक चरन मृत्युलोक किया सबहिं।।
दूजो पग आकाश गयो जब। ब्रह्मा चरन पखारो सुचि तब।।

विस्न चरनामृत गंगा भाई। त्रियपथ गामिनी नाम कहाई।
तीजें चरन पतालहि साधो। तेहि उपरात बलिहि छलि बाँधो।
मापि देहु पग आधो हमारो। अब देखौं पुरुषार्थ तुम्हारो।
अब हरि मापि लेहु मम देहा। कीन्हों जग्य तुम्हारे नेहा।

भए प्रसनि मुरारी। अग्या दीन्ह माँगु कछु।।
सदा रहो मम द्वारी। नित प्रति दरसन पाइए।।
पूरन पुरुष परधान। वैर मित्र सम जहि के।।
सब विधि करत प्रवान। अपनो जानि मलूक कहि।।

परसराम औतार

परसराम औतार विचार। पृथ्वी नछत्र करन उपचार।।
रिसी जमदग्नि पिता को नाम। नाम रैनुका ताके वाम।।
परसराम तेहि पुत्र कहावत। हरि औतार वेद कहि गावत।।
लघु भ्राता संग खेलत फिरही। रिसी सेवा को तत्पर रहही।।
भावी पाई कथा एक भई। रिषि दासी कों अग्या दई।।
जल ल्याबहु षट कर्म कराहिं। तबै रेनुका सरवर जाहिं।।
जल क्रीडत गंधर्व देखु जब। भई विमोहित रिषि पत्नी तब।।
समै क्रिया की गई सिराई। तबै रैनुका जल लै आई।।
मनसा भाव लखो रिषि तबहि। दासी आवत देख जब ही।।
तब लघु पुत्रहि अग्या दीन्ही। सीस मातु को आनहु छीनी।।
कहि तात सन तब सुत बाता। यह नहि होई हमते अपघाता।।
परसराम पितु अग्याकारी। तेहि अवसर आए फरसा धारी।।

तब रिषी कहो बोलाई कै करहु पुत्र यह काजु।
माता भ्रात दोउ कहाँ इत छिन मारहु आजु।।
वचन सुनो जब तात को परसा लीन्हों हाथ।
सकुच कछू नहि कीन्हीं हनो दुवहु को माथ।।

रिषी प्रसंनि भए मन माँही। माँगहु पुत्र कछु हम पाँही।।
परसराम तब विनती लाई। भ्राता माता देहु जीवाई।।
रिशी जमदग्नि दई आशीसा। दोउ जीए चरित्र जगदीशा।।
मात भ्रात संग सेवा करहीं। जो रिषी कहै सो मन में धरहीं।।
पुनि औसर एक ऐसो भयो। सहस्त्रबाहु रिषि आश्रम गयो।।
रिषि जमदग्नि दीयो अस्थाना। बन में कहा करिय सनमाना।।
तब रिषि मन में सोचि विचारा। एन को दीजै आजु अहारा।।
कामधेनु को सुमिरन कीन्हों। तत छिन इन्द्र पठैसो दीन्हों।।
कामधेनुरि आगे आईं। आज्ञा होई सो करे गोसाँई।।
रिसि राजा को भोजन दीन्हाँ। पाक रसोई को सब कीन्हाँ।।
व्यारि की सामग्री जो कछु। रिषि राजा को दीन्हों सो कछु।।
प्रात समै रीषि दियो कलेवा। सैना सहित करी सब सेवा।।
सहस्त्रबाहु मन भयो अचम्भा। बन में यह कैसी आरम्भा।।
खान-पान पकवान मिठाई। कैसे कै रिषि हम ही पठाई।।
दूत एक राजा सों कहई। कामधेनु एन के घर अहई।।
यह सुनि राजा आया तहाँ। रिषि जमदग्नि करे तप जहां।।
कामधेनु हम कों रिषि दीजै। तुम तपसी अतनो जस लीजै।।
को हम देनहार वैरागी। भोजन काज इन्द्र पें मागी।
बरबस गाई छोड़ाई मँगाई। घर को चला सैन संग लाई।
गाई कहै जौं अग्या पाऊँ। सैना मारि आपु मुक्ताऊँ।
तब रिषि बोले हम का कहही। जानि आत्मा दाया करही।
बरबस गाई छोराई मँगाई। अपने धाम चल ले गाई।
परसराम तें कहा बोलाई। कामधेनु दैत ले जाई।
हे सुत परुषार्थहि जनावहुँ। सैना मारि गाई ले आवहु।
पितु की आज्ञा जबहि पाई। देई हाक भृगुपति तहँ जाई।
मारौं सहस्त्रबाहु जीओ दल। दस सहस्र छोहनी महाबल।
परसुराम भुज बल मारे सब। गाई आनि इन्द्रहि दीन्हो तब।

रिषि जमदग्नि विचरी कै कीन्हों मन ही प्रबोध।
निज तन ते तप तेज बल बाहरे कीन्हों क्रोध।।

तीरथ परसराम तब कीन्हों। रिषि जमदग्नि ध्यान मन दीन्हाँ।।
दाहिनावर्त नीरथहि भरो। जहुरि पयान घर ही कोकरी।।
एक पुरुष अनन्त औतार। को जानै ताको वेवहार।।
भई कथा और प्रकार। पृथ्वी नछत्र करन उपचार।।
सहस्त्रबाहु सुत भयो सयानो। तात वध सुनि मन पछतानो।।
सैना लै आयो रीषि के घर। वैर भाउ मन में विरुध वर।।
माँगी जुधि रिषै सो आई। देहु जुधि जमदग्नि गोसाँई।।
तुम्हरे सुत मारो मम ताता। काटौ रिषै तुम्हारो माथा।।
रीषि जमदग्नि मौन मन साधी। क्षमावंत रीषि रहित उपाधि।।

आई क्रोध ठाढ़ो रीषि सनमुख धरि देह।
मेरो अंगिकार कै करहु सैन सब खेह।।

तेरो अगीकार न करऊँ। मरन काल अब काहे डरऊँ।।
रिषि जमदग्नि को क्रोध कर लीन्हा। सहस्त्रबाहु सुत माथो छीना।।
दुष्ट कर्म करिय जोराई। हरि हरि करत रेणुका धाई।।
महा सोक कछु कहिए न जाही। कोऊ तेहि छिन भयो न सहाई।।

सुमिरन कीन्हों राम को विकल रेणुका माई।
परसुराम भ्रात सहित तत छिन पहुँचे आई।।

परसुराम लखी अविगति रीति। माता करहु करम की नीति।।
होनहार हो कौन मिटावे। देह धरे को यह सुभावै।।
तब रेणुका प्रण कर बोली। हे सुत तुम तें माँगो ओली।।
रुधिर ताहि के माछ नहाऊँ। हे सुत तुम ते करम कराऊँ।।
कै मम गति करि तात जिवावहु। कै माहु को मारि सिरावहु।

उठो क्रोध सुनि वचन मातु कै। आस्त्र बान धनु लीयो हाथ कै।।
मातु वचन प्रति पालन कारण। प्रण कीन्हों क्षत्री सघारन।।
महिषावती पर वेष कर तंही। परसराम हाको नृप तबंही।।
फिरो नृपति छत्री लजा धरि। परसराम मारो सबही अरि।।।
छत्री मारो मातु बोध कें। कीन्हीं प्रथिवी निछत्रि क्रोध तें।।
सात सरोवर रुधिर भर आए। मात भ्रात संग तहाँ नहाए।।
राम कुंड करि तर्पण कीन्हा। प्रगट नाम कुरुखेतहि दीना।।
बीस बार निहछत्र करि महि। तात जीवाए परसराम कहि।।
एकीस बार बहुरि फिरि करि है। एकीस बार निछत्री करि है।।

तात जीयो वचन तें कियो जग्य आरम्भ।
प्रीथ्वी मांगी लीन्हीं सबै कसिपि रिषि अस्थम्भ।।
एहि विधि परसराम को हरि कीन्हो औतार।
कहै मलूक अविगति कथा बरनै कौन प्रकार।।

श्री राम औतार लीला

नगर अयोध्या दशरथ राजा। कीन्हो जग्य पुरुष के काजा।।
गुरु वशिष्ट आदिक रिष आए। तेन के अधिकारी सिंगी रिष भाए।।
स्याम वरन एक अश्व मँगावा। सोन पत्र तेहि शीश बँधावा।।
तापर आनि लिखि सींगी रिष। सब कोई मानो हमारी सिख।।

सुरपुर नरपुर नागपुर अश्व फिरो तिहुँ लोक।
अस्त्राधर शस्त्राधर विषधर कोई न राखन जोग।।

आए नृपति अश्व के पाछें। जग्य आरंभ की रीषि आछे।।
प्रथम जग्य कीन्हो सींगी रिषि। पुनि रिषि होमन लागे आमिष।।
अमिल संब कपूर की बासा। उठऊ गंध सुरलोक नेवासा।।
पूरो जग्य किया रिषि जबहिं। भाग लेन आये सब तबहिं।।

जग्य पुरुष वेदी तें निकसे। उदित वदन जनु पंकज विकसे।।
तन धन स्याम वावरी सीस। ब्रह्मा विष्णु रुद्र के ईश।।
सिषा सुत्र भ्रिग आसन काँधे। मँज जेवरी कटि पर बाँधे।।
विधवत द्वादश तिलक बनाए। वैजन्ती माला उर नाए।।
कनकथा उर लीन्हे ओंही। जौ कै खीर सद्य ता माँही।।
निकसि अग्नि ते दरसन दीन्हा। सींगी रिषि के आगे कीन्हा।।
सब रिषिराज परनाम जो कीन्हा। सींगी रिषि अस्तुति कै लीन्हा।।

सो प्रसाद रिषि लिन्हा दीन्हा दरसन हाथ।
देहु पियारी प्रिया को सुत मो होहु सनाथ।।

तब राजा रनिवाँसहि गएउ। खीर थाल कौशलहि दएउ।।
कौशिल्य लीन्हो सिर नाई। औसर जानि कैकई आई।।
मधिलीक कर पल्लव कीन्हीं। अर्ध भाग की परमित लीन्ही।।
दोऊ मिल भोजन पावन लागी। सुमित्रा तब गई सुभागी।।
दोऊ भाग तें शेष शेष करी। सुमित्रा कह दीन्हों पूरन करी।।
गर्भ सुमित्रा के उपचारा। लछिमन रिपुहन जबर विचारा।।
मातु कैकई गर्भ नेवासा। भगत सिरोमनि भरत निजु दासा।।
सर्व तत परमात्मा रामा। कौसिला के पूरन कामा।।
नाम करन उपवीत कराए। गुर वसिष्ठ ग्रह पढ़न सोहाए।।
जानि लछिमन राम कुमार। विश्वमित्र कीन्ह उपचार।।
तबहि रिषि दशरथ ग्रेह आए। नृप कर जोरी विनति लाए।।
तब रिषि नृप सों वचन उचारा। धर्म हेत केजे उपकारा।।
राम लछिमन के कारन आए। दशरथ लछिमन राम बोलाए।।
बाँह टेकि सौंपे नृप रामहिं। रिषि लै चले जग्य के कामहिं।।
राम लखन बालक दोई भाई। कछु एक विद्या रिषै सिखाई।।
माया मंत्र जुधि धनु वाना। विधवत तिनके मन्त्र पुवाना।।
मारग जात ताड़का मारी। विश्वामित्र सुखी भै भारी।।
रिषि आश्रम लै आये जबहिं। कियो विचार जग्य को तबहिं।।

कही राम कीजै रिषि जग्य। सब साकलि होम अरु अग्य।।
आग्या पाई जग्य रिषि कीन्हा। दैत सुबाहु सो औसर चीन्हा।।
रुधिर मास सो बरसत आवा। बानन मारी सुबाहु गिरावा।।
ताकै संग मरीच सुदानौ। तिन पुनि जुधि राम सो ठानौ।।
ताकी मृत्यु राम नहि देखी। बिनु फरवान सो लियो बिसेखी।।
बान संग उड़ि परो समुद्र। रावन जहँ सेवक है रुद्र।।
दैत मारि हातो तब कीन्हा। चले रिषि रामहि संग लीन्हा।।
मारग आवत सुनो स्वयंबर। मिथिलापुर जनक के मन्दिर।।
धनुख जग्य सुनि रघकुल नाथा। विश्वामित्र लै चलै साथा।।

गौतम नारि श्राप वसि भयी सिला मग माँह।
रघुवर चरण छुआई कै गति दीन्हीं पति पाँह।।

क्रिपा करि मिथिला पर आए। जनक राई सुनि ठौर दीवाए।।
रिषि के चरण धोई त्रिप लीन्हा। स्वयंवर को औसर कीन्हा।।
महादेव को धनुक मँगायो। आँगन माँह धराई पुजायो।।
बड़े बड़े कुमार भूपति के। चल चढ़ावत बल सो अति के।।
उटै नहीं अति बल कै हारै। तबहि लछिमन धनुक निहारै।।
राम सैन करि ताहि नेवारा। धनुक समीप आप पगु धारा।।
रामचन्द्र तब धनुक चढ़ावा। टूटेऊ धनुक सभा भै पावा।।
सीता जैमाला पहराई। देव दुंदुभि तबै बजाई।।
राई लगन लिखि दूत पठाए। अवधपुरी दसरथ पहँ आए।।
दशरथ नृप पत्री लै बाँची। विश्वामित्र लिखि सो साँची।।
जानि महूरति चले लगन गनि। भरत शत्रुघ्न चले संग बनि।।
मिथिलापुरे परवेश जब कीन्हा। जनक राई जनवासा दीन्हा।।
बंधौ छोट जनक के आँही। कन्याँ दोई अहै गृह ताँहि।।
यह विचार जनक जब कीन्हाँ। लघु कन्या लछमन कहँ दीन्हाँ।।
भरत शत्रुघ्न को सोमानी। पढ़ै वेद धुनि विप्र सुबानी।।
मिले जाई तब लछमन रामा। दशरथ नृप पायो विश्रामा।।

थार चढ़ायो मुनि वशिष्ठ तब। सीता राम कही गावहि सब।।
सतानंद उतहै अधिकारी। जाकी माता अहिल्या तारी।।
तेन सीता कर गोत उचारा। राम गोत वशिष्ठ उपचारा।।
कनक रतन बहु दाएज पाए। तब दशरथ चले अवध सोहाए।।
परसराम मिले मारग माँहि। पंक ब्रिष्ठि सूझे कछु नाँहि।।
सक भई दशरथ के मनहिं। मुनि वसिष्ठ कहँ पूछा तबहिं।।
तब वसिष्ठ दशरथ सन कहहीं। परसराम भृगु पति अहहीं।।
राम जानि आवत तुम पाँही। जिनि सोचहु चिंता कछु नाहीं।।
परसराम आए जहँ राम। सहज भाउ मूरति निहकाम।।
भ्रिगुपति कहा यह धनुक हमारा। खैंचहु देखौं बलहि तुम्हारा।।
भ्रिगुपति धनुक राम कर दीन्हों। सरकी फोंक लाइ बल कीन्हों।।
छाड़ी बान अकासहि दीन्हौं। मारी स्वर्ग गति चिरंजीव कीन्हों।।
परसराम तप करन सिधाए। दशरथ नृप अवधपुर आए।।

कौसिल्या केकई सुमित्रा उठि कै परछन कीन्ह।
अपने अपने सुत कहँ विधवत कै चर लीन्ह।।

सुत कलत्र संग करि अनन्दा। नृपति चकोर राम जेउँ चंदा।।
एहि विधि बहुतक देव सिराना। दीयो केकई हि दुई वरदाना।।

निृप दसरथ को केकई कीन्हों वाचा बंध।
जब माँगौं तब दीजिए मानि वचन सनमंध।।

प्रातः भएँ बैठें नृप द्वारे। राम वदन तन नृपति निहारे।।
मुनि वसिष्ठ सों कहा बोलाई। रामहि राज दीजिए जाई।।
प्रातः महूरति रिषै बताई। सब देवन के संका आई।।
विनति करि सारदा पठाई। धरो सरूप अयोध्या आई।।
दासी नाम मंथरा धाँई। ता के घट गई समाँई।।
आई जहां केकई रानी। पूछी तबहि महिलन मन जानी।।

रामहि कालि देहि जुवराजू। तो तुम्हरो सुत काने काजू।।
सरबस करि अपना हरि लीजै। पाछे जेहि भावै तेहि दीजै।।
गृह कैकेई गवन नृप कीन्हा। देखि बदन मलीन तन छीना।।
पूछा नृपति ककइहि तबहि। तुम मलीन उछाह जीय सबही।।
कहै केकई दुइ बर दीन्हा। सो अब देहु चहौं मैं लीन्हा।।
भरत सत्रुहुन छत्रहि धरही। लछमन राम गवन बन करहीं।।
नृपति कहै मम बचन एकई। सो कछु करहु जो कहै केकई।।
निश्चै भरथ तजी महतारी। राम वैमुख ध्रिक नर अरु नारी।।
विग्रह भयो प्रजा राजा दर। लीन्हों राम तपसा को वर।।
कहौ भरत तें वचन विचारी। कबहुँ राज दियो पितु महतारी।।
अन्तरजामी जाननहारा। सो कछु देह जो मोक्ष हमारा।।
मम पादुका राखिए साथा। नित उठि ताहिं नवावहु माथा।।

लछिमन सीता साथ रथ पर बैठे एक संग।
रिषि वशिष्ठ सुत साथ सुमित्र द्विज रथ सारथी।।

चले नगर तजि राजा राम। आए श्रींगी ऋषि के धाम।।
नैन ओट राम जब भए। दशरथ के प्रान तब गए।।
सुमित्र संग रथ दीन्ह पठाई। राम सीस पर जटा बनाई।।
गंगा उतरत कौतुक कीन्हा। पूरन पद केवट कह दीन्हा।।
चरन धोई तब पार उवारा। भवन कीन्ह आगे पगु धारा।।
छेत्र प्रयाग ऋषि भारद्वाजा। आए तहँ दर्शन के काजा।।
राति रहे उठि भोर सिधारे। चित्रकूट दिशा को पगु धारे।।
बहुरि जेयंतहिं परचै दीन्हा। अत्रै ऋषि सों विनती कीन्हा।।
चित्रकूट रीहँ आगे चले। मार्ग महा विराध तब मिले।।
ताहि मारि कमंध गति पाई। सरभंग के आश्रम जाई।।
ऋषि मुति धनही भगति दिढ़ाई। पुनि अगस्त के आश्रम जाई।।
ऋषि अगस्त कियो सन्माना। पंचवटी प्रभु बाधे थाना।।
बहिनि रावन की सुपनखा। रामसीया लछमण कहँ देखा।।

कहा राम सन राखहु मोही। कहा राम लक्ष्मण तोहि सोहि।।
सुपनखा लक्षमन पह आई। कहि लछिमन प्रभु पास पठाई।।
तब सुपनखा हासी जानी। क्रोधवत होई माया ठानी।।
सारंग धनुक लछन कर लीन्हीं। नाक कान दोउ गहि छीना।।
लाजित होई सुपनखा जाई। खरदूषन तीसरा जहँ आई।।
सुनत जुधि करन को आई तुलाने। राम बान ते मरिम सिराने।।
तबहि सुपनखा आई तहाँ। दैत राज रावन है जहाँ।।
सबै कथा तेन कहि सुनाई। सभा माझ लेटि गै जाई।।

यह सुनी रावण को कोप कर लीना मरीचहिं संग।
अंत काम कह सियहरौ होहु कनक म्रिग अंग।।

पाछे लगी साधना सिधारो। वन में आनि मृग संचारो।।
देखि मृगा सोने का आछे। कह सियराम चले उठि पाछे।।
करत अखेटक वन में जाहीं। बार भई प्रभु आए नाहीं।।
तब सीता लछमन सों कहेऊ। देखहूँ जाई राम कहँ रहेऊ।।
लीकदई सिय कें चुहँ पासा। लछिमन चले राम की आसा।।
रक्षा करि लछिमन वन गए। रावन भेष भिखारी भए।।
कहो अलख सिया के आगे। सिया भिछा लै चली सुभागे।।
बाँधी भिछा हम नहीं लेहीं। बाहेर लीक निकसि करि देहीं।।
दया जानि सिय बाहिर आई। सीतहि लै रावन उड़ि जाई।।
बन में राम तब मृग मारो। दैत रूप होई राम पुकारो।।
लछिमन राम संग आए। कुटि माह सीता नहीं पाए।।
कहाँ लगु कथा कहौं विस्तारा। चले सिया के ढूँढ़नहारा।।
सिय पूछा चकई चकवा सो। कछू न कहो श्रद्धा दियो वाको।।
पंथ मिलै तेहि पूछे रामा। पुनि आए जटायु धामा।।
पंख जरै दुर्बल मलिन गति। राम कह केहि कारन यह गति।।
सीता मित मैं मरन बनायो। तब रावन मम पंख जरायो।।
राम कहा हम पे कछु लेहू। पंछी कहे मोहे निज गति देहू।।

प्रीति जानि करुणा करी लियो ताहि करि गोद।
आँसू को अर्घ जल दीयो गति दीन्हीं करि बोध।।

आगे चले सिय सुधि पाई। कछू एक भिलनि फल लाई।।
राजा राम प्रीति कै राखै। कहा माँगु कछु प्रभु अस भाखै।।
गुर के पास होइ मम बासा। पुरवहु राम मोरि अभिलाषा।।
शबरी कों गुरु की गति दीन्हीं। पुनि सीता की चिंता कीन्हीं।।
क्षुधावन्त फल राम अहारी। गए लछिमन शिव को वारी।।
लछिमन वन पइल लेन विचारा। हनोभाम रखवा प्रचारा।।
भई अवार राम चलि जाँहि। कर जुधि लछिमन बन माँहि।।
राम जाइकै दीन्हीं हाँका। महादेव कर गहा पिनाका।।
शिव पिनाक जब अँचे चहा। तब लगि राम जाइकै गहा।।
फूल नाक को गयो बिलाई। शिव कों पारवती समझाई।।
तब शिव आपन वदन निहारा। राम रूप मन माह विचारा।।
पूजा करि राम लछिमन की। पूछि कथा हरन सिय जनकी।।
हरिवंत वीर राम कह दीन्हाँ। सिय सुधि लेन पयान कीन्हाँ।।
चले चले किष्कंधा आए। हनुवंत बन फूल लेन सिधाए।।

भये वनचर देवता हरि की अग्या पाई।
रावन मान कारने रहे तहि वन जाई।।

चले-चले हनुवंत तहँ जाँही। नृप सुग्रीव जहाँ बन माँही।।
परो रहै कीरहाँऊ पिराई। हनौमान तब पूछा जाई।।

जेठे बंधु बालि अति कीन्हीं। त्रिया हमारी तिन हरि लीन्हीं।।
छठे माम मारै मोहि लाता। ताते सदा दुःखी सुनु बाता।।
ईस हमारे राम लछमन। सो आए हैं किष्किंधा बन।।
सैन संग सेवा करूँ आई। वे तुव त्रिया देहैं मँगाई।।
हनुमान तब वाचा लीन्हा राम मिलाई सुग्रीवहि दीन्हा

त्रिप की कथा सबै सुनाई। क्रिया बालि की बहुरि जनाई।।
सुनि अनीत प्रभु छोड़ेऊ बाना। तत छन गये बालि के प्राणा।।
प्राण जात कहो मुख राम। गंगा आई ताके धाम।।
सुग्रीव कहँ दीन्हो राजा। अंगद कह कीन्हो जुवराजा।।
चले राम तजि बन की सीवाँ। सब सैना संग चले सुग्रीवाँ।।
पदम अठारह वानर और। नल औ नील मिले तेहि ठौर।।
हनुवन्त पिता केसरी जोई। आगे मिला राम कह सोई।।
जामवन्त रीछन के राजा। आइ मिले सो सहित समाजा।।
राम सुग्रीवहि कहा बोलाई। चारि कटक चहुँ ओर पठाई।।
दछिण दिशा अंगदहि चलाए। हनुमान तेहि साथ पठाए।।
हनुमान अंगूठी लई निशानी। चले देश दछिण दिस जानी।।
संपाति जटाइव वधु जहँ। बानर सबै परेता मुख महँ।।
हनुमान वपु परसो जबहिं। जामें पंख गीध के तबहिं।।
संपाती सों अंगद कहा। समाचार सम्पूर्ण रहा।।
वचन कहो हनुवंतहि इहई। सीय असोग वृच्छ तर अहई।।
कोस चारी सै दीसा लंका। जाउ कूदिजो होई निहसंका।।
आपु आपु सों पूछा सबहिं। काहू ने कहा जाइ कहँ तबहिं।।
अंग कहा जाउँ मैं नीके। आवन कह पौरुष नहिं जीके।।
सुनि कूदे हनुवंत परवत चढ़ि। गयो सो पर्वत धरनि गड़ी।।
हनुवंत चले अकासहि जाँहि। गिर मैंनाक बढ़ो जल माँहि।।

गिर मैंनाक हनाछि कै करि सुरसा सों युध।
सिंधु पार ठाढ़ो भयो कीन्हीं मन में वध।।

मसक रूप धरि लंकहि गए। सात देव सतहू दाना भए।।
देखी सीय असोग वृक्ष तर। कूँदि बैठी ताहि के ऊपर।।
डारि दई अँगूठी तेहि आगे। देखि चिन्हीं अँगूठी भ्रम लागे।।
कहो वीर बानर समुझाई। राम अँगूठी कैसे पाई।।
हनुवत कहो सनो सिया माता। आवत जोरे कटक विधाता।।

मातु अजनी को मैं पूता। हनुवन्त नाम राम को दूता।।
दई अँगूठी राम निशानी। सो मैं दई मातु हित आनी।।
पूछि निकट बोलाई राम सुधि। हनुवंत सिय समोधी दैवधि।।
अमृत फल सीता को भाएँ। सबै दीन्ह हनुवंत सो खाए।।
मीठ जानि सिय सो कहई। यह फल मातु कहाँ सो अहई।।
सीता कर सों बाग बताई। पैठे कुदि ताहि वन जाई।।
रखवारे सब उदधि नहाई। सुनो जानि हनो फल खाहीं।।
डार पात फूल करहि अहारा। वृक्ष तोरि समुद माह डारा।।
देखे तहाँ बनचर एक। चले दूत बल धरे विशेष।।
दूतन कहा यहै है चोरा। माया छल करि सब वन तोरा।।
कों बरनै हनोमान पराक्रम। राछेस मारे किय बहुत श्रम।।
यह सुधि रावन तब पाई। इन्द्रजीत संग सैन पठाई।।
कोटिन राक्षस मारिअ डारे। अक्षय कुमार सहित सब मारे।।
ब्रह्म का सिसों हनो बधाए। सबै दैत्य सब मारन धाए।।
तब लै गये लंक पति आगे। तब रावन पूछा भय त्यागे।।
दूत जान जौ मारौं तोहि। छत्री सबै लजावैं मोही।।
हनुवंत कहा तोहि अस छत्री। जाके बहिन सुपनखा मत्री।।
कहि रावन किन कुलहि निहारै। पिता तुम्हारे पौरि बुहारै।।
अग्नि, पवन, पानी एक साथा। हम जानि सब तुम्हारे हाथा।।
जब एतने मिलि हैं एक साथा। तबहिं होत जीव कर घाता।।
रावन कहै याहि लै मारो। वस्त्र पूँछि लपेटि कै जारो।।
जेंऊ जेंऊ वस्त्र लै लै आवहि। तेंउ तेंऊ हनो लंगूर बढ़ावहि।।

रुई तेल घृत बसन तन सबै लपेटे आनि।
अग्नि पर जारि ततछन हनुवंत मरिवो जानि।।

छिन में अग्नि उठि प्रचण्डा। पतसी तोरि करि सत खडा।।
फेरि लंगूर अग्नि तहँ लाई। तहाँ बाऊ उनचास बहाई।।

एहि विधि जारी सगरी लंका। देव वंदि जह रहई असंका।।
कूदि पर समुद्र मह जाई। सीतल भए अग्नि बुझाई।।
कूदि समुद्र आए एहि पारा। अगदादि कीयो जै जैकारा।।
हनुवंत मिले राम कह आई। सीय संदेश सब कहा सुनाई।।
बज्र कछोट राम तब दीन्हाँ। इन्द्रजित जती कपि कीन्हाँ।।
सै सुग्रीव चले सब वीरा। उतरे जाई समुद के तीरा।।
महिरावन रावन को सुत जो। हरि लै गयो रामहि पताल सो।।
माला देवी के बल कारन। और पिता को काज संवारन।।
हनुवंत बात मनहि मे राखि। हरि चिंता मनि में अभिलाषी।।
जम का तीर तोरि तह गएउ। महाक्रोध हनुवंतहि भएउ।।
बल कारन रामहि लै आए। मारन कारन खड्ग उठाए।।
तब हनुवंत छीन कै लीन्हा। महिरावन को माथा छीना।।
रामहि लै निकसे हनोमाना। गुप्त लै आए तेहि असथाना।।
सागर पंथ की जुगुति बनावहि। संखवाद रावनहि सुनावहि।।
सागर आपु तहा चलि आयो। देवन तें तहाँ आपु बँधायो।।
राम नाम लिखि पाहन साधा। ततछिन सागर देवन बाँधा।।
ताल ठोकि वानर किलकाही। सेतबध लखि मन हरखाई।।
उतरी कटक पार सब जाई। तब रावन बोले विहंसाई।।
राछसहु जाहु कटक है जहाँ। बानर बपुधरि जाएऊ तहाँ।।
महाबीर बल देखि डेराने। वानर महि देव उनमाने।।
तब राछस रावन सो कहई। वानर रूप धरे कोउ अहई।।
सीख दई मन्दोदरी रानी। नहि मानी रावन अभिमानी।।
बीड़ा लै अंगद तहँ जाँही। रावन जहाँ सभा के माँही।।
कहो सीय कह देहु पठाई। पति सों जीवहु होई बडाई।।
तीन लोक मोहि बल सम नाहीं। सीता को पावै भौ पाहीं।।
अंगद कहा रावना पाँही। हम अकेल तुम्हरे गृह माँही।।
बल अभिमान करै जौं कोई। हमरो पाऊँ उठावै सोई।।
दूत सबै जब बल करि हारे। रावन उठो क्रोध के मारे।।
गीरो मुकुट सीश ते वहीं। अगद के कोप यह सबहीं।।

रहो खिसियाइ रावना अंगद कीयो सयान।
राम लखन पद पकरहु तुम्हरो भलो निदान।।

इतनी कह अंगद फिरी आए। विभिषण रावनहि सिखाए।।
कोपि रावन मारी लाता। आई मिलो रामहि तजि नाता।।
बोलि राम लंकापति कहा। वानी धनि देव निर्वहा।।
सैन जथा विधि करि सनमानी। जुधि मारि असुरन ते ठानी।
इन्द्रजीत तब रन में आए। लछिमन के सन्मुख उठि धाए।
इन्द्रजीत शक्ति तब लीन्हा। ताकी चोट लछिमन कह कीन्हा।
हनुमत कूदि गए जहँ लंका। ल्याए वैद सुसेन तुरन्ता।
निस के माह संजीवनी आवै। तौ लछमन कह दैव जीआवे।
हनुमंत द्रौन गिर पहँ जॉही। काल नेम छल किए मग मॉही।
मारि ताहि परवतहि उठाए। चले अवध ऊपर तब आए।
तहां भरत प्रतिज्ञा लीन्हीं। लंका राम दरस तब कीन्हीं।
वैद्य संजीवनी विधि करि दीयो। पाइ संजीवन लछिमन जीयो।
लछिमन बहुरि सैन्य संग लाई। मेघनाद सो करी लराई।
कई बार लछिमन तेहि मारा। इन्द्रजीत तब मन ते हारा।
ग्य करन ग्यो गिर कन्दर महँ। जाई विध्वंस कीन्ह बानर तहँ।
उठा क्रोध करि रन में आवा। तब लछिमन तेहि मारी गिरावा।
कुंभकरन तब जागो सोई। हाहाकार नगर में होई।
तेन पुनि जुधि राम सो ठानी। मृतु ताहि की आई तुलानी।
अंग अंग वनचर लपटाहीं। पकरि पकरि डारे मुख मॉहि।
बहली लैए निकसि पराहीं। निकसहि जे किरी मुख माहीं।
निकसहि नाक कान की ओरा। काटहि नाक कान बर जोरा।
कीन्हीं जुधि अपार कहै को। गयो चबाई बहुत बानर को।

हनोवीर हनुमान कुंभकरन सिर मुसिका।
रामः चलायो बान मुए सो कुंभकरण बलि।।

नृप रावन तहँ आई तुलाना। कपि राछस मिली जुधिही ठाना।।
सुग्रीव आदि कहो तब रामहि। रावन मरहि न जुधि केहि कामहि।।
तुम बिनु रथ वह रथ पर ठाढ़ो। जुधि समै अब तप बल बाढ़ो।।
ब्रह्म को सुधि राम की आई। रथ सामिग्री दीन्ह पठाई।।
राम ताहि पर आसन कीन्हा। हनुवंत भी हाक तब दीन्हा।।
रावन सैन सहित तह लरही। उठै कमंध असुर सब मरही।।
अंगद बीर और हनुमाना। राछस मारि किए परिहाना।।
कपि राछस मिली युधि मचाई। रुधिर नदी वपु नाउ बहाई।।
रावन सनमुख आई हुंकारो। शब्द संग बान प्रभु मारो।।
कटै शीश पुनि लागै छिन छिन। अचरज होई बानरन के मन।।
हनुमान अंगद तब धाए। रथ ते मारि भू माँहि गिराए।।
तब रावनहि मूर्छा आई। लै सरथी लंका पर जाई।।
रावन की मूर्छा जब गई। आवा बहुरि जुधि तब भई।।
काटहि शीश बहुरि फिरी जुरई। रावन नृप मारा नहीं भई।।
कहै विविषन खरमुख अहई। मधि शीश दस कंधो रहई।।
सो तकि मारहु एकहि बाना। जाहि सीश दस निृप के प्राना।।
खुरुप बान राम तब मारा। रावन मुर्छि परो विकरारा।।
रंचक साँस रही घट आहि। मंदोदरी मूसल लै धाई।।
त्रिया न जानी राम रथ फेरा। मंदोदरी अचरज कै हेरा।।
रन सम्मुख कत भाजु विसेखी। पर त्रिया मुख राम न देखी।।
मन्दोदरी लजित मन माँही। पतनी एक रामव्रत आँही।।
मम पति महा अधर्म संघाती। मूसल हनो कहो अपघाती।।
निृप रावन तब ही मरि जाई। देव दुँदुभी सबन बजाई।।
बरखा यो अमृत रण माँही। वानर जीए राक्षस कछु नाँही।।
हनुमान सीता लै आए। बंदी माँह ते देव छोड़ाए।।
अग्नि जारि सिय परचै लीन्हाँ। ब्रह्मादिक शिव साक्षी दीन्हाँ।।
राज विभिषण कों प्रभु दीयो। वचन आपनो पूरन कीयो।।
सिय को जाइ दंडवत कीन्हों। चंद्रबली कहि आसिष दीन्हो।।

तब बेवान चढ़ राम जी चल अयोध्या धाम।
जुग-जुग हरि औतार प्रभु करत सुरन को काम।।

आए नगर निकट निअराए। सिर पावरी भरत धरि आए।।
भुज भरि भेंटे अंक में लाई। गुरु जन पुरजन सब मुदाई।।
जाई प्रवेस कियो गृह माँही। प्रथमहि गये कैकेई पाँही।।
सुमित्रहि मिली कै अनुरागे। कौसिला के चरनन लागे।।
नृप विधि राज करन तब लागे। कहल कलेस देस तें भागे।।
नाना विधि के कर्म कराये। देव पितर के धर्म बढ़ाये।।
गर्भ रहो सीता के जबहीं। कुल की रीति करी तब सबहीं।।
लछिमन भाई निकट हुंकारा। लेहु जाई सुधि नगर मझारा।।
रजक एक नगर तेहि रहई। ता त्रिय रूसि पराए रहई।।

सीता रावन के रही लीन्हीं कुलहि समाई।
एहि विधि कहो रजक तब हम असतौ वहि जाई।।

यह सुनि आई राम सो कही। सकुचि राम चिंता मन गहि।।
सीता सों पूछी मन लाई। मन की इच्छा कहहु जनाई।।
सीतै जानि सयानय कीन्हा। रामचन्द्र कह उत्तर दीन्हा।।
तपसी जौवन भीत पैए। ताकी सेवा में मन लैए।।
रामचंद्र लछिमन सों कहै। सिय लै जाहू जहाँ वन अहै।।
लछिमन सीया चले लै साथा। गर्भवती स्त्री अनाथा।।
चले चले वन भीतर जाँही। सीता पिआसी भई तहाँ ही।।
लछिमन जल को लेन सिधाए। सोई जानी राखी जल आए।।
नींद गई सीता जल देखो। गए लछिमन अचरज पेखो।।
फिरत फिरत रिषी आश्रम आई। बाल्मीक जह तपहि कराई।।
कछु एक काल बीति तह गए। लौ हरि सुत सीता के भए।।
एक दिना लीला असि भई। बालक लै पानी को गई।।
रिषी देखा तहँ बालक नाँही। कुश बालक करि राखा ताँही

रिषी आश्रम पानी लै आई सीय। लखि बालक अचरज मानो जीय।।
सिय दुनहु की सेवा कराई। रिषी आश्रम खैलै दुनौ भाई।।
अस्त्र सस्त्र विद्या रिषी दीन्ही। जुगुति एक ता पाछे कीन्ही।।
दीन सिखाई रामायन भाषा। रामायन जो आगम करि राखा।।
सुनि सुनि सिय अचम्भा करई। सुनि अगम मन विसमै धरई।।
भरत शत्रुघ्न लछमन रामा। जग्य करन रिषी बोले धामा।।
सोने की एक सीय बनावहु। तौ पुनि हम तें जग करावहु।।
सोई करि रिषी जग करवावा। अश्व देश देश फिरी आवा।।
लौ कुश हरि को अश्व चोरावा। लै बाँधो बन माह दुरावा।।
पाछे लागी सेना आई। अश्व न दीन्हो परी लराई।।
सब सैना लौ कुश हरि मारी। कछु गए पराई सबै बल हारी।।
तब लछिमन एक दूत पठाए। सैन सहित राम चलि आए।।
बहुरि जुधि लौ कुरू हरि ठानी। राम संग सेना मुरूछानी।।
राजा रामहि अचरज भयो। आपु धनुक लै रन में गयो।।
राम दोहाई करी शिशु लरहीं। फैंके बान सो पाएन परहीं।।
राम दोहाई राम सुनी जब। अचरज मानि आगे गए तब।।
सनमुख होई दरसन जब करे। लौ कुश आए पाएन तब परे।।
बन में रहत सीय तब जानी। रामचन्द्र तहँ गए विनानी।।
सिय के कहे धरनि फूटी जाई। लजित होई सिय तहाँ समाई।।

सीता गई पतालहि राम रहे मुसकाई।
बाल्मीकि के आश्रम शिशु संग बैठे जाई।।

बाल्मीकि लौ कुश सो कहहिं। देहू भेंट तुम पे जो अहई।।
राम चरित्र रामायण गावहि। सुनि सुनि राम मनहि मुस्कावहि।।
कथा होनहार जो रही। सो सब गाई बालकन कहि।।
लौ कुश लै संग नगर हि आए। कीयो जग्य पूरन सुर भाए।।
फीरी दोहाई राम नाम की। तब सुधि कीन्हीं सति धाम की।।
विप्र एक आयो प्रभु पासा। पूछन राम वचन प्रकासा।।

हम तुम होहि और नहीं रहहीं। तब हम तुम सों वचन उचरहीं।।
लछिमन द्वारे ठाढ़ी कीन्हा। विप्र राम मत करवे लीन्हा।।
तेहि क्षण आए ऋषि दुरवासा। लछिमन मत मन यह परगासा।।
मैं सेवक तुव अनुचर अहौ। ठाढ़ होहु राम सों कहौ।।
पवरि भीतरें लछिमन भए। क्षोभ पाई दुरवासा गए।।
राम निकट जब लछिमन आए। क्रोध भयो उठि विप्र सिधायो।।
बचन मेटि मम लछिमन आए। यह सुनि लछिमन मरन सिधाए।।
प्राण गवायो स्वर्ग दुआरी। मिलै रूप कह आपु विचारी।।
राम दूत एक नगर पठावा। गृह गृह प्रति सब सोकहि आवा।।
राजा राम चलत निज धामहि। चलौ संग जोई निकामहि।।
सबै चले करि जै जै कारा। रहि गए बनियां और सोनारा।।

ब्रह्मा विष्णु महेश। सबहिन मिलि आगे लियो।।
कीयो धाम परवेश। कहै मलूक अविगति हरी।।

व्यास औतार लीला

हरि की लीला जानि न जाई। जुग जुग प्रभु औतार धराई।।
भयो बहुरि औतार व्यास को। सुनहु बस परकास तासु को।।

ब्रह्मा एक उर्वशी अंत्या ताको नाम।
ऋषि वशिष्ठ तातें भये पावन जगत प्रणाम।।
ग्रव सिसु चांडाली सक्ति महामुनि ताहिं।
पतिनी ताकी सप्तनी रिषि पाराशर आहिं।।

पाराशर पतिनी मछोदरी। गर्भ ताहि के व्यास वपु धरी।।
हरि आकास तें शबद सुनायो। ऊँकार सों ब्रह्महि पायो।।
ताते ब्रह्म वेद सुनायो। चतुरानन चारों मुख गायो।।
यजुर अथर्वन रिगु अरु साम। स्रोमुख चारि वेद के नाम।।
सो पढ़ि रिषि मुनि ब्रह्महि धियावहि। अर्थ समुझि परमारथ पावहि।।

सतजुग त्रेता गयो सिराही। द्वापर जुग बहुरो भई आई।।
वेदान्त कोई पढ़ नहि सकै। वेदवाद सब कोई बकै।।
अलप अबर्दा कलिजुग में जानी। हरि व्यास के मन उपजानी।।
अष्टादस पुरान निर्माए। और शास्त्र षट उपजाए।।
महाभारत हरिवंश कीयो तब। ता के सुनहु नाम गुन सब अब।।

कवित्त

प्रथम नाम वैराट लिंग विस्न पदम ब्रह्मा संकर कहिए।
मछ कछ बावन वराह पुनि नारद गरुड़ भागवत लहिए।।
भौ सन अग्नि ब्रह्म वैवर्त मारकंडेठ नाम सकंदहि।
ऐहि नाम अष्टादस पुरान व्यास वेद तें कीन्हें छंदहि।।
पातुंजुलि मैमांसक न्याई धर्म तर्क आगम धरो।
कहै मलूक षट शास्त्र भक्ति काज सुलभ करो।।

श्री क्रिशनु औतार लीला

नारायण पूरन ब्रह्म महिमा अगम अपार।
क्रिस्न चतुर्भुज शेष संग बहुरि कियो औतार।।

त्रेता रामायन विस्तारा। हनुवंत काल नेम कह मारा।।
तेन पुहुमी लीन्हो औतारा। मछु काज यह कियो विचारा।।
उग्रसेनि जदु गृह औतरिया। पितु को बाँधि राज तिन करिया।।
कंस दैत्य मथुरा मह धामा। भगिनी तासु देवकी नामा।।
वसुदेव सेती ब्याह करायो। तब नभ वानी कंस बुझायो।।
आठ बालक याके होई। तुमको कंस मारि है सोई।।
सब विचार समुझि जो पावा। तबहिं देवकीहि मारन धावा।।
वसुदेव कहा कौन गुन मारहू।। सो किन हमतें मन्त्र उचारहु।।
याके गर्भ जो आठौ बालक। सो हमहि बध कहें घर घालक।।
आठों बार होई मम जबहिं। सो मैं सौंपव देव नृप तबहिं।।
वाचा लै वसुदेव पठावा। नारद आई बहुरि समझावा।।

जौ आठों पहिलेहि औतरै। तौ राजा वध तुम्हरो करै।।
यह कहि रिषी बैकुंठ सिधारे। वसुदेव बन्दीगृह बैठारे।।
एहि प्रकार षट बालक मारा। पाप बहुत उपजो संसारा।।
धर्मउ थापि अधर्म संचारा। पृथिवी कष्ट लहै अपारा।।
वसुधा सहित ब्रह्मा अकुलाई। छीर समुद्र समाधि लगाई।।
तब नारायण कहा सुनाई। तुव कारन औतार हो आई।।
जेन जेन कह प्रभु आज्ञाकरी। गोकुल आई देह तिनधरी।।
जादौ कुल राजा वसुदेवा। पतिनी दोई तासु के सेवा।।
नाम देवकी और रोहिनी। परम पुनीत परम सोहनी।।
शेष नाग सो कथा सुनाई। देवकी गर्भ औतरहु जाई।।
आपु रोहिनी गर्भ विचारा। ता पाछे किन्हो उपचारा।।
शेष अकर्षि रोहिनीहि दीन्हा। देवकी गर्भ वास हरि लीन्हा।।
माया को प्रभु आज्ञाकारी। गर्भ जसोदा के औतारी।।
प्रथम भए बलि भद्र कुमारा। गर्भ रोहिनी के औतारा।।

भादौं मास अष्टमी क्रिस्न पछ अँधियार।
उत्तम नछत्र रोहिनी हरि लीन्हो औतार।।

अर्ध रात्री परगट भए। रूप चतुर्भुज दरसन दए
दरस देखि अचरज मन आयो। तब ही हरि वसुदेव बुझायो
नंद के ग्रह हम कों पहुँचावहु। हमहि छाडि कन्या लै आवहु
तब वसुदेव लै चले क्रिस्न कहँ। बाढी जमुना चरण छुवन कहँ
हुंतकार करि तब डेरवाई। जमुना जुगुल जाँघतर आई
जसोदा आगे लै पौढ़ाए। कन्या लै निज गृह को आए
बन्धन सबै अचानक लागे। रखवारे तब सोवत जागे
रोई उठि तब आदिम बानो। दूतन कहा कंस तब जानी
मारन कारन रजक फिराई। कर लै निछुटि अकासहि जाई
होई अकास तें बानी कहई। बैरी तोर गोकुल अहई
नंद जसोदा मंगलचारा। कीन्हों गर्ग नाम उचारा

यह सुनि कंस बहुत पछताई। मारन कारन दूत पठाई।।
कह लगु कहिए चरित मुरारी। पीवत दूध पूतना मारी।।
तबहि वा की जननी गति पाई। दूत कागासुर आई तुलाई।।
पलना सोवत हाथ पसारा। दूत जानि कै हरि तेहि मारा।।
मास दिवस के भए मुरारी। तोरो संकट लात हरि मारी।।
बरिस दिवस के भै बनवारी। पलका सोवत प्रभु सुख कारी।।
त्रिनावत्त बोंडर होई आवा। क्रिस्नहि लै आकाश उड़ावा।।
कंठ चापि हरि उपरहि मारा। मुर्छि परा पुहुमी विकरारा।।
पुनि प्रभु दूध पियत जमुवाई। भवन चतुर्दश मातु देखाई।।
देखी जसोदा मनहि डरानी। हरि बालक संग केलि सुठानी।।
बाल बुद्धि हरि माटी खाई। सो सुनि जसोदा मारन धाई।।
तब हरि वदन पसारि देखावा। ब्रह्मा विष्णु शिव मुखहि समावा।।
पुनि जननी बाँधो क्रिस्नहि धरि। भए नाम दामोदर तहँ हरि।।
नारद वचनो की सुधि आई। तारे जमला अर्जुन द्वै भाई।।
बालक बछ सहित बन माँहि। वछासुर के मुख मांह समाँहि।।
वोदर फारी सबहिन मुकुलायो। बछुरुन निगलि बकासुर धायो।।
चोंच फारी किन्हीं दुई फारा। एहि भाँति अघासुर मारा।।
गुवालन संग हरि जूठन खाई। ब्राह्म लखि चक्रित होई जाई।।
बल कवछ ब्रह्मा हरि लीन्हाँ। तेहि रूप हरि औरै कीन्हाँ।।
ब्रह्मा तब पाएन परि हारा। पुनि धेनुक दैत कह मारा।।
जल काजें जमुना तट गएऊ। जल पीयत मृतक सब भएऊ।।
अमृत वृष्टि कै सबै जीवाए। कालि जानि तहँ हरि धाए।।
कालि नथि अधै किय जबहिं। दाँवा पान कीयो हरि तबहिं।।

संग सखा वृज नारी।। सरद राति कीन्हें हरि
वस्त्र हरे मुरारी।। पारवती व्रत सुफल करि

बहुरि जग्य भोजन माँगे हरि। बोले विप्र सबै निदिया करि।।
वधू सबै भोजन लै धाई। भोजन करि बर देई पठाई।।

नंद प्रमोधो इन्द्र उथापी। गोबरधन की पूजा थापी।।
सुरपति कोपि मेघ बरसायो। तब हरि गोबरधनहि उठायो।।
बहुरों वरुण नन्द को हरो। जाना प्रभु कौतुक एक करो।।
बरुन लोक ते नन्दहि ल्याए। रासि करी मन्मथहि नचाए।।
सरद निसा बंसुरी बजाई। सुत पति गृह तजि गोपी आई।।
तब हरि बोले वचन सुनाई। धर्म छाँड़ि कत हम पे आई।।
वधुन कहा तुम अन्तरजामी। तुम बिनु झूठे गृह पति स्वामी।।
प्रीति जानि हरि क्रीडा कीन्हीं। गोपिन गर्व तबै मन लीन्हीं।।
मान भंग करि गये मुरारी। सखा एक संग प्रान पिआरी।।
संग की गोपी मान कियो जब। गै हेराई हरि ताहू तें तब।।
जेहि विधि हरि संग किए विलासा। तेहि विधि ठानी किहा रासा।।
प्रीति जानि हरि प्रगट भए। ससि रथ थकित विसम होई गए।।
सब में किस्न सबै हरि मोही। कामहि जीतो किस्न तहा ही।।
दुविद प्रलम्बु राम तब मारा। ऐसे समरथ से प्रभु वारा।।
सर्प सदरसन नंद पते ग्रासो। सर्प मारी मनि नंद निकासो।।
बर्ष एकादस के बनवारी। बृज राखों व्योमासुर मारी।।
पल में गोकुल कियो उजारी। वृन्दाबनहि बसायो झारी।।
एहि विधि बहुत दैत प्रभु मारा। बहुरि कंस धनु जग्य विचारा।।
सभा माँझ अकूर बोलाए। क्रिस्न लेन कह तुरि पठाए।।
जो मनसा अक्रूरहि भई। तैसी भगति अंक्रूरहि दई।।
चले अक्रूर क्रिस्न संग लाई। कालिन्दी तट उतरे जाई।।
अक्रूरहि अस्नान करायो। विश्वरूप जल में देखायो।।
बहुरि दयाल रजक कह मारा। ता को वर दै गोप सवारा।।
भगत श्रीदामा के घर आए। प्रीतिवंत हार पहिराए।।
कुविजा तें चन्दन हरि लीन्हीं। सुधो अंग क्रिपा करि कीन्हीं।।
क्रिस्न गए पुनि कंस दुवारे। तोरि धनुक प्रतिहारन मारे।।
बल कुबलै हाथी तह मारा। मारि महा गजदंत उपारा।।
मल्ल चानौर मुस्टिक मारे। झोटी धरि पुनि कंस पछारे।।
दीन्हों दाग जमुन तट जाई। उग्रसेनि पुनि सुधि आई।।

बंदि छोरि राज तब दीन्हा। जादौ सबै बढ़ावै लीन्हा।।
वसुदेव देवकी के घर आए। तब प्रभु बल संग पठन विधाए।।
संदीपन घर कासी जाँही। आपु जगत गुर वेद पढ़ाँही।।
बहुत सखा एक नाम सुदामा। ताके संग किस्न विश्रामा।।
पढ़ि पुरान तब दछिणा दीन्हीं। गुर सुत म्रितक की इच्छा कीन्हीं।।
पैठि समुद संखासुर मारो। संदीपन गुरु सुतहि उधारो।।
गुर दछिन दै मधुपुर आए। वसुदेवकी के मन भाए।।
जरासंध तब लागु गोहारी। सत्रह बार जुधि गा हारी।।
उधौ गुप्त मते कै ठाए।। करि वसीष्ठ मधुपुरी पठाए।।
गोकुल जाई जोग उपदेसौ। गोपी प्रेम देखी अंदेसौ।।
देखी चरित्र सम गोपी नाई। ग्योसु उधौ ग्यान भुलाई।।
पुनि दाउ मधुवन को आए। प्रीति पुरातन रासि कराए।।
कालीन्दी आकर्षण कीन्हा। शेषनाग अपनो बल चीन्हा।।
जरासंध मलेछ संग धाए। तब छिन नारद आई सुनाए।।
विसकर्माहि प्रभु अग्या दीन्हीं। मधि समुद्र द्वारिका कीन्हीं।।
वसुदेव देवकी तहा सिधारो। प्रातः भए मलेछ सब आयो।।
निकसि नगर ते बाहेर आए। अन्नहीन प्रभु दरस देखाए।।
देखि मलेछ चले सब पाछें। क्रिस्न विवेकी भाजे आछें।।
पाछें लाएं क्रिस्न तहँ जाँही। गिर कन्दर मचकुंद जहाँ ही।।

कालजमन सैन लिए हरि संग पहुँचो आए।
मारि लात मचकुंद कों सब सैन जराई जाए।।

पुनि मचकुंदहि दरस दीन्हा। करि समोध आगे पग कीन्हा।।
गंधमर्दन परवत गै जबहिं। जरासंध छेका पुनि तबहिं।।
बल सैना संग मधुपुर आए। कृष्ण संग मिली युद्ध कराए।।
एहि पुर जैनहि नारद कहाँ। हरि गै गौतम परबत जहाँ।।
काम भयो बलभद्रहि भाई। इन्द्र अपछरा दीन्ह पठाई।।
गन गन्धर्व सब बहुविधि गावहिं। बलभद्रहि वारुणी पियावहिं।।

दुविद दैत बल मारो तहाँ। करत विनोद सिखिनि पर जहाँ।।
जरासंध तब कोप कराई। चहुँ दिशा तें अग्नि जराई।।
जीव जन्तु तब अग्नि जराहीं। अग्नि बुझाई सैन मह जाहिं।।
जरासंध तब गयो पराई। चल द्वारिका जादौ राई।।
रेवत मनु कें कन्या एका। सो बलभद्रहि दई विशेषा।।
पुनि हरि रुकुमिनी को हरि ल्याए। विधिवत सों विवाह कराए।।
पारजातक नारद लै आए। कामदेव रुकुमिनी जाए।।
छठएँ दिन संबर हरो ताहि। सबर हति रति तहाँ विवाही।।
सेवाकरी रवि सों मनि पाई। सत्राजित सुत कंठ रहाई।।
सवा भार देई सो कंचना। माँगी क्रिस्न देई लोभ मना।।
काल पाई सिंघ तेहि मारा। जामवन्त तेहि हनो प्रहारा।।
सबइ कहै क्रिस्न मनि माँगी। तेरो सुत मारो तेहि जागी।।
तहँ गै क्रिस्न जुधि तैं कीन्हाँ। हारे जामवन्त सुधि लीन्हाँ।।
रामायन तेन कथा सुनाई। जामवन्ती क्रिस्न तहँ पाई।।
सोई मनि दहेज तें दीन्हाँ। सत्राजित को आनि सोइ दीन्हाँ।।
सत्राजित की सुता सति जावा। दीन्हीं व्याहि क्रिस्न के नावा।।
पांडो दुःख सुना हरि काना। जुरजोधन कह कपटी जाना।।
हस्तिनापुर आए पांडो हित। सतधनौं मारो सत्राजित।।
सतिभावा गै जहँ जदुराई। सतधन्या मन संका आई।।
डरि कै मनि दीन्हीं अंक्रूरहि। भागी अक्रूर गए बड़ि दूरहि।।
सो सुनि रथ चढ़ि गए मुरारी। सतधन्याँ मारो परचारी।।
मांगी मनि बलदेव तब आई। किस्न कहा अक्रूर यो राई।।
तब बलदेवहि बाढ़ो क्रोधा। जरजोधन सों मिलि कियो बोधा।।
सत्राजित कह दाग देवाए। तब अक्रूर मनिहि लै आए।।
एक समै हस्तिनापुर जाँही। रहे क्रिस्न पड़ौ गृह माँही।।
अर्जुन संग अखेटक गए। सूरज सुता सो दरसन भए।।
क्रिस्न हेत जमुना तप करई। तासों क्रिस्न ब्याह सुभ वरई।।
धर्म राई सुत गृह नेवासा। अग्नि पुकार करी हरि पासा।।
ताको दुख अर्जुन तब दाहा। अग्नि दई तहँ को वसनाहा।।

मै दैत जो जर उबारा। करी सभा तेन माया प्रकारा।।
पाडौ कौरौ नेवति बोलाए। जुरयोधन लखि भ्रमि भुलाए।।
वैर बीज यह क्रिस्न जमायो। कुर पांडौ तें वैर करायो।।
व्रिंद त्रिव्रिंद एक त्रिप रहई। दुइ कन्या ता के गृह रहई।।
कहो क्रिस्न कह देहि विवाही। मने कियो जरयोधन ताही।।
क्रिस्न जाई बरबस सो ब्याही। ब्रिंदा नाम निब्रिंदा ताही।।
जग्य नगन जिता कियो अरम्भा। गये क्रिस्न अरु बहु त्रिप थंभा।।
सातौ व्रिषभ एक गुन कीजै। यह कन्या ताही को दीजै।।
सातौं व्रिषभ एक गुन कीन्हा। नग निजी ता व्याहि त्रिप दीन्हा।।
लछिमन त्रिपति सयंवर कीन्हा। सब राजन पयान तहँ कीन्हा।।
तहाँ हरि बरी लछिमना कुमारी। राजा उठि सब लागु गोंहारी।।
अर्जुन लछिमना मारि हराए। क्रिस्न लछिमना व्याह कराए।।

रुकुमिनी जामा सतिभावा जमुना लछिमना नाम।।
व्रिंदा अरु निरव्रिंदा नग्नि जीता हरि सुवाम।।

नरकासुर सुत पिथिवी कहायो। राजन की कन्या हरि ल्यायो।।
सोरहं सहस एक सुत आही। सो हरि एकहि लगन ब्याही।।
ताहि मारि सुत को कीयो राजा। पुहुमिहि बहु विधि क्रिस्न नेवाजा।।
बहुरि पारजाँतक द्रुम ल्याए। सतभावाँ के गृह जमाए।।
बज्रनाभ हरि मारा जबहिं। कामदेव सुत व्याहा तबहिं।।
दुतिय ब्याह अनिरुध को कीन्हौं। हरि बानासुर उखहि लीन्हौं।।
बहु क्रिस्न निर्धरा जऊ धारा। काढ़ि कूप तें गिरगिर तारा।।
कासी राजहि हनो मुरारी। मारे असुर अनेक प्रचारी।।
जरयोधन सुता नाम लछिमना। हरि सुत स्वांभु हरि सो धना।।
जरयोधन सों करी मनुहारी।। ब्याही स्वांभु लछिमना नारी।।
पुनि नारद सोच मन माँही। रहस करै कैसें सब पाँही।।
देखा गृह रुकुमिनि के जाई। रिषि आदर तहँ कीन्ह कराई।।
एहि विधि नारद घर घर गये। तहँ तहँ दरस चतुर्भुज भए।।

राई दुदृष्टिल जग्य करावा। नेवता लै नारद ही पठावा।।
छपन कोटि जादौ नहि अंता। इन्द्रपथ संग लै गै भगवन्ता।।
अर्जुन भीम लियो संग लाई। जुरासिंध वध कीन्हों जाई।।
राजा सबै बंदी तें छोड़ाए। बन्दी छोड़ नाम कहवाए।।
बहुरि जग्य मांही शिशुपाला। मारो चक्र ताही गोपाला।।
सलि दैत द्वारिका जाई। म्रित वैर पुनि छेका जाई।।
प्रदुमनि ताकों मारि सिरायो। बहुरि जुधिष्ठिर जग्य करायो।।
तब बलभद्र सूत कह मारा। निंध्या सुनि तीरथ पगु धारा।।

संकर्षन तीरथ करन गये वन प्रभु मानि।
तब लगि महाभारत करो करी कौरौ सब हानि।।

बहुरि सुदामा को दुख नेवारो। करि सनमान कनक गृह सारो।।
ग्रहन नहाई कुरखेतहि जाँही। वसुदेवन मिले सब ताँही।।
क्रिस्न कहे तें नारद कहई। माँगहू वसुदेव जो मन अहई।।
षट पुत्र देखों मम इच्छा। कहै देवकी यहै परीछा।।
बलि लोक तें बधुन लै आए। दरस देखाई कै फेरी पठाए।।
अर्जुन बहुरि सुभद्रहि हरो। बलिहि बिनै ब्याह प्रभु करो।।
चारौ वेद अस्तुति विस्तारी। ताको आदर कीयो मुरारी।।
बहुरिति पुरा दैत को जारा। रूप मोहनी सिवहि उबारा।।
अर्जुन की प्रतिज्ञा कारन। निजुपुर गए विप्र सुत तारन।।
सनकादिक तहँ विनति कहै। तुम बिनु यह पुर सूनो अहै।।
द्विज के सुतन तहा तें ल्याए। ब्रह्मा विष्नु महेश तब आए।।
कहो देव चलिए निज धामा। यह कहि गए कीयो परिनामा।।
क्रिस्न देव मन चित सो चाहा। एकादस ऊधौ सों काहा।।
सब रिषि मिलि दुर्वासा आए। क्रिस्न सो आदर करि बैठाए।।
सतिवाँ सुत स्वंभु कुमारा। स्त्री भेष होई वोदर सवारा।।
पूछौ जाई दुर्वासहि सोई। हमरे गर्भ कहो का होई।।
रिषै कहा सुनु वचन हमारा। जौ उपजै सो छै करे तुम्हारा।।

निकसो पैट लोह को मूसल। सबनि कही अब नाहीं कूसल।।
तब सब घास समुद मह डारा। वहि प्रभास में मैसर भारा।।
तनक रहो सोउ गहि डारा। अंगद बोड़िदै वान सवारा।।
यह सुनि क्रिस्न सभा में कहहिं। रिषी वचन मिथ्या नहि अहहिं।।
बाल वृद्ध नर नारी जेते। संसउ धारन पैठए तेते।।
पुनि सब जदुवंशी चलि भए। प्रभास छेत्र कह सबई गए।।
पियो वारुनी सुरसरि तीरा। लरहि मरहि जादौ बलवीरा।।
सर के पत्रन परे आपु सैं। पुनि बलिभद्रहि कहो सैन सैं।।
मुस्टिक ताल मने कै मारहि। एहि विधि भए सबै संघारी।।
कोई न रहा प्रभास छेत्र महँ। सेष देव समाधि लीन्हा तहँ।।

संकर्षण होई रूप हरि नारायण अस्थान।
कहै मलूक यह लीला करी क्रिस्न निर्वाण।।

संकर्षन नाम कवित्त छप्पय

गये सदेह सेष लै लाई। पीपर तर बैठे जदुराई।।
बीतो देवस निसा थै आई। काल पाई धीमर तहँ जाई।।
जीन लोहास वान सवारा। अरुण चरण तकि क्रिस्नहि मारा।।
जन्तु जानि आगे चलि जाई। रूप चतुर्भुज दरसन पाई।।
देखि क्रिस्न मन में पछ्ताई। कृष्ण कृपा तेंई गति पाई।।
क्रिस्न सारथी दारुक नाँऊ। भ्रमत भ्रमत आयो तहि ठाँऊ।।
रथ में चारि वेद जो घोरा। गये धाम करि विनै निहोरा।।
लखि सारथी विस्मय होई जाई। तब दारुक सो कहा बुझाई।।
अर्जुन सेती दाग दवाएहु। और कथा सब कहि समुझाएहु।।
हरि दारूक कहँ प्रबोधि पठाए। विष्णु शिवादिक ब्रह्मा आए।।
विनति करत बहुत मन हारी। अब निज दरसन देहु मुरारी।।
अत्र चारि सदेह तब भए। आज्ञा पाई निजु धामहि गए।।
गति अलेष काहू नहिं देखि। तजी देह परमात्मा विसेषी।।
ब्रह्म रुद्र चक्रित भए। सुछिम रूप दरसनहि काए।।

निर्गुण न पायो ब्रह्मा विष्णु महेश।
क्रिस्न कला को जानै कियो धाम परवेश।।

हरि की लीला सुनहु अनूप। जेहि विधि भए बौद्ध सरूप।।
कलिजुग राज भयो संसार। तब कीन्हो बऊध औतार।।
कलिजुग रीति बऊध व्यवहार। धर्महीन गत भा संसार।।
राजा चोरी दण्ड करावहिं। वेदहीन सब विप्र कहावहिं।।
पानीहीन मेघ होइ जाइहि। अन्न आदि सब पृथवी चोराइहि।।
षट दरसन करि है विपिरीति। भीख माँगी धन जोरिहि नीति।।
खेती करही बनि बैपारा। भेषधारी होइं है संसारा।।
कुल की कानि सबै जग तजि है। जो जेहि भाइहि सो तेहि भजि है।
मात पिताहि सुत दै हैं गारी। नारी न प्रति की आग्याकारी।
माया लगि बहुकम कमै हैं। पिता पुत्र तजि बोदर भरै हैं।
वर्ण अवर्ण चीन्हीं हि न कोई। लालच तें अधर्म बहु होई।
बेचि हैं कन्या माया लागी। विश्वागवन करि हैं कुल त्यागी।
पाँच बरस की त्रिया कुमारी। सो जनि है बालक अरु वारी।
छोट शरीर अन्न बहु खाँही। माया कारन पर घर जाही।
यह सुभाउ सब जग बरताइहि। धर्म सबै अनीत होई जाइहि।
धेनु अजा सम द्रुम त्रिन जैसे। मानुष होई हैं बालक अैसे।
हरि की भगति नहीं मन धरि है । जन्त्र मन्त्र औषधि सब करि है।
मोहन जोहन और वसि करना। जुगुति उचाटन धारन मरना।

सिस्टि अंगुष्ट परवान जब निज कलउ परवान।
जति सति पाखण्ड मत्त सब अधर्म व्रत मान।।
सबकी सब विधि जानि है करहिन कछु विवेक।
रूप सुभाउ बऊध को कहैं मलूक अलेख।।

कलकी लीला चौपाई

कलियुग केर अंत जब होइहि।। सृष्टि भ्रष्ट सब भ्रांति ही खोइहि
धर्म नास बहु पाप अपारा।। होइहि निकलंक औतारा

माता नेत विस्न जस ब्रह्मन पिता सो संभल देस।
धर्म हेतु करन हरि करि हैं कलकी भेस।।

अस्व श्याम अरु वस्त्र श्यामा। हाथ खरग आपु हरि शामा।।
करि हैं स्वार लेस संघारा। कछू न रहि है ऐहि संसारा।।
पुनि इच्छा ते जग उपजई है। दक्ष प्रजापति पुनि प्रगटे हैं।।
ऋषिगन दानव तिथि ग्रह मासा। चारि वेद सब जुग परगासा।।
हरि विभूति को करै बखान। सनकादिक जनकादि समान।।
सुनहु तासु के नाम बखान। कह मलूक हरि गति निर्वान।।

नित्य प्रलै बरनन सोरठा

चौबिस दस सिद्ध साध।। मलूक तत सतिधाम के
कहो अनादि अगाध सुनहु चतुर्विध प्रलै अब

कहो अनादि आदि वरतमान। प्रथम नित्य लै सुरहु बखान।।
ब्रह्मा के दिन माँह विशेषा। तामें प्रलै प्रवर्त अनेका।।
साँझ भये ब्रह्मा जब सोवै। दीप लोक तब कछुवै न होवै।।
नाहि द्रिगपाल उदधि तब नाँहि। द्रुम त्रिन मानुस बिलै तहाँ।।
क्रिया आचार वेद विधि हीना। नित्य प्रलै प्रति सृष्टि प्रलीना।।
बीज रूप पृथ्वी होई जाई। जलहि मधिहि जित कित ही फिराई।।
जेता दिन तेतो निसा होई। निसा बीते प्रभात पुनि सोई।।
वोहि प्रकाश वो ही पुनि करमा। नित्य प्रलै वासर प्रति ब्रह्मा।।

एहि विधि नित्य प्रलै कथा त्रिगुण निषेध विभाग।
कहै मलूक आत्मादर्श तत कारण वैराग।।

प्रलै सभै के नाम कवित

नित्य कथा प्रथमहि कही कथा भवषि परकार।
प्रलै निमित्य कहौं अब हरि लीला विस्तार।।

ब्रह्मा के सतवर्ष बीतिता। होत निमित्य प्रलै परतीता।।
काल निमित्य प्रलै के धर्मा। जाई समात विस्नु में ब्रह्मा।।
तब सतवर्ष में मेघ न पराहीं। सबै असुर सुर भूख मराहीं।।
बारह कला जो सूरज काल। होत एकत्र चरित गोपाल।।
एक सतवर्ष अग्नि सम परै। महिमंडल भस्म सब करै।।
पृथ्वी सकल छार जब होई। भस्माकार रहै तब सोई।।

प्राक्रित लै वरनन दोहा

प्रलै प्राक्रित कारने सेष मधि विश्राम।
तहा पारषित वपु धरे सनुहु तास के नाम।।
धनुक वान गदा पदम संख पुनि चक्र सुदरसन।
स्वस्तक सनक उर्धव रेख किए सुर्ति आकरषन।।
मूरतिवंत ढाल खडग ध्वजा अग्याकारी।
सर्व ततु परधान अंकुरा सब के भयकारी।।

तेज पुंज नारायण प्रजलित संकर्षणा परगास जहाँ।
देह धरे सब पाररिवंद दास मलूक निवास तहाँ।।

होत सेष साई नारायना। निज नामे पारखित पारायना।।
संकर्षण तह छोड़त स्वाँस। तेज पुंज बहु अग्नि प्रकास।।
अग्नि पवन एक संग उड़ाई। तेहि ज्वाला तें जलकल लाई।।
जल और प्रिथी राख मिली औटी। भया गंध रस सेष कसौटी।।
सो जरि बरि पुनि धूरि उडाई। ताको संग अग्नि उड़ी जाई।।
पवन हतो सो सुनि समांनो। सेष पारखित जात न जानो।।

जब लगि त्रिगुण परकाश।। तब लगि नाम आकाश को
भै सत तम रज नास।। कहै मलूक अक्षर गति

नाम कवित्त छप्पय

शब्द शम्भु पी पुरुष जो करन करावनहार।
जैसे का तैसा भया अविगति अगम अपार।।

कहि प्राकृत प्रलै बखानि। अंतक प्रलै सुनहु परवान।।
प्रथम पुरुष रजस गुन कीना। पुनि रजो गुन सत गुन में लीना।।
सतगुन ते सब जग बरताओ। सो सगुन तम गुनही समायो।।
तम गुन लीन निर्गुण में होई। शब्द अक्षर तब कछु वैन सोई।।

नित्य निमित प्राक्रित अंतक प्रलै समान।
जैसे का तैसा रहा कहै मलूक निरवान।।

निर्गुन गुन तह तीनि।। भाव परम गुन गुर कहे महा विस्न जहँ लीन।।
महा ब्रह्म अरु मह सिव अनादि परम गुर सीत सरूप।।
सेवा भगति दीप नहि धूप।।
विधि निषेध को नाही मान।। अपना आपुहि करै बखान।।

छोटो बड़ो न घंटि बढ़ि आपुहि सब प्रकाश।
कहै मलूक अनादि हरि साधन को विस्वास।।

अनादि नाम कवित्त
श्री राम मलूक जी सहाय
नाम चौतिसहु औतार का

पुरुष विराट नारायण ब्रह्मा सनकादिक नारद मनुवंतर।।
नर नारायण जग्य कपिल दत्तात्रै हयग्रीव निवतर।।

रिपब देव वैकुण्ठ नाथ प्रिथु ध्रुव वर देन हंस निःकामा।।
भर्थ व्यास होहनी अजित गज मोचन सर्व श्रेष्ठ बलिए मा।।
मछ कछ वावन वराह नृसिंह परसरामै सो तहि।।
राम क्रिस्न वउथ कल की चौबिस दश मलूक कहि।।

पुरुष अंग लीला

पुरुष अनादि रूप सुछिम जपू। सुछिम तें भई जोतिलिंग वपु।।
लिंगहि तें अस्थूल कहावै। सो बढि दीर्घ नामहि पावै।।
दीर्घ ते बाढ़ो वैराट। सब को वीरज घाट अघाट।।
कला अनन्त एक हरि आपैं। लहै सो जो तन मन दै थपैं।।
पद पाताल सीश अखण्ड। जासो वोदर एक ईश ब्रह्मण्ड।।
आपे करै करावनहार। सब विधि पूरन अपरम्पार।।
परखि गुरु चरनन चित्त ही जै। ता घट की परमित सुनि लीजै।।

अंग नाम वैराट कवित्त

पद पाताल लोक पर पद परलोक रसातल गाऊँ कहावै।।
लोक महातल गुलुफ लोक जानू पर सुतक सो नामहि पावै।।
पंचम लोक कहावत वितल उरु पर साहि पुरान बखानै।।
लोक तलातल नाँउ जादा यह अविगति गति हरि की मानै।।
अतल लोक उतिम कटि राजै कटि पद ताई सप्तपुर।।
पुरुष अंग पुनि लोक विधि कहै मलूक भजु राम गुर।।

कटि नाभी लगु वोदर वोदर कहियै। सप्त दीप ता माही लहियै।।
नाभि प्रजंत मूर्धना ताँई। सप्त लोक कहियत वहि ठाँई।।
तेन में बहु नाना परकार। कछुक कहौ जिय के निस्तार।।
भूलोक नाभी तहँ ब्रह्मा। देवलोक हृदयं निह भर्मा।।
अस्थन दोऊ तप को गाऊँ। उपर महर लोक को नाऊँ।।
सुनिए ताहि लोक की रीति। सप्त रिषै तहँ महा पुनीति।।

संकटाकार रहट समा फरै रैन दिनि वार।
अस्थित उत्पति प्रलै की विधि लीन्हे वेवहार।।
काल कर्म जिये भोगइ चौरासी की रीति।
ताही के बल ब्रह्मा कुरत जगत की नीति।।
जेहि विधि सप्त रिषैस्वर संकटाकार फिरहि।
ताकि विधि परमिति कहौ प्रगट जे आहि।।

नाम मरीच रिषै सर्व प्रथम हिं सदा जुवा अस्थाने रहहीं।
रिषि वशिष्ठ अरुंधती साथविध वरतेमधि लिए सो अहहीं।।
रिषि अंगीरा गहे दोऊ कर रहैं सारथी के अस्थाने।
रिषि पौलस्ति रहैं दछि दिस अत्री रिषेश्वर रहे इशाने।।
पच्छिम पुलह कर्ता रिषि उत्तर अधर करै प्रदछिना।
कहै मलूक जिय गति जानन कों काल संकट विधि सों बना।।

महर लोक की लीला कही मलूका दास।
ता पर ग्रीव आश्रम ध्रुव जन लोक नेवास।।

सति लोक ताही को नाम। ता मे सति पुरुष के धाम।।
अवगनि गति कछु जानि न परे। जा तें तीन लोक संचरै।।
नाना रूप जोईन जो होई। प्रगट कहत चौरासी सोई।।
चारि भाँति मानुष बिन। अनन्त गति को करै बखान।।
सर्व लोक को बीज प्रमाण। सीत लोक में सति प्रधान।।
ब्रह्मा कर्म जीव को जानै। बरतन गढ़ै तेहि उनमानै।।
घट परवाने जोति समावै। तेहि सम तत प्रधान प्रगटावै।।

कुलाल ब्रह्मा बरतन करै वनै सो आठौ याम।
चारि खानि चेरे राशि बिना जीव बेकाम।।

चौरासी के नाम सुनीजै। हरिगुण गाए जीव पतीजै।।
वर विभाग नाम सबही कै। जैसे कहे वेद में नीके।।

गरुड़ आदि दस लख पंछी नाना प्रकार रहत तरु वासा।।
मकरादिक नौ लाख जंतु करते विहार नित जल की आसा।।
सुमेर तें जंगम अस्थावर बीस लाख पर्वत धरनि पर।।
तीस लाख पशु जीव माह अधिपति म्रिगीन्द्र वनस्पति गज चर।।
ईग्यारह लाख कीट क्रिम कहिए चारि लाख मानुख विधि।।
ये चौरास खानि विदित उदित जस राम मलूक सिधि।।

राखा सति लोक ते जीव समावै। सर्व तत्त संगहि लै आवै।।
जा प्रधान के तत समाँहि। ताके नाम प्रगट जग आँहि।।
सति लोक को अंस समान। तेज पुँज अनन्त भगवान।।
महाकाम गण गुण प्रधान। जातें जगत होत .परवान।।
प्रदुमनि अनुरुध है रखवारी। मन अरु काम दोउ अधिकारी।।
वासुदेव संकर्षण नामा। चारि मूरति पूजन गुण धामा।।

अधिकारे के नाम। गुण प्रभाउ जाते प्रगट।।
सति लोक के धाम। वरतन समतत दानहीं सति रूप सति।।

चुवर्ण गति ब्रह्मा कोट प्रजत आदि है।।
सबके जाननहार सब में कोटि सरूप जहाँ लयलीन ब्रह्मा
विष्णु संकर आधीन आठ पीर पित अग्याकारी।।
भूपति चारि जहाँ अधिकारी।।

सप्त अंस सदगति सदा द्वारपाल सतिधाम।
अधिकारी अरु पारखित कहो ताहिक नाम।।

कवित्त

सनातन जय विजय सनंदन सुतं कुमार सनक मुख जावै।
माया आदि रहे द्वारे पर कमला बैठी चरण पलावै।।
वासुदेव संकर्षण प्रदुमनी अनिरुध मूरति।
चारि सर्वगति सतिलोक सतिधाम सति पद सति।।
तेज पुँज सरूप नारायण आठ पारखित प्रगट जहाँ।
पूजन जोग चारो मूर्ति मन वचन करम दास मलूक तहँ।।

तेज पुँज नारायण सति लोक सति धाम।
राम दृष्टी सम भाव सति कहे ताहि के नाम।।
बाल सरुप निरंजन अविगति अलप अभेव।
कहै मलूका परम गुरु परम पुरुष सो देव।।

विश्व बीज के नाम।। जाते प्रगट सकल जगत
सति लोक के धाम।। उत्पतित को कारन सबै

विश्व नाम कवित्त

जैतें जै बड़े ते बड़ों साँबहू तें साँचु वासुदेव जोति,
रवि सशि मन चित्त वासवस कंद म्रिगु सम निधि।।
संकर मरीच काम नारद नछत्र सुक वासुकी अनन्त,
अर्जुमा वरुन स्याम मंत्र गयत्री अछर सिधि।।
सागर अग्नि मरुत पिपर हे वंचल पर्वत ब्रज गुरु,
वार जम चित्र रथ जछ कपिल नराधि परब्रह्म ज्ञान।।
काम धेनु प्रहलाद उचै सुवाम्रिगेन्द्र गरुड़ मकर,
गंगा अध्यात्म ॐ आदि अन्त मधि क्रिस्न जेस कीरति सदा समान।।

अर्जुन सुकदेव व्यास।। ऐरावत दिगपाल दे
कहत मलूका दास।। वाद हरन अरुजुव कलन

सकल विश्व के नाम सब कहे मलूका दास।
भक्त प्रनाली वरनौ पूरन प्रेम प्रगास।।
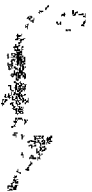
भक्ति प्रनाली नाम कवित्त

नारायण शिष शेष तास लछमी पुनह सनकादि आदि धर्म।
विश्व सेनि सृष्टि गोपाद नाथ मुनि जैमुनि श्री रामाश्रम।।
श्रुति निंद केसिप श्रुति धामा श्रुति पराग परम विलोचन।
कुलातारग देवाचार्ज हीरानंद राघव नन्द दुःख मोचन।।
संप्रध्या जिन ते भई रामानिज हरि धाम रहि।
विष्णु श्याम माधौवाचार्ज नेमा निधि मलूक श्याम कहि।।

दछिन तें प्रगटी भक्ति द्रावनाडके देश।
रामानिजु संप्रध्यामधि श्री बल्लभ उपदेश।।
गोकुल गाँउ विदित भए प्रगटे विट्ठल नाथ।
भाव नाथ तिन तें भए देव नाथ सुत तास।।
तेन तें परसोत्तम तहाँ सिख मलूका दास।
सतगुर मिले मुरारी जी प्रगट छाप विश्वास।।

अथ काल प्रभाव वरन

प्रथमहि कहो अनादि प्रकार। बहुरि पुरुष वैराट विचार।।
दूजे आदि भूत उत्पत्ति जो। मानसिक औतार कहे सो।।
अस्थित मधि और वर्तमान। त्रितिय कही लीला प्रधान।।
अन्तिम भवधि प्रलै अब कहिए। भेद जानि निर्भेदहि लहिए।।
काल काल की लीला गाई। काल पाई जो पुरुष बनाई।।
पुरुष काल उत्पत्ति पुनिकाल। अस्थित काल प्रलै पुनि काल।।
उत्तम मध्यम सुछिम काल। माया काल ब्रह्मा तें ख्याल।।
काल कालहु के अविगति हरी। मारि ब्रिज राखत लीला धरी।।

प्रथम अनादि सरुप जो कहो अपार अपार।
कहै मलूक तातें भयो सुछिम काल प्रकार।।

प्रथम अरुप हतो जो नाँहि। सुछिम भयो बहुरिता माँहि।।
कोई न जानै सब कोई मानै। तातें सुछिम सरुप बखानै।।

सुछिम तें अनुभयो विषेष। ताकें रूप वरनन नहि रेख।।
ध्यावत विष्णु आपु उनामान। तातें अनु कही करतब खान।।
दुई अनु मिले तौ दुनुक कहावे। गति अलेख कोई जानि न पावै।।
जप जप नाम होत परवान। तातें दोनों का नाम परमाण।।

नाम होत त्रिस रैन को त्रिगुण दुनुक अमेल।
रूई रोम रज कन तें खीनो हरि गुण अविगति खेल।।

बहुरि सुनहु सूक्ष्म उपचार। जेहि विधि कीन्ह सब से सार।।
दुनुक साठि मूर्छना एक। साठि मूर्छना ते लै एक।।
होत साठि लै कोपल नोम। तेंऊ पल साठि घड़ी को धाम।।

एहि विधि घट का नाम।। भए जे सुदिन रूप तें
सुनहु महुरति जाम।। निसवासर जा ते प्रगट

बहुरि सुनहु सुछिम उपचार।। जेहि विधि कीन्हो सब विस्तार।।

चारि घड़ी की दुई महुरति साढ़े सत घड़ी को जाम ।
चारि जाम प्रति एक दिन बँध एन को नाम।।

तेहि विभाग दोइरेन कहावत। निस वासन सो नामहि पावत।
साझ महुरति निस संग। प्रात मुहुरति देवस प्रसंग।।

साठि घड़ी को दिन भयो काल कर्य प्रकार।
तेहि विधि एकहि देवस नें भए सातउ बार।।

बहुरि सुनहु सुछिम उपचार। जेहि विधि कीन्हो सब विस्तार।।
हरि के घर दोई माया रहहीं। नाम आसुरी दैवहि कहहीं।।
आसुरी तें दानव उपजाए। तासु उपरोहित शुक्र कहाए।।
एक देवस सो भोगी सिरावत। ता तें शुक्रवार कहावत।।

रवि सुतवीर शनिचर अहही। सो पुनि सम्पूर्ण दिन गहही।।
एक देवस सो भोगी सिरावत। ता तें शनिचरवार कहावत।।
आदित नाम सूर परगास। बाहर भीतर सर्व निवास।।
एक देवस सो भोगी सिरावत। ता तें आदितवार कहावत।।
जल सुत नाम कहावत चन्दा। आठ जाम जो करै आनन्दा।।
देवस एक सो भोगी सिरावत। तातें सोमवार कहावत।।
पृथ्वी सुत सुख मंगलकारी। सो दिन गहत आपनी वारी।।
देवस एक सो भोगी सिरावत। तातें मंगलवार कहावत।।
शशि को पूत नाम है बुध। जाके नाम आत्मा सुध।।
एक देवस सौ भोगी सिरावत। तातें बुधवार कहावत।।
नाम ईश्वरी हरि की माया। इन्द्रादिक सुरगन तेन जाया।।
ताके गुरु बृहस्पति नाम। गहत महूरति आठो जाम।।
एक देवस सो भोगी सिरावत। ता तें विहफै नाम कहावत।।

बार काल गुन नाम वरनि कहे समिक सकल।
पाष मास तिथि धाम काल चक्र की विधि सुनहु।।

बहुरि सुनहु सुछिम उपचार। जेही विधि कीन्हो सब विस्तार।।
सातों वार रमत एक संग। ताको दूनो पावत चंद।।
काल केतु चंदा को ग्रासै। पुर्नीव तिथि तेहि नाम परगासे।।
सात वार एक संगम विश्राम। ताको दूनो रवि को धाम।।
राहु काल सूरज को ग्रासे। अमावसि तिथि नाम प्रगासे।।
राहु केतु और सातों वार। नाम होत नवग्रह परकार।।

विहफै शुक्र शनिचर आदित सोम सुमंगल नाम।
राहु केतू और बुध मिली रमत आपने धाम।।

बहुरि सुनहु सुछिम उपचार। जेहि विधि कीन्हो सब विस्तार।।
जैसें पाष काल अनुमान। ताके तिथि के नाम बखान।।

चौदह वार अमावस पावत। पन्द्रह तिथि जा ते कहावत।।
चौदह वार सो पुनी बलेत। नाम ताहि पन्द्रह तिथि देत।।

परवा, दुति, त्रितीय, चौथि, पंच, षट, सप्त, अष्टमी नाम।।
नौ, दश, ग्यासि, द्वादश, तेरसि, चौदशि, पूनो, वको धाम।।

पाख काल एहि विधि भयो तिथि पूनो को नेह।
अमावस तिथ भाग दै दुतिय भाग करि लेह।।
सुकुल वरन शशि क्रिस्न रवि हरि वैराटहि अछ।
तातें नाम कहावत शुक्ल क्रिस्न दोह पछ।।

बहुरि सुनहु सुछिम उपचार। जे विधि कीन्हो सबहि विस्तार।।
होत दोई पाख मिलि एक। मास काल तेहि नाम विवेक।।

दोई पाख एक मास बारह नाम कहत सबै।
कौन जुगुति परगास काल चक्र के फेरते।।

सूरज रथ के संग। चलै समाज जो मास दिन।।
समाज प्रति परसंग। नाम बारहौं मास के।।

बहुरि सुनहु सुछिम उपचार। जेहि विधि कीन्हो सब विस्तार।।
मास काल की सुनिए निरनै। हरि की लीला को कहि वरनै।।
सूरज रथ को सुनहु बखान। मास नाम जाते वरवान।।
सूरज एक कला तेहि बारह। बारह जछ अपछर बारह।।
ऋषि बारह गंधर्व पुनि बारह। राक्षस नाग बार है बारह।।

अठतालीस तुरंग तहँ पावनहु तें अधिकार।
रिषि अंगुस्ट परवान बाल खेलया है साठि हजार।।

जेहि विधि सूरज गवन सुभाव। ताको सुनहु विभाग प्रभाव।।
सबको बारह भाग करीजै। एक अंश मास प्रति दीजै।।
कला एक गंधव रिषि एक। राक्षस जछ नाग पुनि एक।।
एक अपछराक अस्व चारि पुनि। पाँच हजार बाल खेल्या गुनि।।
ऐतनो साज एक रथ पास। चले सूर तहँ होई प्रगास।।

एहि समाज रवि रथ तीसों दिन चले सो आठों याम।
काल चक्र के फेर तें होत मास को नाम।।

सुनिए बारह भाग प्रभाऊ। सेवा गुण और नाम सुभाऊ।।
हरि हैं करत भरत पुनि मारत। जन उबारि राखत निस्तारत।।

कवित्त कुंडलिया अष्टपद

पाँच हजार बाल खेल्या रिषि अश्व चारि रथ पास।
एहि समाज जो प्रथमहि चलै चैत मधु मास।।
चलै चैत मधु मास माह रथ कहै मलूक सूरज तहँ धाता।
नाद काज तुँवर गंधर्व पौलस्त नाम रिषि वेद विष्यात।।
क्रित स्थली अपसरा नाचे अथ कीरत बजावै जछ ताहि संग।
नाग वास की भार पीठी अपने पर लीन्हे चलत एक अंग।।
हते नाम राक्षत पाछतें रथ पेलत रवि पास।
एहि समाज रथ सूरज को चलै चैत मधु मास।।

पाँच हजार बाल खेल्यास रिषि अस्व चार रथ पास।
दूजे सुनहुँ समाज रथ चले बैसाखे माधौ मास।।
बैसाखे माधौ मास चलत अरजुमा कला को नाम सूर जहँ।
वेद पढ़े रिषि पुलह मलूक नाद नारद गंधर्व गावत जहँ।।
पूजक स्थली नचै अपसरा जछ अस्पूज वाद्य बजावै।
नाग कछनीयों अपने पर सूरज रथ को भार चलावै।।
प्रहते राक्षस रथ पाछे तैं पेलत है रवि पास।
एहि समाज रथ सूर को चलै बैसाखे माधौ मास।।

पाँच हजार बाल खेल्या रिषि अस्व चारि विस्वास तें।
तीजें मास सुनहुँ समाज रवि शुक्र जेठ के मास में।।
शुक्र जेठ के मास में चले कहै मलूक सूरज मिति नामा।
वेद पढ़ै अत्री रिषि गायन गंधर्व हा हा देत विश्रामा।।
वाद्य करे स्वनक यछ अपसरा नचै मयनका भाव देषावै।
तछक नाग महाबल कीन्हें पीठि अपने भार चलावै।।
पौरुष सोत राक्षस रथ पाछें ते करत योजना पास तें।
तीजें चले समाज रवि शुक्र जेठ के मास में।।

पाँच हजार बाल खेल्या रिषि अस्व चारि विश्वास तें।
चौथे सुनहु समाज रवि सुधि अषाढ़ के मास में।।
सुधि असाढ़ के मास में कह मलूक सूरज वरुण कहावै।
रिष वसिष्ट धुनि करै वेद पढ़ि गंधर्वहु तहाँ जस गावै।।
रम्भा नाम अपसरा नाचै वाद्य जछ सहजनि बजावै।
शुक्र नाग अपने पर लीन्हें सूरज रथ को भार चलावै।।
चित्र स्वान राक्षस पाछे तें करत योजना पास तें।
एहि समाज रथ रति चलत सो सुचि असाढ़े मास में।।

पाँच हजार बाल खेल्या रिषि अश्व संग रथ चारि।
पंचम सुनहु समाज रवि करता की बलिहारी।।
करता की बलिहारि मलूका इन्द्र नाम सूरज नभ सावन।
विस्वावसि गंधर्व गावै जस रिषि अंगीरा वेद मुख पावन।।
नचै परम लोचा अपछरा तत्त श्रोत जछउ घंटि बजाए।
ऐलापति तहँ नाग सूर को अपने पर सब भार उठाएं।।
राछस बज्र चलावत रविरथ पाछें तें बलिहारि।
चलै सूर रथ नभ सावन में करता की बलिहारि।।

पाँच हजार बाल खेल्या रिषि अश्व संग रथ चारि।
अष्टम सुनहु समाज रवि करता की बलिहारि।।

करता की बलिहारि सदा भादौं नभ पाखि सूर रवि विश्वानहि।
कहै मलूक उग्रसैन गंधर्व गावैं भृगु रिषि वेद बखानहि।।
नचै अन्मलोचा अपसरा जछ आसारनउ घंटि बजाए।
शेषपाल तहँ नाग सूर को अपने पर सब भार उठाए।।
व्याघ्र राछस रथहिं चलावत पाछें तें बलिधारि।
चले सूर रथ नभ साखि में करता की बलिहारी।।

पाँच हजार बाल खेल्या रिषि अश्व संग रथ चारि नित नेत।
नित नेत सुनहु समाज जो सप्तमें रवि रथ हरि गुण हेत।।
रवि रथ हरि गुण हेतु तस्टरा सूर चले अश्विनी कुवारहि।
धृतराष्ट गंधर्व गावैं मलूक रिषि रिचीक वेद पुकारहि।।
निरत तिलोत्मा अपसरा जछ सत जित ततउ घटत सुनाऐं।
कवला सुत तहँ नाग सूरथ कों अपने पर भार उठाऐं।।
सूरज रथिहि चलावत पाछें तें राछस ब्रह्मा पेत।
मास कुवार अश्विनी चलत है रवि रथ हरि गुण हेत।।

पाँच हजार बाल खेल्या रिषि अश्व चारि नित नेत।
सुनहु समाज जो अष्ट में रवि रथ हरि गुन हेत।।
रवि रथ हरि गुण हेत चलैं विष्णु सूर कातिक उर्ज मास नित।
कहे मलूक विस्वामित्र पढ़े गावै सूरज बाचा भगति हित।।
निर्तत सुरंगना अपसरा जछ सत चित नितउ घंटि सुनाए।
स्तोत्र तहँ नाग सूर रथ को अपने पर भार उठाए।।
बल करि पाछें तें चलात सूरज रथ हिम षाषेत।
मासऊ जै कातिक हि चलत है रवि रथ हरि गुण हेत।।

पाँच हजार बाल खेल्या रिषि अस्व चारि अधिकार।
सुनहु नौमें समाज रवि हरि गुण अगम अपार।।
हरि गुण अगम अपार मारग सिर अगहन सूरज अश्व नाम है।
कश्यप वेद पढ़े मलूक ऋतुसेनी अलापत आठ जाम है।।

निर्त करै उर्वशी अपसरा तर्छ जछ घटत श्रुति तालहि।
सूरज रथ को भार चलावत महा संग सो नाम तेहि व्यालहि।।
बलकरि विदु पाछें तें राछस योजन चलिके निधार।
मारग सिर अगहन रथ गवनै हरि गुण अगम अपार।।

पाँच हजार बाल खेल्या रिषि अश्व चारि अधिकार।
दसए सुनहु समाज रवि हरि गुण अगम अपार।।
हरिगुण अगम अपार पूस पुषे सूरज तहँ भाग नाम है।
आयु निरख वेद पढ़े अरिष्ट नेम अलापत आठों जाम है।।
निर्त करे पूर्व रथी उघटत उर जछ नाम स्तुति तालहि।
कहे मलूक रवि रथहि चलावत कर कोटक नाम सो व्यालहि।।
बलकरि अस्फुट राछस योजत पाछें तें निरधार।
पूस पुष मासे रथ गवनत हरि गुण अगम अपार।।

पाँच हजार बाल खेल्या रिषि अश्व चारि जो विशेषि।
एकादस सुनिए समाज रवि हरि की लीला देखि।।
हरि की लीला देखि मास तप माघ सूर पूषा जो कहावे।
वेद पढ़े गौतम ऋषि मलूक सुसेन गंधर्व सुर भरि गावै।।
नचौ द्रिताछी तहाँ अपसरा तब सुचि जछ उघटत तालहि।
नाग धनंजै अपने पर लिए चलत सूरज रथ भारहि।।
वाते राछस रथहि चलावत निज बल धारी विशेषी।
माघ मास तप रवि रथ ने जसत हरि हरि की लीला देखि।।

पाँच हजार बाल खेल्या रिषि अश्व चारि जो विशे।
द्वादस सुनहु समाज हरि की लीला देखि।।
हरि की लीला देखि प्रजा ने सूर फागुन तप साखि कहवत।
बार छाज रिषि वेद पढ़ै मलूक स्वन सगंधर्व सुर भरि गावत।।
सैनाजित अपसरा नचै रितु जछ नामऊ घटत तत तारहि।
अैरावत तहँ नाग चलै अपने पर लिए सूरज रथ भारहि।।

राछस व्रचा चलावत रवि रथ निज बल धारी विशेषि।
फागुन तप साखि रथ ने वसत हरि की लीला देखि।।

एहि समाज के संग।। कहे मलूक रवि रथ चलत
काल चक्र प्रसंग।। मास नाम ता तें कहत

अरुण सारथी ए कहा। बारह मास जो रथहि चलावै।।
बहुरि सुनहु सूक्षम उपचार। जेहि विधि कीन्ह सब विस्तार।।
माघ फागुन ही ऋतु हेमवंत। होत चैत वैसाख वसंत।।
ग्रीष्म जेठ असाढ़े होई। सावन भादों पावस सोई।।
कुवार कातिक सरदहि नाम। अगन पूस सिसिर को धाम।।
बहुरि सुनि सूक्षम उपचार। जेहि विधि कीन्हीं सब विस्तार।।
ग्रिस्म वसंत ते तप काल। हेमवंत सिसिर सीत सो काल।।
पावत सरद सो वर्षा काल। को जानै चरित गोपाल।।

सीत काल तपकाल।। बरखा काल त्रिकाल मिल
वरष देवस को काल।। कहै मलूक सूक्ष्म कला

अवर्दा सत वरस को जुगुति विधातै कीन्ह।
पाप पुनि ते घटि बढ़ि काल सबनि कह दीन्ह।।

बहुरि सुनहु सुछिम विचार। जेहि विधि कीन्हों सब विस्तार।।
नर को बरस देव दिन देहू । ऐहि विधि जुगति काल की लेहू।।
एक देवस प्रति संवत कहिए। ऐहि लेखें लखे निवहिए।।
छतिस हजार वर्ष जो नर को। सो सत बरस कहावत सुर को।।

आवर्दा सत बरस की जुगति विधातै कीन्ह।
पाप पुनि ते घटि बढ़ी काल सबनि कह दीन्ह।।

धर्मराज दिन को विस्तार। यह चरित हरि को आपार।।
सुनिए जुगति उपाउ काल की। कलऊ संध्या धमराई की।।

एहि विधि होत प्रात सतगुग पुनि। धर्मराई को एहि विधि दिन गुनी।।
ऐसे दिन छति सहजारा। धर्मराई सत वर्ष विचारा।।
बहुरि सुनहु सुछिम उपचार। ब्रह्मा के दिन को विस्तार।।

आवर्दा सत वर्ष कै जुगति विधाता कीन्ह।
पाप पुनि ते घट बढ़ी काल सबनी कह दीन्ह।।

सत जुग त्रेता द्वापर कलियुग होत चौकरी एक।
एक होत चौकरी को मनुवंतरहि विवेक।।
ऐसे चौदह मनवंतर तें ब्रह्मा को दिन एक देहु।
ऐहि परकार विधि काल रैन भाग करि लेहु।।
छत्तिस हजार दिन ब्रह्मा को सो तब वर्ष प्रमान।
कह मलूक अव्यक्त हरि सब पर काल समान।।

छत्तीस हजार विष्णु की घड़ी। आवर्द ब्रह्मा की करी।।
लेखें एही विष्णु परवान। एहि विधि काल चक्र वर्तमान।।
चालीस सहस घड़ी विष्नु की। सो शिव को पल कला क्रिशनु की।।
लेखें ऐही काल परवीन। होत राम पद शिव लौ लीन।।
बहुरि सुनहु सुदिम उपचार। जेहि विधि कीन्हो सब विस्तार।।
घट का पल को कियो विचार। सुनहु नाम ले काल परकार।।
लै में पृथ्वी लै हो जाही। अंड खण्ड ता माह समाई।।
सर्व जला मैनहि औतार। काल चक्र जल सोखनहार।।
काल मुर्छन में जल सोखै। दुख सुख ताप तहँ हर्ष न सोकै।।
अविगति काहूँ नहि जाना। दुनुक काल में तेज समाना।।
तेज समाने वाई प्रधान। काल चक्र गति सर्व समान।।
काल नाम अनु सुनहु विवेक। नासे वाई न रहे कछु शेष।।
सुनि सरूप अकास कहाँहि। काल चक गति तहँ कछु नाँहि।।
सुछिम काल वरनि न जाई। सुनि असुंनि सब तहाँ समाई।।
शब्द स्वरूपी एकम एक। अकल कला गति अलख अलेख।।

हरि अनादि गति अवगति निर्गुण सगुण प्रमान।
भगत के हितकारी प्रगटन प्रीति समान।।
अनंत कोटि ब्रह्माण्ड धरी सब विधि पूरन आस।
जानै अपनी आपु गति कहत मलूका दास।।

इति श्री सुखसागर संपूरता सुभमस्त

विभै विभूति

दोहा

निरंकार अविनासुख भ्रमै नहीं मति मोरि।
जाकी सरनि सदा सुख भ्रमै नहीं मति मोरि।।

पर ब्रह्म की अकथ कहानी। समुझ सकहि नहीं पण्डित ग्यानी।।
भजे अनंनि जो त्यागे आसा। भाऊ समान लहै विस्वासा।।
सहित कामना सुमिरै कोई। सो इच्छा ताको प्रभु होई।।
सोई जैसे पंगति रिषि मुनि जन की। बूझी लेइ तिन तेनक मन की।।
विश्व सतोगुण राजा ब्रह्मा। शिव तामस गुनयौं मनि कर्मा।।
सनक सनन्दन आदिक साधू। हरि को मारग कहत अगाधू।।
देखन कहन सुनन ते न्यारा। अंतर बाहर परखन हारा।।
सकल त्यागि ऐसो प्रभु ध्यावै। हरि समान महिमा सों पावै।।

लै दृष्टान्त वेदान्त और सिद्धान्त अनभै नेह।
सावधान होई हरि भजौ दुर्लभ है यह देह।।

कर्म अकर्म विकर्म के भेदा। जानि लेई विधि तजै निषेदा।।
संयम नेम वेद के धर्मा। साधि त्रिकाल और षट कर्मा।।
वरन आश्रम के जे आचारा। जप तप दानादिक विस्तारा।।
तीरथ प्रवर्जन यात्रा जेती। और क्रिया कहियत है केती।।
एकादशी आदिक व्रत नाना। कहाँ लगे कहिये विधि नाना।।
पूजा ग्यान साँख्य और जोगा। साधि अष्टांग तजै सब भोगा।।
सब धर्मन को मूल जो भक्ति। कर के याहै हरि अनुरक्ति।।

सब करि अर्पै ब्रह्म को जो विरक्त मति धीर।
तबहिं सिद्धी सब विघ्न को प्रेरक होहि शरीर।।

जोग अस्थान सिद्धि को विधना। जोगी ध्यान तजै होई मगना।।
अष्टादश पंच सिधि के नामा। खण्डन करहि जोग विश्रामा।।

कहौं सो जत जाहि विधि आवै। जा विधि ध्यान करत विचलावै।।
माधि दश अरु उति अष्टा। पंच करहि जो जोग भ्रष्टा।।
सुनिए जोग अंग के नामा। प्रथमै साधै प्राणायामा।।
रेचक पूरक कुंभक करै। नेती धोती अस्ती धरै।।
त्राटक ध्यान बहुरि लैकारी। तजै वासना तनहिं नेवारी।।
भवन संध कोरै ब्रह्मण्डा। सतगुरु माह मिलै तजि अण्डा।।
एतनो जोग अंग है सारो। तजि अपवर्ग जाई आगारो।।
हरि की माया में जो भूलै। आवागमन माह सो झूलै।।

माया के सुख ना लहै तजै जानि सब वादि।
लीला प्रकृतिहु सों मिलै तौ सो जोग आसाधि।।

सुनहुँ सिधि के सकल प्रभाव। ता मे जोगी जन को भाव।।
पाँच तत्व की सूक्ष्म मात्रा। धरै धारणा चाहै यात्रा।।
अणिमा नाम सिद्धी तहँ आवै। देई शक्ति अनुरूप बनावै।।
सप्रिहवन्त होई लै जौ कोई। हरि मारग तें उल्टै सोई।।
पंच भूत साखा आराधिक। महिमाँ नाम सिद्धी तह बाधिक।।
ताके गुण सों तन विस्तारै। ऐसी करामति सों हारै।।
पंच भूत प्रमाणहि ध्यावै। लघुमा नाम सिद्धी तहँ आवै।।
छोटी देह करै तेहि शक्ति। भ्रमित होई तजै हरि भक्ति।।
सात्विक अहंकार करै धारण। प्राप्त सिध करै तहँ कारण।।
इन्द्री विषय भोग मन धरै। भवसागर कहूँ नहिं तरै।।
सूत्र रूप हरि को ध्यावै जब। प्रकासिक नाम सिद्धी पावै तब।।
तासु शक्ति त्रिभुवन गति जानै। भ्रमै चित्त हरि को नहीं मानै।।
व्यापक काल रूप हरि ध्यावै। तंह इष्ट सिद्धी चलि आवै।।
चहै सों जीवन सो करवावै। अन्त समय हरि पद नहिं पावै।।
आदि पुरुष को धारै ध्याना। सिद्ध अवस्था तहाँ प्रवाना।।
निर्गुण ब्रह्म ध्यावै सब कर्ता। वस्तासिधि तहाँ आचरता।।
ताहि लेई चाहै सो करै। हरि चरणन नाहि अनुसरै।।

जोग अस्थान ध्यान यह अष्ट सिद्धि प्रभाऊ।
हरि जन कों हरि चाहिए लहै नयन को भाऊ।।

सुध सति हरि रूप ध्यावै। सिधि अनुर्मा तहँ चलि आवै।।
षट उर्मा नहि व्यापै कोई। यह सिद्धि लेई तौ जोग न होई।।
ध्यावै नभ मन प्राण सबै विधि।। चलि आवै तहँ दूरि श्रवण सिधि।।
तीन लोक की बातैं सुनै। त्रिथा होई श्रम पुनि सिर धुनै।।
नैनन में रवि रवि में नैना। दूरि दर्शन सिद्धि आवै अैना।।
जोगी ध्यावै त्रिभुवन पैखै। जोग ध्यान नहि रहै विषय पै।।
जोगी ध्यावै हरि मन पवना। सिद्धि मन वेग करै तहँ गवना।।
चाहै जहाँ तहाँ चलि जावै। जोगी करतें जोग गवावै।।
सर्व रूप हरि को ध्यावै जो। काम रूप सिद्धी पावै सो।।
जो चाहै सो धरै रूपा। छूटै जोग परै भव कूपा।।
रूप आपनो धारण करै। सिद्धि प्रवेस कतहँ अनसरै।।
निज वपु छाँडि जाए दूजे वपु। ऐसो होई गवावै जपु तपु।।
मूल वाधि जीव सीस ही राखै। मृत्यु स्वच्छन्द सिद्धि तहँ भाखै।।
छोड़ि शरीर जाई जहँ भावै। सो जोगी हरि को बिसरावै।।
स्वर्ग लोक ध्यावै करि जोगा। सुर क्रिडा सिद्धि दर्शन भोगा।।
स्वर्ग लोक भोगै तहि मिलैं। सो जोगी के मन कों छलैं।।
सर्व रूप ईश्वर कों ध्यावै। यथा संकल्प सिद्धि तहँ पावै।।
जौ संकल्प करै सो होई। जोगी बैठे जोगहि खोई।।
सर्व नियन्ता ध्याई हरि गहई। अप्रतिहति गति सिद्धी सो लहई।।
जो पद चाहि करि कर्महि। ता को मन हरि पद तजि भ्रमहि।।

यह दश विधि मग वाधिक इन्हें लहै मति कोई।
केवल हरि के भजन तें पावै हरि पद सोई।।

ज्ञान सरूप सकल को स्वामी। सर्वात्म सब अन्तर्यामी।।
एहि विधि ध्यावै जोग स्थाना। तहाँ मिलै त्रिकाल ग्याना।।
भूत भविष्य और वर्तमानहि। जन्म मरण आपा परजानहि।।
ऐही कौतुक जो भूलै जोगी। हरि बिछुरै सो संतत रोगी।।

तीन सिद्धिए एकै ठौरा। नामली काल ज्ञान सिर मौरा।।
वेता होई सो तीहूँ काल को। जोगी काढ़ै काल जाल सो।।
प्रकृति गुनन तें न्यारो जानै। हरिहि जानि आरधना ठानै।।
तहाँ सिधि आवै आद्वंद्वा। सीत उष्ण व्यापै नहि दुंदा।।
सुख कारण जो लेवै इनको। जोग कमाई बेचै तिनसों।।
सर्व व्यापक सर्व अतीता। एहि विधि धारै धरि कै धीता।।
तहा प्रतिष्ठम सिधि मिलापा। ताहिन लीजै तजि कै जापा।।
अग्नि सूरज लता द्रुम जातें। उपज बहै ब्रह्माण्ड फला तैं।।
तासु शक्ति अभिअन्तर अर्था। सर्व कला को होई समर्था।।
जानि अचंभो जो कोई लहई। हरि तजि कै भवसागर बहई।।
सिधि अष्ट दस अरु ए पाँचा। तेईस मिलि सत जग परपाचा।।
तातें जो अवतारहि ध्यावै। छत्र चँवर लछन उल्यावै।।
ताकी कहूँ न पराजय होई। जन कों जीति सकै न कोई।।
सहित पारखित अरु आभूषन। ऐसे ध्यान मिटै सब दू:खन।।
सब सिधि ताकै होई अधीना। परजन लेई न हरि लौ लीना।।

जाकी सक्ति पाई सब सफल होई बलवन्त।
चरण चिन्ह अरु पारिखित चरणों संग भगवन्त।।

जाके बल जन निर्भय होई। उलटि सीधी सेवा करै सोई।।
तउ न हरि जन एनकों लेई। हरि संग गुरु चरन चित्त देई।।
सो अब सनुहु चित्त धरि ध्याना। जाते विघन न व्यापै नाना।।
सीश मुकुट मणि जटित विराजै। भाल तिलक केसरि को छाजै।।
मकराकृत कुण्डल विच कानन। पूरन शशि सुभ सुन्दर आनन।।
त्रिवली ग्रिंव चन्द्र दुति हासा। हृदय कौस्तुभ मनि परगासा।।
जुगुल बाहुजिमि पदुम सनाला। उर भ्रिंग लता और वनमाला।।
यज्ञपवीत पीताम्बर ओढ़े। आयुध चारि चतुर्भुज पोढ़े।।
नभ के वरगात अति सुन्दर। हृदय अछत व्यापै नहि द्वंद्वर।।
जमुन भँवर नाभी त्रैरेखा। कटि काछनी घंटिक विशेषा।।

जुगल जाँघ जिमि कदलि खंभा। संत काज करू आरंभा।।
सुर धुनि नेपुर शब्द कराहि। जाहि सुन मुनि मन हरषाई।।
चरन कमल महिमा जो जानै। जाकि महिमा वेद बखानै।।
लछन सुभवन्ती सौ चिन्हा। नाम प्रभाव सबनि को भिन्ना।।
सो सब वरनै सुनहु सचेता। हृदै धारि यहु भगति के हेता।।
प्रथम सुनहु संष के भेदा। शब्द वाद्य विद्या अरु वेदा।।
छत्र चँवर लछमी अरु कमला। महाराज लछन हिअ अमला।।
धनुक बाण ध्वज अंकुश औरे। जाके ध्यान रहै मन ठौरे।।
ऊर्ध्व रेख स्वस्तक अरगदा। चक्र सुभाऊ आनि हरि सदा।।
सुधा मीन घट दुईजके चन्दा। असगुण हानि सगुण आनंदा।।
अष्टकोण त्रैकोण सुलछण। तीन लोक की विभै विजछन।।
जुग घंटा अरु नौ जबूफल। जातें दायक विध सफल बल।।
महिमा अमित ढाल तरुवारी। रक्षा करहि दुष्ट सहारी।।
गौर खुर के जो ध्यानहि करै।। अनायासहि भौसागर तरै।।
अरु जो कहिए सुनि अकासा। पाप पुनि नहि आवै पासा।।
हृदयं कमल हरि करि सिंहासन। राजै तहाँ पदुम करि आसन।।
राज समाज पारखित संगा। बरने बहु विधि तेनक अंगा।।
नंद सुनंद महा वलिवंडा। कुमदी छन वल कुमड प्रचंडा।।
ठाढे आठौ दिसा समग्र। ठाढ़े गरुड़ जोरि कर अग्र।।
रवि शशि सुर अनुमादी। ततपर सेवै क्रिस्न अनादि।।
विषूकसेन व्यास गरु देवा। गनपति दुर्गा अरु सब देवा।।
ऐसे हरि कों जो जन वंदत। ता जन का मन सदा आनंदित।।
विघ्न न होई न हो सकामा। हरि को सेई जाई हरि धामा।।

पावै पद निर्वान सो जीवन मुक्ति रिसाल।
हरि संग हरि उर में रहै हरि तेहि सदा दयाल।।
विभौ विभूति समाज यस सकल तत्व को सार।
कहै मलूक हरि चरनन भजि लहै सो अपरंपार।।

ध्रुव चरित्र

हरि समान नहिं कोई सोई सुत जचिए।
सतगुरु रूप दयाल रूप सर्वज्ञ सबनि वर।।

ईश गनेश महेश आदि पावन सबई वर।।
अंतरजामी सबन के करन करावन हार।।
आदि भक्त ध्रुव को चरित कछु गाऊँ सुमति विचार।।

श्रीनगर उत्तानपाद राजा बड़ भागी।
यज्ञ दान व्रत नेम सदा हरि सों अनुरागी।।
द्वै रानी प्रिय तासु के सुरुचि सुनीति नाम।
उत्तम कुँवर जायो सुरुचि ध्रुव सुनीति धाम।।
सुरुचि प्रीति बसि राऊ अधिक मानै रस रीति।
सहज भाव अनुभाउ मातु ध्रुव सहज सुनीति।।
एहि विधि बीते कछुक दिन करत राज व्यवहार।
निजग्र राउ सुरुचि के तहाँ गये ध्रुव सार।।
राजा लिया उठाई हरषि पुंजक बैठारे।
देखि समै वै अंग अनंग छवि उमगी निहारे।।
सुरुचि सवति ईरखा करी कर गहि दिया उतारि।
ध्रुव गदगद रानी बस राजा कछु न करि मनुहारि।।
कहा अनमने कुँवर ध्रुव देखहु मन माँहि।
जहाँ बैठ वे जोग बूझि बैठिए तेहि ठाँई।।
जो अपने मम गर्भ ते सो बैठे एहि ठौर।
यह प्रजंक पावै सोई जो होई प्रजा सिरमौर।।
तबहि रोहि ध्रुव चले चले माता पे आए।
नैन भरे जल कंठ गिरा गदगद नहिं आए।।
मातु गोद बैठारि कै पूछि कहु सुत बात।
कै ध्रुव वचन कछु माता कै संग खेलत भ्रात।।

सुनु माता मैं गया पिता कै ठोर सकारे।
कर गहि लिन्हो मोहि अंक परजंक बैठारे।।
जननी उत्तम कुमार की कहे वचनहि झिझिकारि।
उठि तत छन सिंहासन तें कर गहि दियो उतारि।।
पिता कछू नहिं कहो वचन माता कहौ ऐसो।
राज अधिकारी होहु तौ या सिंघासन बैठो।।
औतरतेहु तुम गर्भ मम जौ होतो तुव भाग।
जाहु अपनी मातु गृह नहीं तुम्हारो लाग।।
धीर सुनीति सुनी समुझी सुत की एह वाणी।
चितहै सुनु सुत कहौ जो तुम्हरे कुल की कहानी।।
दुराधर्ष तप किया स्वांभु मनु सब राजन के राई।
अज अविगति परब्रह्म जो ताकै सुत भै आई।।
ताके सुत उत्तानपाद सुभ से सुत जाके।
राज भोग सम नर्क तासु रुचि उपजै ताके।।
जा भोगे दुख पाइए दण्ड देई जमराई।
नर्क भुगुति जम दण्ड भरि चौरासी को जाई।।
सुनु सुत और उपाई नहिं हरि सरणी भलाई।
गृह सुत सम्पत्ति राज सपन की नौ निधि पाई।।
जौं पे तुम्हारे हृदै में कछुक कामना नेहु।
तौं तुम कहो हमारो मानहु दीयो राम कों लेहु।।
सुनि माता के वचन ग्यान जागे सुधि आई।
मनुहुँ गवाई वस्तु बहुत देवसन में पाई।।
अति प्रफुल्लित वैराग भयो नेह गृह दे तूरि।
मनुहु मातु उपदेश जल पाई बढ़ो प्रेम अंकूर।।
प्रेम विवश ध्रुव भए मात चरनन लपटाने।
करी प्रणाम अति दीन जोरी कर विनिती ठाने।।
जेंऊ मात उपदेसियो तेंऊ हित करि देहु असीस।
सकल देव विहाइ तुव दाया भजौं चरन जगदीस।।

होई निकाम हरि भजहु तात दूजा विसराए।
मन वच कर्म करि प्रेम नेम एकहि लौ लाए।।
भरमाए भूलो नहिं माया के लौ लेस।
जानि अनाथ मिलै हरि तुम को सतगुरु के उपदेश।।
सीश नाई ध्रुव चले पिता तबहिं सुधि पाई।
मंत्री सो तब कही वसीठी बहुत विधि लाई।।
राज आपनो लीजिए आधो जो कछु होई।
वेद साधु विधि मुख मतें हमहि कल कब होई।।
तब ध्रुव मुख मुसकाई कही मन में करि विचार।
देत नीति करि विभौ करत श्रुति विधि वेवहार।।
जौ तप अरु दान तें पाछें धारैं कोई पाए।
तौ ब्राह्मण दाता सुभट दुहूँ लोक तें जाए।।
आगे कों ध्रुव चले मारग मधुवन के लागे।
भयो प्रसंति मन देखी सप्त ऋषि आवत आगे।।
करि प्रनाम चरनन परे मुनि दियो माथा पर हाथ।
करहु दया ऋषि ध्रुव कही मिलहि जेहि जौ दीनानाथ।।
ऋषि प्रसंनि होई कही ध्रुव तुम अति बड़ भागी।
बाल वेस गृह राज त्यागि भये परम विरागी।।
नारद गुरु मिलि हैं तुम्हें करिहैं तोष तुम्हार।
मिलि हैं श्री यदुनाथ पति पा सिर वचन हमार।।
प्रेम मगन आनन्द वचन ऋषि के विस्वास।
अति उल्लास मन माह बढ़ी दरस की प्यास।।
ऋषि नारद को मनहि में मिलहि मोहि जानि अति दीन।
एही सोच आतुर तब बाढ़ो भए लीन अति छीन।।
पीत वसन कर बीन तिलक द्वादश अंग सोहै।
गावत गुन गोपाल प्रेम त्रिभुवन पति मोहै।।
देखि दरस विह्वल भयो गहै चरन लपटाई।
जानि प्रेम की प्रीति लखि लीन्हों गोद उठाई।।

पीताम्बर सों पोछि कही .नारद सुभ भाषा।
कहु सुत मन कामना हरौं तुम्हारी अभिलाषा।।
यह सुनि कै ध्रुव मौन धरि करन लगे उनमान।
अन्तरजामी जानि कै पूछत जेवै अजान।।
कामधेनु तरुकल्प दुखित कों पूछत नाँही।
पुरवत सब अभिलाष जानि अंतरगति माँही।।
जेहि सुख शिव सनकादिक तुम रहत सदा आनन्दा।
अचिान संगति सेई सुख पाऊँ पूरन परमानन्दा।।
नारद तबहिं रीझि आपनो ध्यान बतायों।
रहीन गहीन आपनी जौग वैर दृढ़ायो।।
ध्रुव बालक यह तप कठिन नारद भए दयाल।
अपनी दया कियो मन कों स्थिर जो ते मिलहि किरपाल।।
आग्या दई जाहु मथुरा तहँ हरि आराधौ।
गुप्त प्रगट इन्द्री सर्व अपने वीस कीर साधौ।।
मन वचन कीर कै एक पल टरै न चित्त तें ध्यान।
छठए मास तुम पर प्रसंनि होई देहि दरस भगवान।।
यह सुनि कै ध्रुव चले वेग मथुरा में आए।
कालिन्दी तट सुभग देखि अस्थान बनाए।।

वाम चरन अंगुस्ट मोरि के ठाढ़े भये एक पाए।
उत्तर दिस कर जोरि अर्ध मुख रहे ध्यान उर लाए।।
मूल बाँधि षंट चक्र बेधि जीव राखों सिसहि।
त्रिकुटी सन्धि अडोल तहाँ दरसों निज ईसीह।।
प्राननाथ हरि हृदये विराजे लगी समाधि अखण्ड।
भई समाधि अचल जब जेहि घट दुःख सुख काके पींड।।
बीते कछु एक काल जानी जन की निज सेवा।
धारी चतुर्भुज रूप आये देवन के देवा।।
माँगु माँगु बहु बार कहि बोलै आनन्दकन्द।
उत्तर देई न सुख कों त्यागै पायो परमानन्द।।

अन्तरयामी जानी ध्यान चित्त तें आकर्षो।
टरो ध्यान भूई परो हिए तें नख सिषर्षो।।
गिरतहिं प्रभु दया करि लीन्हों गोद उठाई।
सावधान करि ध्रुव को तब बोले जादवराई।।
ब्रह्मा विष्णु शिव शेष सकल मोही को चाहैं।
वरुण इन्द्र जम धर्म वेद मो कों अवगाहैं।।
जो पावै सो मोहि सों मोहि समान नहीं दानी।
जो कछु मन की कामना ध्रुव माँगु हृदये अनुमानी।।
पानि जोरी ध्रुव कहो नाथ तुम सबकी जानहु।
मेरे नहीं कामना देव यह साँची करी मानहु।।
अभिलाषा जो तुम्हि तजी सोई सकल भय भीति।
सदा चरन तर राखिए बसौं हृदये करि प्रीति।।
सति सति ध्रुव सति कामना नहीं मम जन के।
सो मम भजन प्रताप व्यापना नहिं कछु मन के।।
ता तें तुव मन कामना फल नाहिं कछु संधानि।
करहु जाई गृह राज कछुक दिन लेहु वचन मानी।।
रचौं तुम्हारो लोक ध्रुव सब लोक लोक पर।
रिषी रवि शशि सनमान करै मैं दीन्हों यह वर।।
तब मैं तुम्हि बोलाई हों राखों अपने द्वार।
मेरो जन प्रिय मोहि नित सोचौं बारंबार।।
यह कहि हरि निज धाम गये सब देवन मानो।
ध्रुव पायो पद परम लोक लोकन में जानो।।
गृह गृह प्रति दूतन कही ध्रुव जन हरि को रोय।
सुनि राजा उत्तानपाद अति मन में कीन्हों सोच।।
तब नृप ध्रुव में जाई प्रणौ करि दोष छमायो।
हरि को दीन्हों राज करहु यह कहि घर लै आयो।।
सब विधि परम विचित्र पाँवड़े राज समाज समेत।
सोई सम्पत्ति सोई गृह यह गुरु गोविन्द को हेत।।

होई अननि ध्रुव राज करत परजा सुखदायक।
मातु विमातु अरु पिता बंधु सब के मन भायक।।
धर्म दानि श्रुति नीति जस मर्जादा व्यवहार।
सब विधि सब सुख पावहिं घर घर मगलाचार।।
कछु दिन किन्हों राज अवधि चलवे की आई।
नारद सों हरि कही ध्रुव कों आनहु जाई।।
गै नारद जब राजगृह ध्रुव परे चरन लपटाई।
हृदय लाई मुनि कहो तब हरि पठयो तुम्हि बोलाई।।
चढ़ी विमान सनमान तबै ध्रुव चले लोक कहँ।
ब्रह्मलोक शिवलोक चाहि सति लोक अहै जहँ।।
वपु विराट रूप कों जहाँ ग्रिव सथान।
छाप परी ध्रुव लोक की सब करत परदछिन मान।।
ध्रुव चरित जो पढ़ै सुनै अरु हित सों गावै।
साधु सग भजि राम सबै कामना पुरावै।।
जोग साखि वैराग जप करि सब होई निराश।
तीहूँ लोक में जस चलै कहत मलूका दास।।

इति श्री ध्रुव चरित्र संपूर्ण सुभ

रघुज चरित्र

सनक जन कहौ तुम्हें हो विस्न महेस।
नारद सारद शेष विरंचि सुक व्यास गणेश।।
श्री गुर जी तुम ही सकल वंदत हौं तुव पाए।
भगत वछ्ल रीति नीति कछु कहत है जन जस गाए।।
नौधा भगति प्रवीनमय रघुज हैं जो नरेशा।
तासु पुत्र बड़ साधु भरधुज अतिव लवेसा।।
सगर नगर नर नारी जे राम भक्ति लौ लीना।
संत टहल सरधा सुधा तनमय सों अधीना।।
प्रेम भक्ति हित जानि निरन्तर रत किहु राजा।
अश्वमेध जग्य करिय जाहि होई नत समाजा।।
सोन पत्र लिखि बाँधियो सावक के माथ।
करि समाज तमरधुज पठयो लछकर के साथ।।
हरषि कुँवर दल साजि चलो तब तुरै के साथा।
करत मनोरथ मनहि माँह चरन देखो जदुनाथा।।
तीस योजन जब नगर तें चलि आये एहि ओरा।
अति सुसाज सों देखियो आवत जग्य को घोरा।।
तब वकलधुज मन्त्री सों तमरधुज अस कहई।
अचित होई जौं मन्त्र अश्व कहँ कोउ नर गहई।।
विहँसि मंत्री ऐसें कहै भलहै उचित जो नाथ।
सहस छोहनी दल सें रक्षक हैं अर्जुन जदुनाथ।।
जदुपति नाम सुनत कुँवर हर्षित अति भएउ।
मन प्रसंनि होई विहँसि तुरै कहँ निजु कर गहेउ।।
सोन पत्र तब वाचियो श्री स्वस्ति युधिष्ठिर राई।
अर्जुन और विषकेतु आदि दै राजन बहुत सहाई।।
दुवौ अश्व एक ठौर कुँवर करि आगें डोलो।
दल बल विपुल बिलोकि पथहनि सोहास बोलतो।।

लीन्हे द्वैहै जगय के सनमुख आवत आहि।
उचित होई सो कहौ गोसाँई कहि पथ हरि मुख याहि।।
तब हरि हँसि अर्जुन सों यह कहवे अनुसारी।
एन के सनमुख भएँ पथ होई है निजु हारी।।
वै छत्री एनाहि हैं जो तुम जीता आहि।
बभ्रुवाहन जो तुव सिर काटौ दण्ड देत है याहि।।
तब पथ हरि सौं कहै कौन यह धर्म जो आहि।
भाजैं रन दै पीठि बदन देखलावैं काहि।।
जौ हमरें तुम सहाई हौं तौ काहै डर भगवाना।
भक्ति कनौड़े सदा रहत हौं मैं जानौ यह बाना।।
दुहु दल सनमुख आई सकल जोधा बल गाजै।
संख निसान धुनि गगन धरनि भरि अति भल बाजै।।
विषकेतु कामदि दैव बभ्रुवाहन बलवान।
मुर्च्छित करि कै सकल महारथ प्रचारेउ भगवान।।
तमरधुज करि प्रनाम विनै करि कहबे लागे।
पथ सहित हरि धरौं जाहु कहँ हमरे आगे।।
पकरि देउ लै भूप कों जग्य पूरन जेहि होई।
जाको ध्यान सबहि दुर्लभ है सिव हिव राखो गोई।।
तब अर्जुन लै धनुष बान कर अति झरि लायो।
कृष्ण कियो बहु जुधि सैंन सब मारि गिरायो।।
साबतीक मनकुर करि धरो कृष्ण को धाई।
पाएँ कर अर्जुन कों पकरो भलो बनो प्रभु दाई।।
तबहिं करनि छुटाई कै कृष्ण उताइल चक्र जो लीन्हो।
अर्जुन उगैनि छुटि वानबरी अति कीन्हो।।
विहंसि तमरधुज यों कहै हम जानत राउरि वाणि।
भीष्म बोले एई चक्र है करै न जन की हानि।।
कुँवर तबहि करि शान्ति मारि बानन हरि लाई।
महि पताल अरु व्योम सबै जै जै रहु छाई।।
मूर्च्छित क्रिस्न अर्जुन भै जै जै जीत भए।
लै तुरंग राज्य कुँवर चलो निजु नगर निकट जो गए।।

राजा सुनो है आवत तबहि मन सोच बढ़ायो।
अलप देव सन्हमा कारन कौन है जो आयो।।
तबहि मन्त्र राई कै कहो सबन विरतान्त।
कोपि राई कुँवर सों भाखो तोहिन कछु भांति।।
तैं क्रिस्न अर्जुन कों छोडी तुरैगहि कै केंऊ आनो।
जग्येस्वर भगवान नाहि कछुक मनहि न आनो।।
धिग तब बल पौरुषहि भक्ति प्रीति नहि तोहि।
जहाँ परे हैं समर मधि वे वहाँ देखवहु मोहि।।
तदनन्तर श्री कृष्ण सकल सैना सैं जागे।
तब अर्जुन को देखि विहंसि करि कहवे लागे।।
सेना सकल इहाँ राखि कै हम तुम तहवाँ जाहि।
विप्र रूप धरि तुमहि दिखाउ भगति रीत जो आहि।।
नगर पइठ तहि देखु पथ सब हरिनाम गावै।
शुक आहिक जो पछी सविधि हरि नाम सुनावै।।
नर नारी वृद्ध बालक हरि तजि कहहि न आन।
सुनत पथ मगन होत मन भक्ति रीति पहिचानि।।
जग्य आदि जहँ राज तहाँ सै सिख सिधाए।
महा बिर्ध तन खीन त्रिप को आसीस सुनाए।।
तबहि राई ऐसी कही तुम्हिन बूझिए यौं।
बिनु प्रनाय दोष बड़ौ है आसिष दीन्हों क्यौं।।
तबहि विप्र हँसि कहो भूप नहिं तोहि कछु दूषन।
आरतिवन्त की बात यहै हमहू नहि चूकन।।
कहो जाई मोहि जाँचिए तन धन तो हौ जाहि।
ब्रह्मा विस्नु महेश आदि दैव सब तुम्ह ही को चाहि।।
पुत्र वेवाह काज जात एहि मारग आयो।
जोजन दस परजंत सिंघ एक खान जो धायो।।
मैं बहुतै विनती करी बाल छोड़ मोहि पाहि।
कौनिंउ विधि मानै नहीं तै तेरे विध केंऊ न जाहि।।

दश जोजन परजंत कानन कहु है यै नाहि।
बाघ आदि जे दुस्ट जंतु नहिं इहाँ रहा है पाई।।
रछ्छक नरसिंघ हे भगत बछ्छल भगवान।
राम छाँड़ि दूजो नहिं जानै वचन कहहू परवान।।
बहु प्रकार मैं कहो तबहि एक वर जो दीन्हों।
माँ सों कहो न जात वचन बड़ अजगुत कीन्हों।।
नाइक है सो सुनावहू देत न लाउँ बार।
अधा अंग तुम्हारे माँगै तब ऊबरै मम वार।।
तब सुनि वचन द्विज राई त्रिया सों कहई।
बड़ो भाग यह भयो अर्ध अंग द्विज पति चहई।।
बलि बोले ए विप्र हैं मंगल आरति साजु।
बढ़ई बोलाई बेलबुंन कीजै भलो भयो यह काज।।
तबहि नारी हँसि कहै विप्र सो वचन सोहायो।
त्रिया आहि अर्धंग सो वेद पुरानन गायो।।
सो लै मोको दीजिए निजु सुत लेहु उबारि।
अन्तरजामी अहहुं सन्तमनि सति कहऊँ परचारी।।
तबहि विप्र हँसि कहै त्रिया नहि नाहर खावै।
वाम अंग नहिं गहै दछिन अंग त्रिय को भावै।।
तब तमरधुज यौं कहो पिता सम मम जो आहि।
अपने सुत को उबारी मोहि देस विवचन कहो याहि।।
द्विज कहै नाहर कहो कुछ और सोऊ अब तुम सों भाखौं।
इस्त्री सुत निज कर उतारि दै तब त्रिप तन चाखौं।।
तातें एक दिस तुम गहो एक दिशा तुम्हारी माई।
लै आरा माथें पर लावहु विघ्न सकल छै जाई।।
तब हि राई हँसि कहों बेलंबु अब काहे लावहु।
मन प्रसंनि होई तुरित आरा मम शीश चलावहु।।
लै आरा अति हर्ष मन सिर पर तुरित चलाई।
कंठ प्रजन्त भयो आरा जब वाम चछु जल आई।।
देखि विप्र उठि चलो काम मेरे नहिं आवै।
तबहि रानी विहँसि गई सों वचन सुनावै।।

दुहु कर माथो पकरि त्रिप करि राई सुनत उठि धाई।
अति प्रसंनि मन कहो विप्र सो कौन दोष मोहि लाई।।
आँसू पतन त्रिप भयो मोह तोहि तन को आयो।
या तें कौने काज विथा तोहि जाचन आयो।।
शीश धरे त्रिय विनति करै सति सुनहु द्विज राज।
अति ग्लानि वाम अंग उपजो जानि आपनो अकाज।।
दछिन अंग तुम लीओ सुफल होई अति हरसानो।
वाम अंग तुम तजो सो धिग आपुहि मानो।।
तब हरि हंसि सन्तुष्ट होई चतुर्भुज दरसन दीन्हों।
कंठ राई को लाई आपु सम अंग सब कीन्हो।।
जै-जै कार देवन कीयो औरु बरखेवहु फूल।
धनि भंगत धनि भंगतवछ्ल हरि मिटत भई सब सूल।।
तब होई किस्न प्रसन्नि राई सों वचन सुनायो।
माँगहु मोसौं भगत राज जो कछु मन भायो।।
सब कछु मेरे तुम्हि हौ और कछु नहिं चाह।
एही विनै सुनहु मम स्वामी सदा बसहु जन माह।।
एक विनति प्रभु करौं मानि निश्चयै कै लीजै।
कलजुग भगत अति दीन ताहि सों कछु हास न कीजै।।
एवम अस्तु हरि जी कहो पुनि अैसौ वचन सुनाई।
रछक होहु तुरैके सुनु त्रिप सें सुत सैन सहाई।।
राजा चला हरि संग अनंद तिपु पुर में बाढ़ो।
पहले फाँसी गाई मनहु काहूँ है काढ़ो।।
चलो दल साजि बजाई कै सो सुख वरनि न जाई।
कौन गाढ़ दु:ख ताहि के जाके क्रिस्न सहाई।।
कहत सुनत सुख होई तुरित दु:ख दारिद नासै।
अरिष्ट सकल छै जाई हृदै हरि भगति प्रकासै।।
साधु संग तेहि होई नित गुरु चरनन करि ध्यान।
दीन दयाल मलूक कहत है भगति वसि भगवान।।

इति श्रीमय रघुज चरित सम्पूर्ण सुभमस्तु।।

नाम मलूक दास लिखितं परिचयी

मलूक दास

नमो-नमो गुर चरनन नमो पुरुष करतार।
जुग-जुग धारो जीव हित संत रूप औतार।।

श्री गुरु चरनन को सिर नाँउ।।
हर्ष वंत होई मंगल गाँऊ
आदि पुरुष यह कीन्ह विचारा।।
महा दुखित: जीव संसारा
जुग-जुगत तजाहि धरि देहा
ताते जीव लहै पद नेहा

नाम देव, कबीर, रैदास। जाते जीव लहो विस्वास।।
एहि विधि साधु अनेकन भये। बहुतक जीव मुक्त होई गये।।
भव एक अंस जाई संसारा। पावै जीव मुछ का द्वारा।।
मारग सन लाख का रहा। तब करतै विचार एक गहा।।
हस रूप अंस एक जावै। सो जीवन उद्धार करावै।।
एक पुरुष कों अग्या दीन्हा। तब तिन जगहि पयाना कीन्हा।।

वैसाक वदी तीथि पंचमी संवत सोरा सै एक।
जगत गुरु प्रगट भए मलूक प्ररूष जगदीस: तास।।

करे माह खत्री के ग्रेहा। प्रगटे भगत आई धरि देहा।।
मात पिता साकत अधिकारी। तेहि कुल उपजे मंगलकारी।।
वेद विहित करि नाम धराए। कुल को धर्म सबै करवाए।।
नाम मलूक धरो तब ताको। रासि वर्ग गनि ब्राह्मण भाखो।।
यह तौ अंश भागवत होई। सकल कुलहि उधारे सोई।।
जेंऊ जेंऊ बालक होई सयाना। तेंऊ तेंऊ तछन भगति निधाना।।
दया धर्म मन में अधिकाई। राम भजन सुमरिन चित्त लाई।।
दुखित जीव पर करुण करही देहि तेन्हहि चोर घर करही।

अन्न वस्त्र जो गृह मे पावैं। नागे भूखेहि आनि पवावै।।
मात पिता कहैं यह बालक। उपजो आई कहाँ घर घालक।।
बनिज कामरी का घर होही। कछुक दई बेचन को सोई।।
कछु बेची कछु नागेन दीन्ही। संत संग मिली भगतिहि कीन्ही।।
बौराते सब कहैं बालकहि। जपै सो करता पुरुष पालकहि।।
बारह वर्ष ऐसे ही बीते। आत्म चीन्हें आपा जीते।।
राति देवस मन सुमरिन करहो। संत रतन हिदये में धरही।।

जेन केन प्रकार सों घर तें लेहि निकासि।
सेवा करहि साधु की निस दिन एही विलास।।

सीखे बोधि पूँजी कै दीन्ही। सो मलूक हाथ करि लीन्ही।।
नित उठि हाट बजारहि जाँहीं। बेचहि कामरि जो कछु बिकाँहीं।।
एक दिन सौदा बिकानो भलो। मोट उठाई घरहि कों चलो।।
बैरागी दस बीसक आगे। भूखे बहुत कछुक एक नागे।।
पूँछो भगत मलूका तमहीं। कहेउ दास हम तुम्हरे अहहीं।।
तब तिन कहो एतनो जस लेहू। हम भूखे कछु चर्वन देहू।।
तब कही बैठहु एहि ठाँऊ। देहि राम सो तुम पें ल्याँऊ।।
यह कहि कै आए घर माँहीं। कछु एक ढूँढ़न भीतर जाँहीं।।
कोठी नाज जोरायो माता। ताकों जाई लगायो हाथा।।
बाँधी मोट काहू नहिं जानी। सो साधुन के आगे आनी।।
करी रसोंई भोग लगायो। त्रिपित भये राम गुण गायो।।
एक दिना माता गै ताहाँ। कोठी अन्न चुरायो जाहां।।
जौ देखै तो कोठी खाली। परी रिसानी पाछे चाली।।
कोठी देखि भयो मन सोचा। दास मलूकहि लावै दोषा।।
तबहि राम एक कला देखाई। रीति कोठी फेरी भराई।।
बारा बरस को पूरा नाँही। यह चरित्र है बालक माँही।।
लरिका नहिं कोऊ औतारा। यह माता मन माँही विचारा।।

उठे विहान वंदना करै। जो माँगे सो आगे धरै।।
खाली बासन जो घर धरै। मात जाये तब देखे सब धरै।।
देखी मातु मन संका आई। अचरज लखि काहू न जनाई।।
ता पाछे कीयो विवाह विचारी। कीन्हीं रीति कुल वेवहारी।।
ब्याही बहू आनी घर माँही। तासों भक्त नेह न कराँही।।
माता विनै करै पग धरहीं। सन्तत काज विनै बहु करहीं।।
बीतें काल पुत्री एक भैयाई। पुत्री सहित सोऊ मरी गैयाई।।
माता पिता सों कही सुनाई। भये वेश्नौ होई भलाई।।
जिय विस्वास दुहूँ मिलि आने। भए वश्नौ मन न संकाने।।
बहुरी दुवहु मिली मत ठहरायो। पूँजी दीन्हीं बनिज करायो।।
सिखदेहि बेटा बेचहूँ कमरी। विढ़ता करि कै जोरहु दमरी।।
विढ़तो करि खरयो सब माँही। हम तुम तें कछु चाहैं नाँही।।
विढ़तों करि कै खरचिए पूँजी। राखें बान बनिज नहीं पूँजी।।
लीन्हों दास बनिज मन धारो। वचन मानि तब उदिम कारो।।
वाकी कमरी दास बिसाहीं। नित उठी हाटहि बेचन जाहीं।।
बेंचहि खरीचहिं साधुन माँहि। मातु पित्त की संका नाँही।।
करहि महोछा जोरहि संता। मन निहकाम भजहि भगवंता।।
अंतर उपजी नौधा भगती। कबहु उछाह कबहु आसक्ति।।
करहि साखि यह अस्तुति रामा। हीर भंजि करहि आपनो कामा।।
सुन्दर दास तिन को नाम। कालहि पाई गये हरि धाम।।
क्रिया–क्रम सब विधि कीन्हा। भगतहि सबन सिखावन दीन्हा।।
उदिम करि पालिए कुटुंबा। तुम्हरी बड़ी बातु यह अम्बा।।
सीख दई सब धरहि सिधाए। दास मलूक चरन चित्त लाए।।
दशा प्रेम लदुना आई। कबहु अनंद कबहु विकलाई।।
काँटा काँकर मग में होई। चले जात अलगावहि सोई।।
देखि–देखि सब अचरज मानहि। भया देवाना यों सब जानहि।।
साखी पद जो आपु बनावहि। भोग देवाने का कही गावहि।।
सावधान रहैं बहु भाँति। लोग कहैं एन छोड़ी भ्रांति।।

बेचहि कमरी सन्तन पोषै। बहुविधि बंधु कुटुंब समोखै।।
कछु दिन गये उठो मन माँही। श्रुति मरजाद हमरे गुर नाँही।।
गावत पद आनन्द समाना। मोटरी लै हरि घरहि तुलाना।।
आनि बरठे मोट उतारी। तब हरि मातहि लिय हंकारी।।
माता कहै कहँ तै ल्यायो। कौने सिर धरि मोट पठायो।।
दया करी बोले बनवारी। दास मलूकै दीयो विचारी।।
टका मजूरी मेरी कीन्ही। साधु जानि मानि मैं लीन्ही।।
टका मजुरी मोही दीजै। माता हमरो विदा जो कीजै।।
तब मातै यह मत मन गहा। दास मलूका पाछे रहा।।
अन्तरजामी बूझी बाता। मोट लेहु मति सोचहु माता।।
माता कहै छिन एक बैठहु पूता। घामे आए थके बहूता।।
बैठि खाइए रूखा टूका। जब लगि आवै दास मलूका।।
तब मता एक रोटी ल्याई। बैठि एकान्त प्रीति सो खाई।।
ग्रास एक छोड़ो तेहि ठाई। भगत आपने की सुधि आई।।
अन्तरध्यान मजूर जब भयो। तब घर दास मलूका तेरी मति डोली।।
मजूर को मैं राखों बैठारी। मोट अपनी लेहू संभारी।।
सुनत मजूर नाम चरन लै परे। धनि माता तैं दरसन करे।।
हे माता कहाँ मजूर है बैठो। दीयो बताई भक्त तहँ पैठो।।
देखत तहाँ ग्रास तिन पायों। सो जूठन मलूक तब खायो।।
खातहि चिमितकार भयो औरे। दै केवार बैठे तेहि ठौरै।।
हठ कीन्हों हरि सों लौ लायो। दया करी हरि दरस देखायो।।
तबै मलूक चरन गहि परै। परम पुरुष कर माथे धरे।।
दास मलूक विनति लाई। अब मोहि जग की लगै न वाई।।
आपुहि आपु कियो उपचारा। चेला गुरु आपु करतारा।।
दछिन देश द्रावड़ गाऊँ। श्री वल्लभ प्रगटे तेहि ठाऊँ।।
ताकों हरि जी आग्या दीन्ही। जैनही साखि प्रगट तेहि किन्ही।।
तेन कें भावनाथ अधिकारी। देव नाथ तेन तें सुखकारी।।
ताकें परसोतम सब जानै। रामा निजु की संपदा मानै।।

ठाकुर की आग्या तें चलै। करे माह मलूकहि मिलै।।
तब मलूक अपने घर ल्याए। दिछा लै उत्साह कराए।।

निर्भै भक्ति दिढ़ानी खेलत खेलनि रास।
निसु दिन सेवा साधु की भाखै सुथरा दास।।

कछु एक उदिमहु मन धरहिं। उपजै कछू महोछा करहिं।।
एक दिना भगत पेठहि गैया। चले वचि मोट सिर लैया।।
आवत धरहिं मोट गुरु वाणी। अन्तरजामी तबहीं जानी।।
होई मजूर आगे चलि जाँहि। तासों भगत मोट उतराँही।।
आत्म दृष्टी कहो कर जोरी। भैया कहा मजूरी तोरी।।
मोट हमारी घर लै चलो। जो माँगहु सो दैहों भलो।।
तब मजूर हँसि वचन सुनायो। टका आपना मोल बतायो।।
कही अधिक देहों एक दमरी। लेई मोट सिर ऊपर कमरी।।
लै मोट मजूर घर चाला। बहुरि भगत मन माह संभारा।।
मानि आनन्द मनहि में लीन्हाँ। कर तैं यह विघन दुरि कीन्हाँ।।
अब मेरी पचि मरै बलाई। झूठे जग सों को पतियाई।।
जो प्रभु जी तू क्रिया करी। सर्व रूप दरसौ तुम हरी।।
भक्त कही सो मानी राम। तब तें आधि भये निहकाम।।

दरस भये पट खोलो सहज भयो प्रकाश।
घट-घट परचै प्रगटो गावै सुधरादास।।

प्रभु निहकाम कीयो करि मोषा। मिटि गई जन्म जन्म के दोषा।।
दहु दिस भयो नाम प्रगासा। दुखित जीव की पुरवैं आसा।।
अनभै दशा भक्ति विस्तारी। सब विधि पुरवैं पैज मुरारी।।
बहुत सिख होई संसारा। पलटै दसा होहि भौ पारा।।
जौ कोई जीव सरनी तकि आवै। ताकौ आवागमन मिटावै।।

जो कोई पास परोसे रहै औरक कोई बात न कहै
जो कोई माला तिलक बनावै। ताकै बिघन सकल मिटावै।।
जो कोई सिष होई मन जानी। ताकों भेटे सारंग पानी।।
जो कोई दरसन सहजहि करै। ताको पाप सकल झरि परै।।
जो कोई राखै वोन ते रोसा। तेन को लागै कोटिक दोषा।।
जेन पर दिस्टि क्रिया कै करै। ताकि महिमा कही न परै।।
जब तें दरसन राम देखायों। तब तें परचै सबहिन पायो।।
साधु अनेकन को आवैं। भाऊ भक्ति अति देखि अघावैं।।
कछु दिन बीतें मातु समानी। अधिक प्रीति गोविंद ते ठानी।।
माता पिता दोऊ मर गये। आतम ब्रह्म रूप समाये।।
बाभन भाई परोसें जैते। पावें रोज भूखे सब तैते।।
देस देस के यात्री आवैं। सिख होहि अरु भेंट चढावैं।।
हिन्दू मुसलमान जो कोई। आरति जो पावै सो सोई।।
भूखे पसु कुकुर आदि जो आवैं। दयावन्त ताहूँ अघवावैं।।
हिन्दू तुरुक में विधवा जेती। छाजन भोजन पावै तेंती।।
परदेसी कोऊ कहूँ तै आवै। दया करे ताहूहि अघवावै।।
रोगी दोषी होई जो कोई। ताहू को उपकारज होई।।
काह की आशा जिय नाहि। हरि बिढ़वैं जन खरिचै खाही।।
दिन-दिन हरि सों बाढ़ै हेता। कोई चेत कोई कहे अचेता।।
दया लागि मग काँकर टारहिं। कुबहूँक मंदिल आपु बुहारहिं।।
मारग जहाँ लोग दुःख पावै। लाई मजूर आपू बनवावै।।
पर कारज को बड़े समर्था। हरि सो लीन न चाहै अर्था।।
बहुरि राम ने कला बढ़ाई। अपने जन को दइ बड़ाई।।
ख्वाजे करक पीर एक रहते। मुसुलमान बड़ाई कहते।।
सब पीरन में महिमा जाकी। कितेब कुरान बड़ाई कहते।।
मासु खहि मद पानहि करैं। काहू की संक्या नहीं धरै।।
ऊँची करामाति सब जानै। और न कोई पीर समानै।।
जहँ तहँ फिरै पान मद करते। हाथ सुराही प्याला धरते।।

एक दिना झुकि परे बजारा। दसा विदेह न कछु संभारा।।
मदिरा बरतन कर तें छूटा। गिरी सुराही प्याला फूटा।।
भयो क्रोध तेहि ठाँऊ पग मारा। बहुत अगाध भयो सनारा।।
सब मिलि बाधै नहीं जोरहई। कहैं सराप पीर की अहई।।
हाकिम और चौधरी बषायो। बरसे फूटे ग्रेह ढहायो।।
लोग पुरातन कहै बिचारी। ख्वाजे करक लात ईहाँ मारी।।
दिन-दिन बाढै जल के बहते। पहुँचो जहाँ मलूका रहते।।
दास मलूका यह मन आई। आए चल बँधाइये भाई।।

दास मलूका गै तहाँ पार बँधावन हेत।।
अपने हाथ पषान बहु डारि दए करि नेत।।

बहुत मजूर लाई तह दीन्हा। खरी मजूरी तिनकी कीन्हा।।
जै मन ईट पषान जो ल्यावै। ते तेन टका मजूरी पावै।।
कोट पुराना शहर पुराना। जहँ तहँ परे ईट पषाना।।
बहुत मोल दै चूना आनै। नारे माह डारि कै सानै।।
पाथर ईट आनि तहँ डारैं। लालच ते मजूर नहीं हारैं।।
तुरुक कहैं मलूक सों आई। यह नारा बाँधा नहीं जाई।।
ख्वाजे करक लात यह मारी। बहुत बँधाई रहे पचि हारी।।
कही मलूक वह पीर कहावै। वोन तें कोई दु:ख नहीं पावै।।
तेनही हमको कही सुनाई। तुम पै मति दु:ख पावै भाई।।
जेऊ जेऊ नारा बाँधत जाँही। बहुतक दु:ख पावहि मन माँही।।
तिन पुकार हाकिम सों कीन्हाँ। सबै कहा मलूक दु:ख दीन्हाँ।।
गोर मसीद के पाथर लेई। नारे माह डारि सो देई।।
तेहि ते हम सब दु:ख पावा। ताते पास तुम्हारे आवा।।
हाकिम कही वह राह बँधावै। जाते कोई दुख ना पावै।।
कैसे मुसलमान तुम अहहू। करत बन्दगी भला न कहहू।।
ऐसे बहु विधि करहि उपाधि। लगै न काहू की फरियादी।।
मलूक के मन नाँही अहंकारा। जहाँ तहाँ करतर पवारा।।
बेगि बँधायो नारा सोई। तहँ बसि लोग सुखी सब होई।।

हाकिम कही सुनो रे भाई नाहक ही फकीर सताई।।
तब ते कला अधिक सी बाढी। दुनिया रहै दरस को ठाढ़ी।।
उन पीर ने सपना दीना। मलूक बराबरी केयो तुम कीन्हा।।
दोस्त एक रंग आलम के प्यारे। इन ते अल्ला रह न न्यारे।।
उनके कदम तले जा परो। जेरा श्राप वा मत तम करो।।
उठ विहान तब पायन परे। दिए प्रसाद माथे कर धरे।।
सब पर दया एक सी होई। नाम नेम बिन रहै न कोई।।
काहू के घर दे उठाई। अरु काहू की छान्हि छवाई।।
जथा सक्ति सब कोउ पावै। द्वारें तें कोई निभुख न जावै।।
आग्याकारी हाकिम आवै। विमुख होई सो रहन न पावै।।
बंदी छोराई वस्त्र तेहि दैही। परउपकार करहि जस लेहि।।
बहुत दुखिन को कन्या ब्याही। भगति करैं हरि गुन औ गाही।।
कबहुँ मारत चोर छोड़ावैं। दुखित देखि आपुन उठि धावैं।।
द्वारे आगे बसै बजारा। पान मिठाई सकल पसारा।।
जात्री सो बिसाहि लै जाँही। देखि लुटाई सो बालक खाँही।।
कथा किरंतन सुमरिन होई। निकट महंत रहै सब कोई।।
नीकी भाँति रासि करवावै। करै विहार साधु सुख पावै।।
मकर नहान जौ आवै कोई। आवत जात करे सुख होई।।
इत उत हरि जन आवहि जाँही। पहुंची साखि देश के माँही।।
काहूँ जन मुरारि सो कहो। जन मलूका करे (कड़े) में अहो।।
कलि गोरख मुरारी अधिकारी। जेन के संग सदा बनवारी।।
सुनत विचार किया मन माँही। कोउ जन प्रकटो कलि माँही।।
दरसन को मन माह विचारा। चले तुरन्त नहि लायो वारा।।
निगुण आपु अती तम हंता। संग अतीत चारि सै संता।।
पहुँचे आई बाहेरे गाँउ। आसन सबनि किए तेहि ठाँउ।।

बैठि तहाँ सब मिलीकरी घीऊँ खिचरी की आस।
दास मलूक सोई करी भाखे सुथरादास।।

ब्रह्म रूप मुरारी जी स्वामी। दास मलूका अन्तरजामी।।
करि समाज मिलवे को चले। लखि मुरारी आगे होई मिले।।
भैंटि अंक भरि दरसन पाये। दास मलूका द्वार लै आये।।
भयो प्रसाद किया सनमाना। इच्छा मन भोजन मनमाना।।
सत खुलासे भरि-भरि पायो। त्रिप्ति भये गोबिन्द गुन गायो।।
सावधान होई बैठे सन्ता। गुन गायो मलूक भगवन्ता।।
सुनत मुरारी प्रेम रस भीने। आत्म दरस मलूका चीन्हे।।
हिदये मुरारी बन्दना करे। प्रगट मलूक चरन लै परे।।
रिझे तब मुरारी मन स्वामी। दास मलूक अन्तरजामी।।
कही मुरारी मलूक औतार। जीवन हित प्रगटे ससार।।
कलि में भगति निसावज बहु। सब जीवन का संक मिटावहु।।
कलिछ जुग चौकी तुम्हारी भई। सब जीवन को सुझाव दई।।
चरचा ग्यान दुहूँ जन कीन्हा। संत दिढाव भक्ति को चीन्हा।।
अलख राम सों कह्यो मुरारी। मलूक रूप आप बनवारी।।
एहि विधि रहि कछु दिन सुख पायो। मकर मास को मेला आयो।।
तब मुरारी जी अग्या लई। सुरति त्रिवेणी की जब लई।।
आई प्रयाग नहाए जबहि। आखारा करि बैठे तबहि।।
धरै ध्यान करै असनाना। बहुविधि होई साधु सनमाना।।
एक दिन प्रभु ऐसी निमाई। रसोई नहि पहुँची आई।।
सुरति माँह मलूक तब जाना। रहे मुरारी भोजन बिनु पाना।।
थैली माह सत मुद्रा कीन्हा। आपुहि लै गंगा को दीन्हा।।
करि गंगा सों बहु मनुहारी। कर तें सो थैली दिहुँ डारी।।
मातु साधु तुम्हरे हैं अंसा। बेगि देहु लै होई न संसा।।
मुरारि जी नहान जब आए। चरनन तरे दति सो पाए।।
देखि दर्व विचार मन कीन्हा। गंगै कही मलूकै दीन्हा।।
कहि मुरारी भोजन करवाए। गगा हाथ मलूक पठाए।।
प्रकट बात यह कहि मुरारि। साखी परि संतन मह सारि।।
प्रभुजी जन का बोझ उठाया। दई भेंट गगा कर दाया।।

बहुरि एक दिन ऐसा भैया। सूरोदीन चोर एक गैया।।
सुनत मलूक देवानहि गये। देखि सबै उठि ठाढे भये।।
हाकिम कही कहा प्रभु आए। आज्ञा हुति सों कहिन पठाए।।
कही मलूक चोर यह छोड़ौ। या कार तुम तें कर जोड़ौ।।
छाँड़ि चोर अरु दीन्हीं भेंटा। लिया छुड़ाई बहुत संकेटा।।
साधुन को चरणामृत दीन्हा। माला तिलक भद्र तेहि कीन्हा।।
कहो जाई तीर्थ करो भाई। साधुन की सेवा अधिकाई।।
भयो क्रितार्थ निर्मल चोरो। चित्त धरि गयो देसन्तर वोरा।।
ऐसे अधम परम पद पावैं। जाके सीस साधु कर लावैं।।
बनखण्डी एक नाम नरायन। बड़े भगत अरु विश्नु परायण।।
तेन मलूक सौं प्रस्न विचारी। बहुत भाँति कीन्हीं मनुहारी।।
कहो मलूक वचन परवान। मैं पूछौ अपने अग्यान।
स्वामी दयावन्त है कहिये। पूछत सोहि छोभ ना लहिये।
सबै कहैं हरि ढोई मोटा। सति कहो जिनि राखहु ओटा।
कैसी भई सो मो सों कहौं। कैसे मिले सो कैसो रहौं।
सुनहु साथ हम तुम्हें जैसें। अरु जहँ देखहु हैं तहँ तैसें।
मारग जात मारगरू बाना। तब मजूर होई आई तुलाना।
एका आपनो मोल बताया। लीन्हो बोझ घरहि पहुँचाया।
याको कहा अचंभा भाई। अब को ढोवत रह सहाई।
कबीर के घर वरदी ढरायो। रैदास हु को पारस पहुँचायो।
नाम देव हित जहँ-तहँ धायो। धन्ना जाट को खेत जमायो।
सेन रूप होई मर्दन करेऊ। मीराँ बाई को विष हरेऊ।
तीलोलचन की वृत्ति कमाई। माधो दास के भये सहाई।
अचरज कहाँ साधु सुखदायक। सब जीवन को होत सहायक।

दोहा

अन्तर व्याप राम जी बाहेर सतगुरु रूप।
सब जीवन के कारने पूरन ब्रह्म सरूप।।

बनखण्डी हँसि पाएन परे। दास मलूक साथ कर धरे।।
महाराज हम सरन तुम्हारी। सतगुरु पूजी आस हमारी।।
पुनि मलूक मन ऐसी आई। कछु दिन रामति करिए जाई।।
और विचार विचारो ऐसो। जहाँ तहाँ सब साधु वैसो।।
वोन साधुन को दरसन करिए। प्रिथी प्रजटन या विधि करिये।।
ऐसी उपजी मन में लोचा। जगन्नाथ का मारग सोचा।।
यह ठहराव आपु में कीन्हाँ। काहू कछु लखाउ न दीन्हाँ।।
आधि रात सुन्न की बेला। दास मलूक निरन्तर खेला।।
चारौ दिस की सुरति विचारी। मेटि तिमिर कीन्हीं उजियारी।।
दास आपने सुवास बसाए। साकंठ लै लै भगतिहि लाए।।
जगन्नाथ को दरसन भये। परषोत्तम छत्र चलि गये।।
मिली साधुन को दरसन लीन्हाँ। जहँ जहँ रमे न काहूँ चीन्हा।।
जगन्नाथ सतगुरु औतार। तेन तें मिली सब धर्म सुधारा।।
उनचास कोए पइधा फिर आये। जगन्नाथ को माय नावे।।
उनकी अग्या ऐसी भई। रोम-रोम दाय निर्मई।।
मलूक आपने आसन जाहूँ। कछु दिन सुखी करहु सब काहूँ।।
तुम तें हम नहीं छिन्न न्यारे। जहाँ तहाँ घर बन रखवारे।।
बाचा रूपी फेरी पठाए। अग्या ले तब घरहि सिधाए।।
जब तें आस्पन तजि के गये। बहुत दुखित लोग इहाँ भये।।
जैसे दुःख गोपिन को सुनो। तैसो सिष सेवक को बनो।।
सिंगार चंद लघु भ्राता एका। उपजो ताके ज्ञान विवेका।।
समाधान सबहि को कीन्हा। बहुविधि सेवा करवें लीन्हा।।
दूनी सेवा साधू की करई। माँगै कछू सो आगे धरही।।
एहि विधि मास पाँच चलि गये। संगी देह वियोगी भये।।
बहु वियोग को वरनै पारा। मलूक जी तब मिलने विचारा।।
कोस पाँच पर बैठे आई। प्रगट भए सबहिन सुखदाई।।
पाँच कोस काया में जानो। ताही को कोउ देत बखानो।।
उठि धाए सब कियो मिलापू। चले मलूक नाउ चढ़ि आपू।।
ग्रेह में आई पहुँचे जबहि। भाऊ आरती कीन्हीं सबहि।।

जेन वोन सा जेऊ प्रीत लगाई। तिन को तैसे भये सहाई।।
पिछिले दु:ख तब सकल मिटाए। होई प्रसन्नि सब कों।।
त्रिपिताए छठए मास करे में आए। शिष्य यात्री घर ते धाए।।
दिन दिन बाढ़े कला घनेरी। माया भई रहै नित चेरी।।
मोक्ष धर्म काम और अर्था। देवे को अति बड़े समर्था।।
पूर्व, पछिम, उत्तर, दक्षिण। चारो बरन चाहि लैं सिछन।।

अविगति महिमाँ साधु की, राम भजहि जे नित।
गुरु गोबिन्द सहाई जेहि, बर्सहि क्रिस्न तेहि चित्त।।

हाथ जोर कीनी मनुहारी। गुरु मलूक मैं सरन तुम्हारी।।
महाराज मोहे दिछा दीजै। बाँह पकर आपन कर लीजै।।

और कथा एक सुनहू निराला। भगति सुभउ प्रेम प्रतिपाला।।
काएथ एक प्राग को बासी। वित उनमान मलूक उपासी।।
पर मन को लोलुप अरु कामी। गुरु मलूका अन्तरजामी।।
तातैं अति डरपैं दु:ख पावै। चरण ध्यान चाहै नित ध्यावै।।
जेऊ-जेऊ उनहि ध्यान ठहरावै। आपहि अधम जानि पछतावै।।
तो सुनि धायो सन्तन साथा। दरसन कियो चरनन धरि माथा।।
चादरि फेंक तेहि छिन आयो। भद्र कराई ताहि पहिरायो।।
भए दयाल नाम कहि दीन्हा। अन्तरगति तेहि सीतल कीन्हा।।
दीन्हीं पावरी निज जन हेरी। गही लाज अपने जन केरी।।
कछुक कामना पुरई ताकी। बकसी चूक हती जो वाकी।।
एहि विधि सबहिन को हितकारी। औगुण मेटि देही सुखभारी।।

दुखिया को दुख मेटि कै सब की पुरवै आए।
गुरु मलूक की परचै गावै सुथरादास।।

काल दुकाल परे जब आई। सदाव्रत दहि अधिकाई।।
साहिजहाँ पातसाह पुनि मूए। दुंद देश में चौहुँ दिस भए।।

औरंगजेब ताहि सुत एका। बैठि राज तिन किया विवेका।।
काल रूप पातसाह होई बैठा। बूझन भाऊ छवौ घर पैठा।।
साहिजहाँ सुत औरंगजेबा। चलै सुपंथ कुरान किताबा।।
वेद पुरान मने करवावै। बामन पूजा कर न पावैं।।
काजी मोलना की करै बड़ाई। हिन्दू को जजिया लगवाई।।
हिन्दू दाण्ड देई सब कोई। बरस दिनां मे जैसा होई।।
जहँ लगु स्वाँगी स्वाँग बनाए। पातसाह सब तुरित मिटाए।।
नगर कोट की कला विचारी। कला न देखा मुढ़ी बोढ़ारी।।
तब बहौरी मथुरा चलि आयो। पाखण्ड देखी सब मंदिल ढहवायो।।
काशी में देवता विस्तारा। कला न देखी सबै बोढ़ारा।।
द्वारिका माह तुरुक पठाए। रनछोर को अस्थान ढहाए।।
बद्रीनाथ गोकुलहि उजारा। जगन्नाथ कौ किया त्रिस्कारा।।
बहुरि निकट मन माह विचारा। परसराम को देवल बोढ़ारा।।
ठाकुर तें कोई अधिको नाँही। होनहार उपजै मन माँही।।
पाछें सब भेष विचारा। काके माह प्रीति करतारा।।
पहिलें अपनो भेषन्ह सोचा। कछू न देखा मानो पोचा।।
नागे दुई भल तुरुक फकीरा। गदनि मारी गनी न पीरा।।
यह सुनि सबै फकीर डरानै। सुधे चलहि न भाषहिं ग्याने।।
बहुरो जिदे तुरुक बोलाए। अलह सांचु नहि तिन में पाए।।
बहुरी भेद जोगी का लीन्हाँ। को वोनहूँ शंका मन महँ कीन्हाँ।।
दूजो संन्यासी अधिकारी। वोन को मन ते हीयो उतारी।।
और पुनि पंडित तबै बोलाए। कहि भिखारी आपु छौड़ाए।।
चौथें जंगम मन में आए। पंचमें जती झुठ सब पाये।।
लाल बैरागी तजो शरीरा। मन में बहुतै मानी मारा।।
नरायन दास सिष भगवाना। वोन को ल्याए पकरी देवाना।।
दया भई देखि सुनि नामा। ता को फेरि पठायो धामा।।
नानिक के सिषन को बूझा। वोनहूँ माह राम नहि सूझा।।
डरि शरीर छोड़ि हरि राई। तेग बहादुर प्रगटे आई।।

पातसाह तेहि पकरी हकारो। कला न देख गरदनि मारो।।
एहि विधि हिन्दू तुरुको विचारा। साचु बिना फोट व्यवहारा।।
झूठे ही संसार पुकारै। मलूक को पातसाह हँकारै।।
बारक दोई मलूक ने सुने। तब मन में मिलबे को गुने।।
जहाँ गमि काहू की नाँहि। गुप्तहि गये मलूक तहाँहि।।
पातसाह देखि रहो तबहिं कहो मलूक फकीर हैं हमहिं।।
तत दरसी ताके मन आए। मिटी कल्पना साचु के पाए।।
साचु देखि रहो तबही। कही मलूक फकीर हैं हमही।।
तत दरसी ताके मन आए। मिटी कल्पना साचु के पाए।।
साचु देखि वाका मन माना। माला तिलक सो उनिम जाना।।
दुर्मति सगरी साधु मिटाई। छोड़ो द्रोह दया मन आई।।
आसन तें कबहूँ नहिं हलै। सब कहै पातसाह सों मिलै।।

मिलि आए पातसाह कों कहै सबै संसार।
कहै सुथरा जोई सुनी जानै सिरजनहार।।

यह कीरति प्रगटी जग माँही। हरि की क्रिपा अचंभा नाँही।।
जुग जुग वेद पुरानन गायो। जन को जस करतार बढ़ायो।।
समै पाई पूछै कोई हरि जन। महाराज यह संसय है मन।।
आसन छोड़ि कहूँ नहिं गए। कहौ मिलाप साहि से भए।।
महाराज यह संसै होई। महिमा तुम्हारी लखै न कोई।।
कहै मलूक सुनो हो साधू। हरि को कहूँ कछू नहिं बाधू।।
कीट आदि ब्रह्मादिक राजा। एक सबद तें जग उपराजा।।
सब की खबर आप हरि लेही। ते तऊ जगमग पूरन कर देही।।
सबै रहै ता आज्ञाकारी। इहाँ कछु नहिं सक्ति हमारी।।
जो जन की लज्या मन धरै। पल माँह सब काज सो करै।।
जन के हेत आप वपु धारै। पलक माँही सब काज सँवारै।।
तेनही आपनो विरद बढ़ायो। दया करी विस्वादि दृढ़ायो।।

यह कछु अधिक राम तें नाँही। राम नाम सुमिरहु मन माँही।।
भगत वछ्छल को पुनियौ भाई। पातसाह दियो लिखा पठाई।।
भगत मलूका यार हमारा। है एक रंग राम का प्यारा।।
ताके द्वार बजार जो होई। दुखी गरीब पड़ोसी कोई।।
तासों जजिया ले न कोई। सो काहू को देइ न सोई।।
लिखा देखि हाकिमन माना। साची बात सब ही मिली जाना।।
भक्ति किरतन नित प्रति होई। द्वारे भूखा रहे न कोई।।
दुखिया रोगी जो कोई आवै। औषद दै अरु वैद लगावै।।
दया द्रिस सो निकसो होई। कोई राग रहै न ता कोई।।

सब विधि सब प्रतिपाल करि सब को करहि समोध।
सगुण निर्गुण जो साधु जन होई सबनि का बोध।।

एहि विधि सबकी सेवा करहिं। चित उदास कछु लखेन परहिं।।
मन उदास भाखै बहु बारा। अब तजि कै चलिए ससारा।।
कबहुक आसन कबहुक बागा। कबहुक विलंबहि नदी तड़ागा।।
जहाँ बैठें एकान्त कहु जाई। खेजी तहाँ तब जात्री जाई।।
पान मिठाई तहाँ बिकाई। चढ़ै भेंट वैरागी खाई।।
कबहुक साधु सभा में कहैं। अब इहाँ रहना भला नप अहै।।
राजहि बहुति अनीत सोहाई। बन्दी वेद बहु दिसा कराई।।
परजा दया धर्म तें हीना। भई वहि के नाते छीना।।
एक दिन ऐसी मन में आई। सब लोगन सों कह सुनाई।।
अब हम तजन चहत हौं देहा। झूठ सुत बित झूठे ग्रेहा।।
पूजी अवधि कछुक दिन रहै। पराल विधि भरि सौ दिन चहे।।
यह वानी वैरागिन सुनी। जहँ जहँ गए तहँ तहँ गुनी।।
देश-देश के सिष जहाँ लौ। पूजा भेंट लै चले तहाँ लौ।।
सहजहि छीन सो भई शरीरा। कहै न कछू देह की पीरा।।
औषद जुगुति कछु नहि करै। अपनी इच्छा सों आचरै।।
चन्दन और कुमकुमा सतूरी। सो सरीर लेपै भरि पूरी।।

ऊँचे वस्त्र ऊँचे आसन बैठि करै उतिम सिघासन।
भोजन मिस्ट अनूप मँगावहि। देखि आपु पुनि संत जेवावहि।।
साधु कहै प्रभु तुमहू खाहू। कहै मलूक नहीं अहै चाहू।।
कहै सजन हम कैसे खाँही। जौ तुमहू कछु जैवों नाँही।।
वचन साधु को लीन्हों मानी। प्रीति भाऊ करि सको जानी।।
तब ते दालि-भात का पानी। घूँट दुई तीन अचवै मनमानी।।
कछु दिन बीतें सोऊ त्यागा। हरि सों अधिक बढ़ो अनुरागा।।
आगे कोई बैठे नाँही। मूँदई नैनन रहै सदा हीं।।
द्वारे अतित करे कीर्तन। सबद सुनत चलि जाई सुरति मन।।
द्वारे निकट रहन नहिं पावै। होई सोर सो नहीं सोहावै।।
कहू दूरी बैठहू एकान्ता। तहाँ विहार करै सब सान्ता।।
भ्राता को सुत राम स्नेही। किय चहै तेहि अग्या देही।।
जो कोई अकांछी जैसो आवै। समाधान करि ताहि पठावै।।
तीन मास एहि भाँति गवायो। पुनि वैसाख मास तहँ आयो।।
सारंगधर महंत वैरागी। भगत मलूका को अनुरागी।।
अभिलाषा सो आयो सोई। मिलि परसपर बैठे दोई।।
सारंगधर करुना कर पूछी। कही मलूक बात सो सूची।।
प्रभु की अग्या हम को आई। अब हम चल चहत हैं भाई।।
मन आवै तो तुमहूँ रहौ। एहि विधि दास मलूका कहौ।।
तब सारंगधर विनै सुनाई। काहू कों थापिए गोसाँई।।
कहो मलूका मोहि किन थापो। करनहार प्रभु आपें आपो।।
महाराज कहत केउ ऐसी। सोई करहू होई आई जैसी।।
विनति कै तिन तिलक कढायो। राम सनेहि हि पाट बैठायो।।

संवत सतरह सै उनतालिस वर्ष वैसाखे मास।
क्रिस्न पक्ष चतुर्दशी बुध दिन रमित मलूक दास।।

सब जाति कुटुम्ब करहि बहु सोग। सिष साधु प्रेम बस लोग।।
सेत पितांबर वस्त्र आनो। चन्दन अगरु कुमकुमा सानो।।

पान फूल फुलेल मँगायो। उत्तिम भाँति वेवान बनायो।।
साधु संत को जुरा समाजा। करैं किरतन बाजै बाजा।।
साहू महाजन इस्ट सब मिले। लै वेवान गंगा को चले।।
लै वेवान गंगा तट आए। नाव मँगाई वेवान चढ़ाए।।
कियो प्रवाह गंगा की धारा। सब संतन कियो जै-जैकारा।।
कछुक दूरी देखो सब काँही। बहुरि समानो गंगा माँही।।
करि असनान धाम सब आए। लोक रीति कुटुम्बन करवाए।।
चढ़ी करारी पाक करायो। राम स्नेही संत जैवायो।।
क्रिया कर्म दशगात्र कीन्हा। गाई सोवर्न विप्रन कह दीन्हा।।
जेहि विधि सेवा पाछें भई। तैसी परामरसन ही ठई।।
एहि विधि गए मास चलि आठ। बड़े महोछा को कीन्हो ठाढ।।
माघ मास को किया विचारा। सुनि-सुनि सिष करैं उपचारा।।
जुरो मक्र को मेला आई। सब साधन कों खबरि जनाई।।
बहुत अन्हाई अमावस आए। तेन्हहि महंतन्ह ठौर दीआए।।
चले नहाई करे के पंथनि। प्रीति भाउ राखे जो महंतनि।।
जो कोई आवै राखहि तेहि। मन भाव तोको भोजन देही।।
बसंत पंचमी को कछु चले। आई करे (कड़े) केमेला मिले।।
अचला सातैं को सब आए। करि सनमान सबै बैठाए।।
चिघरिया संजोगी आए जेते। जहाँ तहाँ ते आए केते।।
औरों जेते विस्न उपासी। का जोगी और का संन्यासी।।
तुरुक मिलापी जे मलूक के। ते आए बैठे मलूक के।।
सबहिन कों नीके आदरहीं। भाव सहित सो सेवा करहीं।।
पोस्त अफीम तमाखू भाँगा। जो चाहे सो पावे नांगा।।
हाकिम सिष सब तत्पर कहई। सोध लेहि कोई निभूषमन रहई।।
एक पाख भरि लीला ठानी। होई कुतुहल सब सुभ वाणी।।
भई एकादसी साधुन मानी। कोई वर्त कोई मन ग्यानी।।
तिल गुर सक्करकंद जुरि आयो। सो साधुन लीन्हो मन भायो।।
क्रिडा करहि रहस मन ठानी। चतुर्दशी तिथ आई तुलानी।।

ऊँचे वस्त्र ऊँचे आसन। बैठि करै उतिम सिघासन
भोजन मिस्ट अनूप मँगावहि। देखि आपु पुनि संत जेवावहि।।
साधु कहै प्रभु तुमहू खाहू। कहै मलूक नहीं अहै चाहू।।
कहै सजन हम कैसे खाँही। जौ तुमहू कछु जैवों नाँही।
वचन साधु को लीन्हों मानी। प्रीति भाऊ करि सको जानी।
तब ते दालि-भात का पानी। घूँट दुई तीन अचवै मनमानी।
कछु दिन बीतें सोऊ त्यागा। हरि सों अधिक बढ़ो अनुरागा।
आगे कोई बैठे नाँही। मूँदई नैनन रहै सदा हीं।
द्वारै अतित करे कीर्तन। सबद सुनत चलि जाई सुरति मन।
द्वारे निकट रहन नहिं पावै। होई सोर सो नहीं सोहावै।
कहू दूरी बैठहू एकान्ता। तहाँ विहार करै सब सान्ता।
भ्राता को सुत राम स्नेही। किय चहै तेहि अग्या देही।
जो कोई अकांछी जैसो आवै। समाधान करि ताहि पठावै।
तीन मास एहि भाँति गवायो। पुनि वैसाख मास तहँ आयो।
सारंगधर महंत वैरागी। भगत मलूका को अनुरागी।
अभिलाषा सो आयो सोई। मिलि परसपर बैठे दोई।
सारंगधर करुना कर पूछी। कही मलूक बात सो सूची।
प्रभु की अग्या हम को आई। अब हम चल चहत हैं भाई।
मन आवै तो तुमहूँ रहौ। एहि विधि दास मलूका कहौ।
तब सारंगधर विनै सुनाई। काहू कों थापिए गोसाँई।
कहो मलूका मोहि किन थापो। करनहार प्रभु आपें आपो।
महाराज कहत केउ ऐसी। सोई करहू होई आई जैसी।
विनति कै तिन तिलक कढ़ायो। राम सनेहि हि पाट बैठायो।

संवत सतरह सै उनतालिस वर्ष वैसाखे मास।
क्रिस्न पक्ष चतुर्दशी बुध दिन रमित मलूक दास।।

सब जाति कुटुम्ब करहि बहु सोग। सिष साधु प्रेम बस लोग।
सेत पितांबर वस्त्र आनो। चन्दन अगरु कुमकुमा सानो।

पान फूल फुलेल मँगायो। उत्तिम भाँति वेवान बनायो।।
साधु संत को जुरा समाजा। करैं किरतन बाजै बाजा।।
साहू महाजन इस्ट सब मिले। लै वेवान गंगा को चले।।
लै वेवान गंगा तट आए। नाव मँगाई वेवान चढ़ाए।।
कियो प्रवाह गंगा की धारा। सब संतन कियो जै-जैकारा।।
कछुक दूरी देखो सब काँही। बहुरि समानो गंगा माँही।।
करि असनान धाम सब आए। लोक रीति कुटुम्बन करवाए।।
चढ़ी करारी पाक करायो। राम स्नेही संत जैवायो।।
क्रिया कर्म दशगात्र कीन्हा। गाई सोवर्न विप्रन कह दीन्हा।।
जेहि विधि सेवा पाछें भई। तैसी परामरसन ही ठई।।
एहि विधि गए मास चलि आठ। बड़े महोछा को कीन्हो ठाढ।।
माघ मास को किया विचारा। सुनि-सुनि सिष करैं उपचारा।।
जुरो मक्र को मेला आई। सब साधन कों खबरि जनाई।।
बहुत अन्हाई अमावस आए। तेन्हहि महंतन्ह ठौर दीआए।।
चले नहाई करे के पंथनि। प्रीति भाउ राखे जो महंतनि।।
जो कोई आवै राखहि तेहि। मन भाव तोको भोजन देही।।
बसंत पंचमी को कछु चले। आई करे (कड़े) केमेला मिले।।
अचला सातैं को सब आए। करि सनमान सबै बैठाए।।
चिंघरिया संजोगी आए जेते। जहाँ तहाँ ते आए केते।।
औरों जेते विस्न उपासी। का जोगी और का संन्यासी।।
तुरुक मिलापी जे मलूक के। ते आए बैठे मलूक के।।
सबहिन कों नीके आदरहीं। भाव सहित सो सेवा करहीं।।
पोस्त अफीम तमाखू भाँगा। जो चाहे सो पावे नांगा।।
हाकिम सिष सब तत्पर कहई। सोध लेहि कोई निभूषमन रहई।।
एक पाख भरि लीला ठानी। होई कुतुहल सब सुभ वाणी।।
भई एकादसी साधुन मानी। कोई वर्त कोई मन ग्यानी।।
तिल गुर सक्करकंद जुरि आयो। सो साधुन लीन्हो मन भायो।।
क्रिड़ा करहि रहस मन ठानी। चतुर्दशी तिथ आई तुलानी।।

ता दिन घृत का पाक सब पाए। आठ जाम भरि बाटि सिराय।।
प्रातहि चन्द्र ग्रहण सब भाखें। ता दिनहू सब साधू समाखें।।
तक भोर वस्त्र पहिराए। जो जेहि लाएक सो तस पाए।।
साल पाँवरी पटुका लोई। धोती फेंटा चादरी अँगोछा कोई।।
गंजी कामरी ऊँची नीची। जथा जोग सबहि कों पहूँची।।
भयो सब धुनी जै-जै-कारा। सब साधुन मिली चलन विचारा।।
तब राम स्नेही कह कर जोरी। सुनहु साधु एक विनती मोरी।।
आजुहि सब मिलि जैहो जहाँ। धूँई पानी को कलेस होईहि इहा।।
एक दुई महन्त नित सब चलहू। जहाँ बसहु तहाँ आनन्द करहू।।
इहाँ वोझ नाँही प्रभु कोई। जो कोई रहै भोजन लै सोई।।
सबहिन कही साति रामस्नेही। दास मलूक घरे जनु देही।।
होई-होई विदा साधु सब जाहिं। जाई रहैं सोई भोजन पावहिं।।
एहि विधि दिया पाचमें जेते। बिदा भए जित कित को तेते।।
ईश्वर साधु एकई रूपा। ताको जस को कहै अनूपा।।
मलूक को भगिन सुत जोई। मलूक को सिष पुनि है सोसोई।।
तेन प्रीति सहित परिचयी भाषी। बसै प्रयाग जगत सब साखी।।
श्री मलूक को सिष है सोई। सुथरा नाम प्रकट भये होई।।

देखी कही सुनी सब बरनई प्रेम हुलास।
छाप परी साधुन में गावै सुथरा दास।।

जै राम मलूक

इति श्री मलूक परचई गाई सुथरादास सप्त रन शुभमस्तु संवत 1734 समै कातिक वदि मावस जैयंती वार मंगलवार को सिद्ध भई लिख अग्र मनिदास दयाल दास के दासानिदास।